

UNIVERSAL
LIBRARY

OU_186089

UNIVERSAL
LIBRARY

OSMANIA UNIVERSITY LIBRARY

Call No. H81
C45 S

Accession No. G.H. 1027

Author

Title पृथ्वीराज रासो १२५२

This book should be returned on or before the date
last marked below.

संक्षिप्त
पृथ्वीराज रासो

सम्पादक
हजारी प्रसाद द्विवेदी
नामवर सिंह

काशिका समिति, हिंदी विभाग,
हिन्दू विश्वविद्यालय, बनारस के लिये

प्रकाशक

साहित्य भवन लिमिटेड
इलाहाबाद

। विषय सूची

१. भूमिका ✓	...	एक
२. आदि पर्व	...	१
३. इंछिनि-विवाह प्रसंग	...	२३
४. इंछिनि व्याह कथा	...	३५
५. शशिब्रता विवाह प्रस्ताव	...	५६
६. कौमास-करनाटी प्रसंग	...	७६
७. कनवज्ज समय	...	८४
८. बड़ी लड़ाई समय	...	१२५
९. बानबेध समय	...	१४५
१०. परिशिष्ट १	...	१५१
११. परिशिष्ट २	...	

भूमिका

‘पृथ्वीराज रासो’ हिंदी साहित्य का अत्यन्त महत्त्वपूर्ण ग्रंथ है। इसके संबंध में विद्वानों ने अनेक प्रकार के मत प्रकट किए हैं। कुछ लोग इसे एकदम अप्रामाणिक रचना मानते हैं और कुछ दूसरे लोग पूर्ण रूप से तो नहीं पर आंशिक रूप से इसे प्रामाणिक ग्रंथ मानते हैं। इस विचार के लोगों का विश्वास है कि चंद नाम का कोई कवि सचमुच ही पृथ्वीराज के काल में उत्पन्न हुआ था और उसने सचमुच ही कोई काव्य लिखा था जो अब प्रच्छेपों से स्फीत और विकृत हो गया है। प्रामाणिकता और अप्रामाणिकता का विवाद प्रधान रूप से इस प्रश्न पर केंद्रित है कि सचमुच ही पृथ्वीराज का समकालीन और सखा कोई चंद नामक कवि था भी या नहीं। पृथ्वीराज रासो की घटनाओं को ऐतिहासिक दृष्टि से देखनेवालों ने प्रायः निश्चित रूप से ही कह दिया है कि यह बात संभव नहीं दिखती। समकालीन कवि कभी ऐसी ऊल-जुलूल बातें नहीं लिख सकता। जो लोग पृथ्वीराज रासो को प्रामाणिक रचना समझते हैं वे उन घटनाओं की ऐतिहासिकता सिद्ध करने का प्रयत्न करते हैं। इस प्रकार प्रत्येक आलोचक ग्रंथागत घटनाओं की ऐतिहासिकता की जाँच में ही अपनी सारी शक्ति लगा देता है। अभी तक ग्रंथ की साहित्यिक महिमा के समझने का प्रयत्न बहुत कम किया गया है।

फिर भी पृथ्वीराज रासो के साहित्यिक महत्त्व को अनुभव किया जाता है। प्रत्येक विश्वविद्यालय अपनी उच्चतर कक्षाओं में रासो का कुछ अंश— जो अत्यन्त नगण्य हुआ करता है—पाठ्यक्रम में रखा करता है। इन अंशों से रासो की महिमा का बहुत मामूली परिचय ही मिल पाता है। पृथ्वीराज रासो इतना विशाल ग्रंथ है कि उसका संक्षिप्त रूप प्रकाशित करना भी कठिन कार्य ही है। परन्तु यह प्रत्येक विचारशील अध्यापक अनुभव करता है कि विभिन्न विश्वविद्यालयों में जो अंश पढ़ाए जाते हैं वे रासो का ठीक-ठीक परिचय नहीं दे सकते। संक्षेप करने में बहुत कठिनाइयाँ भी हैं। किस अंश को लिया जाय, किस अंश को छोड़ा जाय।

रात मार्च बिहार राष्ट्रभाषा परिषद् ने मुझे हिंदी साहित्य के आदिकाल

पर कुछ व्याख्यान देने के लिये आमंत्रित किया। उस अवसर पर रासो के संबंध में अपने विचार प्रकट करने का अवसर मुझे मिला। बहुत दिनों से मेरे मन में रासो के प्रामाणिक अंशों के संबंध में एक अस्पष्ट धारणा रही है। मैं उन विद्वानों के मत को ही अपना मत मानता रहा हूँ जो स्वीकार करते हैं कि रासो में कुछ-न-कुछ चंद की प्रामाणिक रचनाएँ हैं अवश्य। पुरातन प्रबंध संग्रह में कुछ छप्पयों के प्राप्त हो जाने से यह मत और भी विश्वास योग्य हो गया है। जब मुनि जिनविजय जी शान्तिनिकेतन में थे तो उनकी कृपा से मुझे कई जैन प्रबंधों को हिंदी में भाषान्तरित करने का सुयोग प्राप्त हुआ था। उनमें से एक का भाषान्तर (प्रबंध चिन्तामणि) सिंघी जैन ग्रंथमाला में प्रकाशित भी हो चुका है। बाकी अभी प्रकाशित नहीं हुए हैं। उस समय मुझे पुरातन प्रबंध संग्रह को भी भाषान्तरित करने का अवसर मिला था। तभी से मेरे मन में रासो के मूल रूप के संबंध में जिज्ञासा उत्पन्न हुई थी। बिहार राष्ट्रभाषा परिषद् के व्याख्यानों में मैंने अपने विचारों को विद्वानों के सामने रख दिया। अभी भी उस पर पंडितों की प्रतिक्रिया नहीं मालूम हो सकी। उस व्याख्यान में मैंने रासो के मूल प्रामाणिक अंग माने जाने योग्य अंशों की ओर संकेत किया था। प्रस्तुत संचित रासो उन्हीं विचारों पर आधारित है। केवल उन्हीं अंशों को संचित किया गया है जिनकी प्राचीनता उन व्याख्यानों में प्रमाणित की गई है। यथासंभव इस बात का भी ध्यान रखा गया है कि विद्यार्थी को रासो की पूरी साहित्यिक महिमा का परिचय मिल जाय। मेरे विचार विस्तार से तो 'हिंदी साहित्य के आदिकाल' नामक पुस्तक में आ गए हैं, परन्तु संचेप में उनका उल्लेख यहाँ कर दिया जा रहा है।

काशी ना० प्र० सभा से प्रकाशित पृथ्वीराज रासो^१ में ढाई हजार पृष्ठ हैं

^१पृथ्वीराजरासो के प्रकाशित संस्करण—(१) एसियाटिक सोसायटी आफ बंगाल से १८८३-८६ ई० में आरंभिक अंश प्रकाशित; (२) मोहनलाल विष्णुलाल पंड्या सं०, ई० जे० लाजरस एण्ड को०, बनारस सन् १८८८-१९०४ ई०; (३) नागरी प्रचारिणी सभा, काशी से श्यामसुंदरदास आदि द्वारा सं० १९०५-१९१३; (४) पृथ्वीराजरासो के दो समय (रेवातट और पद्मावती समय) लखनऊ १९४२; (५) अमली पृथ्वीराजरासो, मोतीलाल बनारसीदास, लाहौर १९३८; (६) केवल रेवातट समय, 'हिंदी के कवि और काव्य' (प्रथम भाग) में १९३७ में प्रयाग से प्रकाशित।

जा ६६ सर्गों में विभाजित हैं। सबसे बड़ा समय कनकज युद्ध है जो संभवतः रासो का मूल कथानक है। यह विश्वास किया जाता है कि चन्द पृथ्वीराज का मित्र, कवि और सलाहकार था। रासो में वह तीनों रूपों में चित्रित है। इस ग्रंथ के अनुसार दोनों के जन्म और मरण की तिथि भी एक है। इस प्रकार सदा साथ रहनेवाले अभिन्न मित्र की रचना निश्चय ही बहुत प्रामाणिक होनी चाहिए। यही सोचकर सुप्रसिद्ध विद्वत्सभा रायल एशियाटिक सोसायटी ऑफ बंगाल ने इस ग्रंथ का प्रकाशन आरंभ किया था। कुछ थोड़ा-सा अंश प्रकाशित भी हो चुका था किंतु इसी समय डा० बूलर को पृथ्वीराज विजय की एक खंडित प्रति हाथ लगी। उस पुस्तक की परीक्षा करने के बाद डा० बूलर इस निष्कर्ष पर पहुँचे कि पृथ्वीराज विजय इतिहास की दृष्टि से अधिक प्रामाणिक ग्रन्थ है और पृथ्वीराजरासो अत्यंत अप्रामाणिक, क्योंकि पृथ्वीराजकालीन अभिलेखों से पृथ्वीराजविजय में वर्णित घटनाएँ तो मिल जाती हैं लेकिन पृथ्वीराजरासो में वर्णित घटनाएँ नहीं मिलती। उनका पत्र सोसायटी के प्रोसीडिंग्स (कार्य विवरण) में छपा गया और पृथ्वीराजरासो का प्रकाशन बंद कर दिया गया। उन दिनों के युरोपियन विद्वान् मध्यदेश की रचनाओं का महत्त्व दो दृष्टियों से आंकते थे— ऐतिहासिक तथ्यों को प्राप्त करने और भाषाशास्त्रीय समस्याओं को सुलझाने की दृष्टि से। रासो से यह उद्देश्य सिद्ध नहीं होता था। कितनी ही ऐसी अनमिल बातें इस पुस्तक में मिलीं जो इसके ऐतिहासिक रूप को निर्विवाद रूप से गलत साबित करती थीं। पृथ्वीराजविजय के अनुसार पृथ्वीराज सोमेश्वर और कपूरदेवी के पुत्र थे। कपूरदेवी चेदि-नरेश की कन्या थी। जब पुत्र पृथ्वीराज नाबालिग था तो माता ने कदम्बबास नामक मंत्री की सहायता से राज्य संचालन किया था। यह बात अभिलेखों से मिलती है। इधर पृ० रासो के अनुसार ये दिल्ली के राजा अनंगपाल की पुत्री के लड़के थे। मजेदार बात यह है कि पृ० विजय में चंदबरदाई नामक किसी कवि का नाम नहीं है। एक जगह चन्द्रराज कवि का उल्लेख अवश्य है परंतु उसे कुछ विद्वानों ने कश्मीरी कवि चन्द्रक से अभिन्न माना है। दूसरी भी बहुत-सी अनैतिहासिक बातें रासो में मिलती हैं।

सातवीं-आठवीं शताब्दी से इस देश में ऐतिहासिक व्यक्तियों के नाम पर काव्य लिखने की प्रथा खूब चली। इन्हीं दिनों ईरान के साहित्य में भी इस प्रथा का प्रवेश हुआ। इस काल में उत्तर-पश्चिमी सीमांत से बहुत-सी जातियों का प्रवेश इस देश में होता रहा। वे राज्य-स्थापन करने में भी समर्थ हुईं। पता नहीं कि उन जातियों की स्वदेशी प्रथा की क्या-क्या बातें इस देश में

चलीं। साहित्य में नये-नये काव्यरूपों का प्रवेश इस काल में हुआ अवश्य। संभवतः ऐतिहासिक पुरुषों के नाम पर काव्य लिखने या लिखाने की चलन भी उनके संसर्ग का फल हो। परंतु भारतीय कवियों ने ऐतिहासिक नाम भर लिया, शैली उनकी वही पुरानी रही जिसमें काव्य-निर्माण की ओर अधिक ध्यान था, विवरण-संग्रह की ओर कम; कल्पनाविलास का अधिक मान था, तथ्यनिरूपण का कम; संभावनाओं की ओर अधिक रुचि थी, घटनाओं की ओर कम; उल्लसित आनंद की ओर अधिक झुकाव था, विलसित तथ्यावली की ओर कम। इस प्रकार इतिहास को कल्पना के हाथों परास्त होना पड़ा। ऐतिहासिक तथ्य इन काव्यों में कल्पना को उकसा देने के साधन मान लिए गए हैं। राजा का विवाह, शत्रुविजय, जलक्रीड़ा, शैल-वन-विहार, दोला-विलास, नृत्य-गान-प्रीति—ये सब बातें ही प्रमुख हो उठी हैं। बाद में क्रमशः इतिहास का अंश कम होता गया और संभावनाओं का जोर बढ़ता गया। राजा के शत्रु होते हैं, उनसे युद्ध होता है। इतिहास की दृष्टि में एक युद्ध हुआ, और भी तो हो सकते थे। कवि संभावना को देखेगा। राजा के एकाधिक विवाह होते थे। यह तथ्य अनेकों विवाहों की संभावना उत्पन्न करता है, जल-क्रीड़ा, और वन-विहार की संभावना की ओर संकेत करता है और कवि को अपनी कल्पना के पल्लु खोल देने का अवसर देता है। उत्तरकाल के ऐतिहासिक काव्यों में इसकी भरमार है। ऐतिहासिक विद्वान् के लिये संगति मिलाना कठिन हो जाता है।

वस्तुतः इस देश में इतिहास को ठीक आधुनिक अर्थ में कभी नहीं लिया गया। बराबर ही ऐतिहासिक व्यक्ति को पौराणिक या काल्पनिक कथा-नायक जैसा बना देने की प्रवृत्ति रही है। कुछ में दैवी शक्ति का आरोप करके पौराणिक बना दिया गया है—जैसे राम, बुद्ध, कृष्ण आदि—और कुछ में काल्पनिक रीमांस का आरोप करके निजंघरी कथाओं का आश्रय बना दिया गया है—जैसे उदयन, विक्रमादित्य और हाल। जायसी के रतनसेन, रासो के पृथ्वीराज में तथ्य और कल्पना का—फैक्टस् और फिक्शन का—अद्भुत योग हुआ है। कर्मफल की अनिवार्यता में, दुर्भाग्य और सौभाग्य की अद्भुत-शक्ति में और मनुष्य के अपूर्व शक्तिभांडार होने में दृढ़ विश्वास ने इस देश के ऐतिहासिक तथ्यों को सदा काल्पनिक रंग में रंगा है। यही कारण है कि जब ऐतिहासिक व्यक्तियों का भी चरित्र लिखा जाने लगा तब भी इतिहास का कार्य नहीं हुआ। अंत तक ये रचनाएँ काव्य ही बन सकीं, इतिहास नहीं।

फिर भी निजंघरी कथाओं से वे इस अर्थ में भिन्न थीं कि उनमें बाह्य तथ्यात्मक जगत् से कुछ-न-कुछ योग अवश्य रहता था। कभी कभी मात्रा में कमी-वेशी तो हुआ करती थी पर योग रहता अवश्य था। निजंघरी कथाएँ अपने आप में ही परिपूर्ण होती थीं।

जिस प्रकार भारतीय कवि काल्पनिक कथानकों में ऐसी घटनाओं को नहीं आने देता जो दुःख-परक विरोधों को उकसावे उसी प्रकार वह ऐतिहासिक कथानकों में भी करता है। सिद्धांततः काव्य में उम्र वस्तु का आना भारतीय कवि उचित नहीं समझता जो तथ्य और औचित्य की भावनाओं में विरोध उत्पन्न करे, दुःखोद्रेचक विषम परिस्थितियों — ट्रेजिक कंट्रेडिक्शंस — की सृष्टि करे; परंतु वास्तव जीवन में ऐसी बातें होती ही रहती हैं। इसलिये इतिहासाश्रित काव्य में भी ऐसी बातें आएँगी ही। बहुत कम कवियों ने ऐसी घटनाओं की उपेक्षा कर जाने की बुद्धि से अपने को मुक्त रखा है। यही कारण है कि इन ऐतिहासिक काव्यों के नायक का धीरोदात्त बनाने की प्रवृत्ति ही प्रबल हो गई है; परंतु वास्तविक जीवन के कर्त्तव्य-द्वंद्व, आत्मविरोध और आत्म-प्रतिरोध जैसी बातें उसमें नहीं आ पातीं। ऐसी बातों के न आने से इतिहास का रस भी नहीं आ पाता और कथानायक कल्पित पात्र की कांटी में आ जाता है। फिर, जीवन में कभी हास्योद्रेचक अनमिल स्वर भी मिल जाते हैं। संस्कृत-काव्य का कर्त्ता कुछ अधिक गंभीर रहने में विश्वास करता है और ऐसे प्रसंगों को छोड़ जाता है। ऐसे प्रसंगों को तो वह भरसक नहीं आने देना चाहता जहाँ कथा-नायक के नैतिक पतन की सूचना मिलने की आशंका हो। यदि ऐसे प्रसंगों की वह अवतारणा भी करता है तो घटनाओं और परिस्थितियों का ऐसा जाल तानता है जिसमें नायक का कर्त्तव्य उचित रूप में प्रतिभासित हो। सब मिलाकर ऐतिहासिक काव्य काल्पनिक निजंघरी कथानकों पर आश्रित काव्य से बहुत भिन्न नहीं होते। उनसे आप इतिहास के शोध की सामग्री संग्रह कर सकते हैं, पर इतिहास को नहीं पा सकते — इतिहास, जो जीवनत मनुष्य के विकास की जीवनकथा होता है, जो कालप्रवाह से नित्य उद्घाटित होते रहने वाले नव-नव घटनाओं और परिस्थितियों के भीतर से मनुष्य की विजय-यात्रा का चित्र उपस्थित करता है, और जो काल के परदे पर प्रतिफलित होने वाले नये-नये दृश्यों को हमारे सामने सहज भाव से उद्घाटित करता रहता है। भारतीय कवि इतिहास प्रसिद्ध पात्र को भी निजंघरी कथानकों की ऊँचाई तक ले जाना चाहता है। इस कार्य के लिये वह कुछ कथानक-रूढ़ियों का प्रयोग

करता है जो कथानक को अभिलषित दिशा में मोड़ देने के लिये दीर्घकाल से प्रचलित हैं। इनके कथानक में सरसता आती है और घटना प्रवाह में एक प्रकार की लोच आ जाती है। अस्तु।

जहाँ तक रासो की ऐतिहासिकता का संबंध है डा० बूलर, मारिसन, गौ० ही० ओम्हा, मुंशी देवीप्रसाद जी आदि प्रामाणिक इतिहास-लेखकों ने उसे अविश्वसनीय सिद्ध कर दिया है। अब इसकी लिखित घटनाओं को ऐतिहासिक सिद्ध करने का प्रयत्न बन्द कर देना ही उचित है। किंतु फिर भी रासो का महत्त्व है। बहुत दिनों तक विद्वानों में यह विश्वास था कि यद्यपि रासो में प्रसिद्ध अंश बहुत हैं तथापि इसमें चन्द के कुछ-न-कुछ बचन अवश्य हैं जो काफी पुराने हैं। अब तक यही विश्वास किया जाता रहा है कि प्रचेपों के समुद्र में से मूल कविताओं के मोती चुन लेना असम्भव ही है। इधर हाल में मुनि जिन-विजय जी ने पुरातन प्रबंध संग्रह में जयचन्द प्रबंध नामक एक प्रबंध प्रकाशित किया जिसमें चन्द के नाम से ४ छप्पय दिए हैं। इसकी भाषा परिनिष्ठित साहित्यिक अपभ्रंश के निकट की भाषा है यद्यपि उसमें कुछ चिह्न ऐसे भी मिलते हैं जिनसे हम अनुमान कर सकते हैं कि संदेश रासक की भाषा के सदृश यह भाषा भी कुछ आगे बढ़ी हुई भाषा है। जिस प्रति से यह छप्पय उद्धृत किए गए हैं वह संभवतः पन्द्रहवीं शताब्दी की लिखी हुई है। इससे यह सिद्ध होता है कि पन्द्रहवीं शताब्दी में लोगों को चन्द के छप्पय का ज्ञान था और ये छप्पय परिनिष्ठित अपभ्रंश से थोड़ी आगे बढ़ी भाषा में लिखे गए थे। इन पद्यों के प्रकाशन के बाद से अब इस विषय में किसी को संदेह नहीं रह गया है कि चन्द नामक कोई कवि पृथ्वीराज के दरबार में अवश्य थे और उन्होंने ग्रंथ भी लिखा है। सौभाग्यवश वर्तमान रासो में भी ये छंद कुछ विकृत रूप में प्राप्त हो गए हैं। इस पर से यह अनुमान किया जा सकता है कि वर्तमान रासो में चन्द के मूल छंद अवश्य मिले हुए हैं।

पृ० रा० रासो का अध्ययन करने के बाद और नवीं-दसवीं शताब्दी में प्रचलित कथाओं के लक्षण और काव्यरूपों को ध्यान में रख कर देखने से ऐसा लगता है कि यद्यपि चन्द के मूल बचनों का खोज लेना अब भी कठिन है किंतु उसमें क्या-क्या वस्तुएँ थीं और कौन-कौन-सी कथाएँ थीं, इस बात का एता लगा लेना उतना कठिन नहीं है। उन दिनों की कथाएँ दो व्यक्तियों के संवाद के रूप में लिखी जाती थीं। चन्द ने भी रासो को शुक और शुकी के संवाद में लिखा था जैसे विद्यापति ने कीर्तिलता को भृङ्ग और भृङ्गी के

संवाद के रूप में लिखा था और कौतूहल कवि ने लीलावती कथा को कवि और कविपत्नी के संवाद के रूप में लिखा था। फिर चन्द बरदाई का यह काव्य रासक भी है जो गेय काव्य हुआ करता था जिसमें मृदु और उद्धत प्रयोग हुआ करते थे। संदेश रासक में जिस प्रकार कवि ने अपनी नम्रता प्रकट करते हुए कहा है कि बड़े-बड़े कवियों की रचनाएँ उपलब्ध हैं तो क्या छोटे कवि अपनी रचनाओं से आनंदित न हों। उसी प्रकार और उसी शैली में पृथ्वीराज रासो में भी यह बात कही गई है। इतना ही नहीं एक दो प्राकृत गाथाएँ तो रासो में भी प्रायः वही हैं जो संदेशरासक में हैं^१।

फिर, संदेशरासक में बीच-बीच में कवि सूचना देता है कि अमुक पात्र ने अमुक छंद में अपनी बात कही। उसी प्रकार पृथ्वीराज रासो में भी बीच-बीच में कह दिया गया है कि अमुक पात्र ने अमुक छंद में अपनी बात कही। इन सब बातों पर विचार करने से ऐसा जान पड़ता है कि चन्द ने भी अपभ्रंश के रासकों की शैली पर ही अपना रासो लिखा। संदेशरासक में लगभग एक तिहाई पद्य रासक छंदों में है। पृथ्वीराजरासो में रासक छंद बहुत कम व्यवहृत हुआ है। पर संदेशरासक से यह तो सिद्ध हो ही जाता है कि रासक ग्रंथों में दूसरे छंदों का—विशेषकर दोहा और गाथा का—प्रचुर प्रयोग होता था। वीर-रस की प्रधानता होने के कारण चन्द ने छप्पय छंदों का अधिक प्रयोग किया था इस दृष्टि से विचार करने पर रासो के निम्नलिखित प्रसंग प्रामाणिक जान पड़ते हैं—

१—आरंभिक अंश, २—इंछिनी विवाह, ३ शशिव्रता का गन्धर्व विवाह, ४—तामर पाहार का शहाबुद्दीन का पकड़ना, ५—संयोगिता का जन्म विवाह तथा इंछिनी और संयोगिता की प्रतिद्वन्द्विता और समझौता^२।

इन अंशों में भाषा में उस प्रकार का बेडौल और बेमेल ठँसठँस नहीं है और कवित्त का सहज प्रवाह है। इनमें चन्द बरदाई ऐसे सहज प्रफुल्ल कवि के रूप में दृष्टिगत होते हैं जो विषम परिस्थितियों से भी जीवन रस खींचते रहते हैं। वे केवल कल्पना विलासी कवि ही नहीं निपुण मंत्र, दाता के रूप में भी सामने आते हैं। चाहे रूप और शोभा का वर्णन हो, चाहे ऋतु-वर्णनकी

^१ विशेष विस्तार के लिये देखिये—हिंदी साहित्य का आदि काल, पटना, १९५२।

^२ विशेष विस्तार के लिये हिन्दी साहित्य का आदिकाल देखिए।

उत्फुल्लता का प्रसंग हो, या युद्ध की भेरी का प्रसंग हो, चन्द्र बरदाई सर्वत्र एक समान अविचलित और प्रसन्न दिखाई पड़ते हैं। रूप और सौंदर्य के प्रसंग में उनकी कविता रुकना ही नहीं जानती। निस्संदेह उन्होंने काव्यगत रूढ़ियों का बहुत व्यवहार किया है और परंपरा प्रचलित उपमानों से सौंदर्य की अभिव्यञ्जना उनके साहित्य का प्रधान कौशल है तथापि वह कवि के आनन्द निर्भर चित्त का पूर्णरूप से प्रकट करती है। कथानक रूढ़ियों की दृष्टि से तो चन्द्र का काव्य बहुत ही महत्त्वपूर्ण है और परवर्तीकाल में जिन लोगों ने उसमें प्रक्षेप किया है वे चन्द्र की इस प्रवृत्ति को बहुत अच्छी तरह पहचानते थे इसीलिये प्रक्षेप करनेवालों ने चुन-चुन करके कथानक रूढ़ियों और काव्य रूढ़ियों का सन्निवेश किया है।

साधारणतः भारतीय कथाओं में कथानक को अभीष्ट दिशा में मोड़ने के लिये निम्नलिखित कथानक रूढ़ियों का व्यवहार हुआ है :—

१—स्वप्न में प्रियमूर्ति दर्शन, २—कहानी कहनेवाला सुआ, ३—शिकार खेलते समय घोड़े का जंगल में मार्ग भूलना ४—मुनि का शाप ५—रूप परिवर्तन ६—लिंग परिवर्तन ७—परकाय प्रवेश, ८—आकाश वाणी। ९—अभिज्ञान या साहिदानी १०—परिचारिका का राजा से प्रेम और उसका राजकन्या रूप में अभिज्ञान। ११—नायिका का चित्र, १२—नायक का औदार्य १३—विरहवेदन १४—चौर्य प्रेम और फिर विवाह १५—नट-नटी द्वारा रूप श्रवण और प्रेम १६—संदेशवाहक हंस या कपोत १७—विजनवन में सुन्दरियों से साक्षात्कार, १८—उजाड़ शहर का मिल जाना और वहाँ नायक का राजा हो जाना। १९—शत्रु-सन्तापित सरदार की प्रिया को शरण देना और युद्ध मोल लेना, २०—अतिप्राकृत दृश्य से लक्ष्मी प्राप्ति का शकुन इत्यादि-इत्यादि।

लगभग इन सभी कथानक रूढ़ियों का प्रयोग पृथ्वीराज रासो में किया गया है। महत्त्वपूर्ण प्रत्येक विवाहों के समय नट का नर्तकी का स्वप्न दर्शन का, चित्र दर्शन का, हंस दौत्य या शुक दौत्य का उपयोग किया गया है। शशिब्रता या संयोगिता इन दोनों मुख्य रानियों को अप्सरा का अवतार बताया गया है। प्रत्येक विवाह में आगे या पीछे कुछ-न-कुछ युद्ध का प्रसंग अवश्य आता है और प्राचीन निजंघरी कथाओं के समान कन्याहरण प्रधान रूप से वर्णित हुआ है। शोभा चाहे प्रकृति की हो या मनुष्य की हो, परंपरा-प्रचलित रूढ़ उपमानों के सहारे ही निखरी है और अधीनस्थ सामन्तों की स्वामिभक्ति और पराक्रम

अत्यंत उज्ज्वल रूप में प्रकट हुआ है। छंदों का परिवर्तन बहुत अधिक हुआ है परन्तु भी अस्वाभाविकता नहीं आई है। १२वीं-१३वीं शती के अपभ्रंश साहित्य में छंदों का यह परिवर्तन बहुत अधिक प्रचलित हो गया था। जो छंद परिवर्तन के लिये केशव को दांपी समझते हैं वे बहुत ऊपर से काव्य रूपों की आलोचना करते हैं। वस्तुतः केशव की रामचन्द्रिका तक आते-आते यह छंदोबहुला प्रथा निर्जीव और विकृत हो गई थी। अत्यधिक प्रक्षेप होते रहने के बाद भी पृथ्वीराजरासो में यह प्रथा सजीव रूप में वर्तमान है। अनुकरण करनेवालों ने भी चन्द की शैली को ठीक रूप में पकड़ा है और वर्तमान रूप में भी रासो के छंद जब बदलते हैं तो श्रोता के चित्त में प्रसंगानुकूल नवीन कपन उत्पन्न करते हैं।

वर्तमान रासो में युद्धों का प्रसंग बहुत अधिक है, और शहाबुद्दीन तो इसमें हर मौके-बेमौके अनायास आ पड़ता है। अधिकतर भट्टभण्णत और गलत तिथियों का हिसाब ऐसे प्रसङ्ग में ही आता है। ऐसा कहने में कुछ भी संकोच मालूम नहीं पड़ता, कि ये युद्धों के अनावश्यक विस्तारित वर्णन, चौहान और कमधुज के सरदारों के नामों की सूची आदि बातें परवर्ती ठँसठँस हैं। मूल रासो शुक और शुकी के संवाद रूप में ही लिखा गया था, और संभवतः कीर्तिलता के समान प्रत्येक समय के आरंभ में शुक और शुकी प्रसंग उसमें भी था। इधर रासो के अनेक संक्षिप्त संस्करणों का पता लगा है, और पंडितों में यह जल्पना-कल्पना आरंभ हुई है कि इन्हीं छंदों के संस्करणों में से कोई रासो का मूल रूप है या नहीं। अभी तक इन संस्करणों का जो कुछ विवरण देखने में आया है, उससे तो ऐसा ही लगता है कि ये सब संस्करण रासो के संक्षेप रूप ही हैं।

इन्हीं विचारों के अनुसार वर्तमान संक्षिप्त रूप का संकलन किया गया है। मेरा यह दावा नहीं है कि यह रासो का मूल रूप है। यह निर्णय करना अब बड़ा कठिन है कि चंद की वास्तविक रचना कौन-सी है पर मेरा विश्वास अवश्य है कि चंद की मूल रचना कुछ इसी के आस-पास होगी। विद्यार्थी को इस संक्षिप्त रूप से रासो की सभी विशेषताओं को समझने का अवसर मिलेगा और वह उस ग्रन्थ की साहित्यिक महिमा के प्रति अधिक जिज्ञासु और आग्रह-वान् होगा। इसी विश्वास से यह श्रम किया गया है।

काशी विश्वविद्यालय, बनारस }
अक्षय तृतीया, सं० २००६ }

हजारी प्रसाद द्विवेदी

आदि पर्व

साटक ॥ ॐ ॥

आदी देव प्रनम्य नम्य गुरयं, वानीय वंदे पयं ।
सिष्टं धारन धारयं वसुमती, लच्छीस चरनाश्रयं ॥
तं गुं तिष्ठति ईस दुष्ट दहनं, सुरनाथ सिद्धिश्रयं ॥
थिर चर जंगम जीव चंद नमयं, सर्वेस वदीमयं ॥ १ ॥

॥ भुजंगप्रयात ॥

प्रथमं भुजंगी सुधारी ग्रहंनं । जिने नाम एकं अनेकं कहंनं ॥
दुती लभ्यं देवतं जीवतेसं । जिनै विश्व राख्यौ बली मंत्र सेसं ।
चवं वेद बंभं हरी कित्ति भाखी । जिनै धम्म साधम्म संसार साखी ॥
तृती भारती व्यास भारतथ भाख्यौ । जिनै उत्त पारथ्य सारथ्य साख्यौ ॥
चवं सुखदेवं परीखत्त पायं । जिनै उद्धर्यो श्रव्व कुर्वस रायं ॥
नरं रूप पंचम्म श्रीहर्ष सारं । नलैराय कंठं दिने पद्ध हारं ॥
छटं कालिदासं सुभापा सुवद्धं । जिनै वागवानी सुबानी सुवद्धं ॥
कियो कालिका मुखवासं सुसुद्धं । जिनै सेत बंध्योति भोज प्रबंधं ॥
सतं डंडमाली उलाली कवित्तं । जिनै बुद्धि तारंग गंगा सरित्तं ॥
जयदेव अठ्ठं कवी कव्विरायं । जिनै केवलं कित्ति गोविद गायं ॥
गुरं सव्व कव्वी लहू चंद कव्वी । जिनै दसियं देवि सा अंग हव्वी ॥
कवी कित्ति कित्ति उकती सुदिख्खी । तिनै की उचिष्टी कवी चंद भव्खी ॥ २ ॥

॥ दूहा ॥

उचिष्ट चंद छंदह बयन । सुनत सु जंपिय नारि ॥
तनु पवित्र पावन कविय । उकति अनूठ उधारि ॥ ३ ॥

॥ कवित्त ॥

कहैं कंति सम कंत । तंत पावन बद्ध कव्विय ॥
तंत मंत उच्चार । देवि दरसिय मक्ति हव्विय ॥
तंत बीर उग्रंत । रंग राजन सुख दाइय ॥
बाल केल प्रत्यंग । सुरनि उद्धरि कविताइय ॥

अवलंब उकति उच्चार करि । जिहित मोहि कोविद रहै ॥
सम ब्रह्मरूप या सब्द कहूँ । क्यों उचिष्ट कवियन कहै ॥ ४ ॥

॥ कवित्त ॥

सम वनिता बर बंदि । चंद जंपिय कोमल कल ॥
सबद ब्रह्म इह सत्ति । अपर पावन कहि निर्मल ॥
जिहित सबद नहिं रूप । रेख आकार ब्रह्म नहिं ॥
अकल अगाध अपार । पार पावन त्रयपुर महिं ॥
तिहिं सबद ब्रह्म रचना करौ । गुरु प्रसाद सरसैं प्रसन ॥
जद्यपि सु उकति चूकौ जुगति । तौ कमल बदनि कवितह हँसन ॥ ५ ॥

॥ कवित्त ॥

तुम बानी बरबंद । नाग देखंत विमल मति ॥
छंद भंग गन रहित । कंठ कौमार काव्य कृत ॥
बुधि तरंग सम गंग । उकति उच्चार अमिय कल ॥
सुरन सुनत विहसंत । मंत जनु वस्य करन बल ॥
अवतार भूप्रिथिराज पहु । राज सुख तिन सम लहहि ॥
बीराधि बीर सामंत सब । तिन सु गल्ह अच्छी कहहि ॥ ६ ॥

॥ कवित्त ॥

गज गवनी प्रति चंद । छंद कोमल उच्चारिय ॥
मनहरनी रस बेलि । सुरन सागर रस धारिय ॥
बंक नयन बय बाल । प्रान बल्लभ सुखदाइय ॥
अगुन निगुन गुरु ग्रहनि । गवरि पूजा फल पाइय ॥
भए आदि अंत कविता जिते । तिन अनंत गति मति कहिय ॥
अनेक ग्रथ तिन बरनवत । यौ उचिष्ट मति मै लहिय ॥ ७ ॥

॥ दूहा ॥

फूलि कित्ति चहुआन की । जुगनि जुग निवास ॥
अप मति सरसैं सबल । मति करौ कवि हास ॥ ८ ॥

॥ गाहा ॥

पय सक्करी सुभत्तौ । एकत्तौ कनय राय भोयंसी ॥
कर कंसी गुञ्जरीय । रब्बरियं नैव जीवंति ॥ ९ ॥

सत्त खनै आवासं । महिलानं मद सद नूपरया ॥
 सतफल बज्जुन पबसा । पव्वरियं नैव चालंति ॥१०॥
 रव्वरियं रस मंदं । क्यं पुज्जति साध आमियेन ॥
 उकति जुकत्तिय ग्रंथं । नत्थि कत्थ कवि कत्थिय तेन ॥११॥
 याते वसंत मासे । कोकिल भंकार अंब बन करयं ॥
 वर वव्वूर विरष्पं । कपोतयं नैव कलयंति ॥१२॥
 सहसं किरन सुभाउ । उगि आदित्य गमय अंधरं ॥
 अय्यं उमा न सारो । भोडलयं नैव भलकंति ॥१३॥
 कज्जल महि कस्तूरी । रानी रेहंत नयन श्रंगारं ॥
 कां मसि धसि कुमारी । किं नयने नैव अजंति ॥१४॥
 ईस सीस असमानं । सुरसुरी सलिल तिष्ठ नित्यानं ॥
 पुनि गलनी पूजाग । गडुंवा नैव ढालंति ॥१५॥

॥ दूहा ॥

कहां लगि लघुता बरनयो । कविन दास कवि चंद ॥
 उन कहि तें जो उव्वरी । सो वकहों करि छंद ॥१६॥
 सरस काव्य रचना रचौ । खल जन सुनि न हसंत ॥
 जैसे सिधुर देखि मग । स्वान सुभाव भुसंत ॥१७॥
 तौ पनि सुजन निमित्त गुन । रचिये तन मन फूल ॥
 जूका भय जिय जानिकैं । कयो डारियै दुकूल ॥१८॥

॥ साटक ॥

मुक्ताहार बिहार सार सुबुधा, अव्वा बुधा गोपिनी ॥
 सेतं चौर सरीर नीर गहिरा, गौरी गिरा जोगनी ॥
 ब्रीना पानि सुबानि जानि दधिजा, हंसा रसा आसिनी ॥
 लंबोजा चिहुरार भार जघना, विघ्ना घना नासिनी ॥१९॥
 छत्रंजा मद गंध राग रुचयं, अलिभूराछादिता ॥
 गुंजा हार अथार सार गुनजा, भंभा पया भासिता ॥
 अग्नेजा श्रुति कुंडलं कार करस्तुदीर उदारयं ॥
 सोयं पातु गनेस सेस सफलं, पृथाज काव्यं कृतं ॥२०॥

॥ गाहा ॥

आसा महीव कव्वी । नव नव कित्तीय संग्रहं ग्रंथं ॥
 सागर सरिस तरंगी । बोद्धथयं उक्तियं चलयं ॥२१॥

॥ दूहा ॥

काव्य समुद्र कवि चंद कृत । मुगति समप्पन ग्यान ॥
 राजनीति बोहिथ सुफल । पार उतारन यान ॥ २२ ॥
 छंद प्रबंध कवित्त जति । साटक गाह दुह्मथ ॥
 लहु गुर मंडित खंडियहि । पिंगल अमर भरथ ॥ २३ ॥

॥ कवित्त ॥

अति ढंक्यौ न उधार । सलिल जिमि सिषि सिवालह ॥
 वरन वरन सोभंत । हार चतुरंग विसालह ॥
 विमल अमल वानी विसाल । बानी वर व्रंनन ॥
 उक्तिन बयन विनोद । मोद श्रोतन मन हरनन ॥
 युत अयुत जुक्ति विचार विधि । वयन छंद छुट्यौ न कह ॥
 घटि बढिढ मति कोई पढइ । तौ चंद दोस दिज्जो न वह ॥ २४ ॥

॥ श्लोक ॥

उक्ति धर्म विशालस्य । राजनीति नवं रसं ॥
 षट् भाषा पुराणं च । कुरानं कथितं मया ॥ २५ ॥

॥ कवित्त ॥

चरन नीम अछिछर सुरंग । लहु गुरु विधि मंडिय ॥
 सुर विकास जारी सु मुष । उक्ति रस गौरव नि छंडिय ॥
 जुगति छोह विस्तरिय । सीढियन घाट सु बहिय ॥
 महि मंडन मेधान । याहि मंडन जस सहिय ॥
 घन तर्क उतर्क वितर्क जति । चित्र रंग करि अनुसरिय ॥
 विश्वकर्म कवि निर्मइय । रसियं सरस उच्चरिय ॥ २६ ॥

॥ अरिल्ल ॥

तर्क वितर्क उतर्क सु जत्तिय । राजसभा सुभ भासन भत्तिय ॥
 कवि आदर सादर बुध चाहौ । पढि करि गुन रासौ निर्वाहौ ॥ २७ ॥
 धर्म अधर्म न बुद्धि विचारौ । नयन नारि निय नेह निहारौ ॥
 कोक कला कल केलि प्रकासौ । अरथ करौ गुन रासौ भासौ ॥ २८ ॥
 पारासर जो पुत्त विहासह । सतवंती ग्रभं गुर भासह ॥
 प्रव्व अठार सवा लप लष्यै । तौ भारथ गुर तत्त बिसष्यै ॥ २९ ॥

॥ कवित्त ॥

रासौ बर बुद्धि सिद्धि । सुद्धि सो सव्व प्रमानिय ॥
 राजनीति पाइयै । ग्यान पाइयै सु जानिय ॥
 उकति जुगति पाइयै । अरथ घटि बढि उन मानिय ॥
 या समान गुन आप । देव नर नाग बखानिय ॥
 भविछत भूत व्रतह गुनित । गुन त्रिकाल सरसइय ॥
 जो षढय तत्त रासौ सुगुर । कुमति मति नहिं दरसइय ॥ ३० ॥

॥ दूहा ॥

कुमति मति दरसत तिहिं । विधि विना न श्रव्वान ॥
 तिहिं रासौ जु पवित्र गुन । सरसौ व्रन्न रसान ॥ ३१ ॥

॥ दूहा ॥

सत सहस नप सिष सरस । सकल आदि मुनि दिष्य ॥
 घट बढ मत कोऊ पढौ । मोहि दूसन न वसिष्य ॥ ३२ ॥

॥ गाहा ॥

अरथं ढंकिन सहसा । उघारै वनस्थि एकलया ॥
 मभूम्भं मभूम्भ प्रमानं । चतुर स्त्री हारयं जेमं ॥ ३३ ॥

॥ दूहा ॥

अनग पाल पुत्री उभय । इक दीनी विजपाल ॥
 इक दीनी सामेस कौं । बीज बवन कलि काल ॥ ३४ ॥
 एक नाम सुर सुंदरी । अनि बर कमला नाम ॥
 दरसन सुर नर दुल्लही । मनौं सु कलिका काम ॥ ३५ ॥

॥ कवित्त ॥

ज दिन व्याहि सामेस । त दिन अमरन मन उदित ॥
 त दिन बीर बेताल । काल कलहागम कुदित ॥
 त दिन अरवि उमहीय । पुत्र इहि भार उतारै ॥
 छत्र तेज छित छज्जि । देव दानव पुंतारे ॥
 ता दिन सु सार सज्या समह । भ्रम अंतर कायर कपे ॥
 मानिक राह अनगेस घर । पानि ग्रहन ज दिन थपे ॥ ३६ ॥

॥ कवित्त ॥

क्रितिक दिवस अंतरह । रहिय आधान रानि उर ॥
 दिन दिन कला बढ़त । मेघ ज्यों बंदत भद्र धुर ॥
 चंद्र कला मित पषप । जेम बाढ़त दिन दिन ॥
 सुगंधा जीवन चढ़त । मिलत भरतार पिनं पिन ॥
 उदित अधान सुभगातनह । जेम जलधि पुनिम बढ़हि ॥
 हुलसंत हीय जे प्रीय त्रिय । जिम सु जोति जनिता चढ़हि ॥ ३७ ॥

॥ दूहा ॥

सोमेसर तांअर धरनि । अनगपाल पुत्रीय ॥
 तिन सुपिथ्यगर्भ धरिय । दानव कुल छत्रीय ॥ ३८ ॥

॥ कवित्त ॥

प्रथम पुत्र सोमेस । गंधपुर दुहा गदिद्वय ॥
 भई सुद्धि गंधवन । पुहप मंगल दुज पदिद्वय ॥
 अद्ध रैन अनु जानि । लियौ बालुक सिर सिद्धिय ॥
 गयन बयन धन सह । युद्ध जीवन जय दिद्धिय ॥
 सित सुभट सूर छह सथ्य चलि । चंद भट्ट कीरति करन ॥
 संजोगि जोति तप रापि सत । वरप तीस दसह वरन ॥ ३९ ॥

। कवित्त ॥

बल तापस तप तपिय । श्राप बीसल सिर धारिय ॥
 वरप असी तीन सै । गुहा दिल्ली ढिग तारिय ॥
 सित अंजर रजनीय । पुरनि गंधव पग धारिय ॥
 अवतार लियौ प्रिथिराज पहु । ता दिन दान अनंत दिय ॥
 कनवज्ज देस गज्जन पटन । किलकिलंत कालंकनिय ॥ ४० ॥

॥ कवित्त ॥

ज दिन जनम प्रिथिराज । परिग बत्तह कनवज्जह ॥
 ज दिन जनम प्रिथिराज । त दिन गज्जन पुर भज्जह ॥
 ज दिन जनम प्रिथिराज । त दिन षट्ठन वै सद्धिय ॥
 ज दिन जनम प्रिथिराज । त दिन मन कालन षद्धिय ॥
 ज दिन जनम प्रिथिराज भौ । त दिन भार धर उत्तरिय ॥
 बतरीय अंस अंसन ब्रह्म । रही जुगे जुग बत्तरिय ॥ ४१ ॥

॥ कवित्त ॥

पुहवै अनग नरेस । व्यास जग जोत बुलाइय ॥
 लगन लिद्धि अनुजा सुत । नाम चिहु चक्क चलाइय ॥
 पुष्प पानि धरि धूप । पिथ्य पाहन दो अंसह ॥
 कलि अवतार कुलाह । अंसपति पारन कंसह ॥
 बहु जुद्ध रुद्ध कलि जुग वर । भित्त सित्त दैतन भिरन ॥
 कवि चंद दिली थह कारने । इह अपुब्व अवतार लिन ॥ ४२ ॥
 पुत्री पुत्र उछाह । दान मानह धन दिद्धिय ॥
 धाम धाम गावत धमारि । मनहु अहि मनि लिद्धिय ॥
 कनवज जैचंद मात । भयौ संभरि बहनी सुत ॥
 तिन पवंत दुज पठिय । थार जर चीर थपिय थुत ॥
 पहिराइ परीषह दान दुज । किय समाप सच्चन विवरि ॥
 दस दिवस रषि अप्पन अवर । अति उछाह आनंद करि ॥ ४३ ॥

॥ दूहा ॥

मुनि सोमेस बधाइ दिय । है गै चीर गुराव ॥
 अति डछाह अनंद भरि । त्रप मुप चढिद्वय आव ॥ ४४ ॥

॥ दूहा ॥

तब बुलाय सोमेस वर । लौहानी अरु चंद ॥
 लै आवहुँ अजमेर धर । पहौतै घरह सु इंद ॥ ४५ ॥

॥ दूहा ॥

करि आनौ उछाह किय । चलिय राज अजमेर ॥
 सहस बाजि है सुभर वर । सत्त सपी मनि मेर ॥ ४६ ॥

॥ कवित्त ॥

वरष बधै बिय बाल । पिथ्य बद्धै इक मासह ॥
 घरी दीह पल पष । मास लषय ब्रष तासह ॥
 मनिगन कंठला कंठ । मद्धि केहरि नप सोहत ॥
 घूघरवारे चिहुर । रुचिर बानी मन मोहत ॥ ४७ ॥
 केसर सु मंडि सुभ भाल छवि । दसन जोति हीरा हरत ॥
 नह तलप इक्क थह षिन रहत । हुलसि उठि उठि गिरत ॥ ४८ ॥

॥ दूहा ॥

रज रंजित अंजित नयन । घूँठन डोलत भूमि ॥
लेत बलैया मात लधि । भरि कपोल मुष चूमि ॥ ४६ ॥

॥ पद्धरी ॥

अंगुरिन लगि रगि चलत लाल । सर मद्धि उठत गज हंस बाल ॥
मिलि बाल जाल कवि रही केलि । बढि रही दूंद जनु बीज बेलि ॥ ५० ॥
जनु रमत कमल ऋत कमल अगग । तप तेज बढिद मुष धित्र नग्न ॥
सब देव तेज देपंत अंग । उछार अंग अद्भुत प्रसंग ॥ ५१ ॥
सँग बाल बैठि भोजन करंत । परिवार वस्तु लै हठ धरंत ॥
आदर अदब्ब सथीन देत । बगसीस करत पिय परम हेत ॥ ५२ ॥
है हथि चढत बढत आनंद । मन मौज चौज कवि पढत छंद ॥
जिन हृदय कमल बिद्याह हेत । छल छेद भेद तिन बुद्धि लेत ॥ ५३ ॥
पाइक संग कायक केलि । धरि धूप हथ बांहंत भेलि ॥
गहि बग हथ फेरत तुरंत । नट ब्रत्य निपुन धावत कुरंग ॥ ५४ ॥
जल केलि करत मिलि सजन संग । अल्लोल कलभ जनु सरतिरंग ॥
पकवांन पांन सूगंध पूर । मादक सुमोद मुष सुपन नूर ॥ ५५ ॥
पेलत अषेट संग श्वानडोर । बग्गु बधंत पर गोस कोर ॥
मुष धरिय पहर दिन पष्प मास । सोमेस सूर चित बढत आस ॥ ५६ ॥
जिम राम कृष्ण सुख नंद गोह । संभरिय राय तिम दसा देह ॥ ५७ ॥

॥ कवित्त ॥

कै दसरथ ग्रह राम । कै धाम वसुदेव कृष्ण वर ॥
कै कलि कस्यप कूष । जानि उपज्यौ किरनाकर ॥
कृष्ण ग्रह कै काम । कै काम अंगज जनु अनुरध ॥
कै नल कस्यप अवतार । किधौ कौमार इश्व रुध ॥
लपिन बतिस बहुतरि कला । बाल वेस पूरन सगुन ॥
क्रीडत गिलोल जब लान कर । तब मार जानि चौपक सुमन ॥ ५८ ॥

॥ दूहा ॥

छुटत गिलोला हथ तैं । पारत चोट पयल्ल ॥
कमल नयन जनु कामिनी । करत कटाछ छयल्ल ॥ ५९ ॥

॥ दूहा ॥

कोइक दिन गुर राम पै । पढ़ी सु विद्या अप्प ॥
चवदसु विद्या चतुर वर । लई सीष पट लिप्प ॥६०॥

॥ परीद्ध ॥

लिपि सिष्य कुंअरप्रिथिराजराज । गुरु द्रोण पास सुत धम्म ताज ॥
ऊँ० नमो सिद्धि प्रथमं पढाय । सब भाव भेद अष्वर बताय ॥६१॥
दस पंच दिन्न अध्येन कीन । दस च्यारि सार सब सषि लोन ॥
सीषी सुकता दस अठ्ठ च्यारि । तिन नाम कहत कवि अग सारि ॥६२॥
गुरु गीत बाद बाजित्र नृत्य । सोचक सु वाच्य सविचार वृत्य ॥
मनि मंत्र जंत्र वास्तुक विनोद । नैपथ विलास सुनि तत्त मोद ॥
साकुन्न कला क्रीडन विसार । चित्रन सु जोग कवि चवत चारु ॥
कुसुमेष कला जुत इन्द्र जाल । सुचि क्रम विहार आहार लाल ॥६४॥
सौभग प्रयोग सूगंध वस्त । पुनरोक्त छंद वेदोक्त हस्त ॥
बानिज्ज विनय भाषित्त देस । आवद्ध जुद्ध निर्जुद्ध सेस ॥६५॥
बरनंत समय हस्ती तुरंग । नारी पुरुष्य पंषी विचंग ॥
भू भू कटाछ सुल्लेष सत्य । वृष छत्र प्रष्ण उत्तर विजत्य ॥६६॥
सुभ साख कहै गनिकह पढन्न । लिपतव्य चित्र कविता वचन्न ॥
व्याकन्न कथा नाटक्क छंद । अविधानं दरश अलंकार बंध ॥६७॥
घातक सु कर्म सुभ अर्थ जानि । सुर सरी कला बहुतरि बपान ॥६८॥

॥ दूहा ॥

पाष विराजत सीस पर । जरकस जोति निहाय ॥
मनों मेर के सिपर पर । रह्यौ अहप्पति आय ॥६९॥
ता पर तुररा सुभत अति । कहत सोम कवि नाथ ॥
मनु सूरज के सीस पर । धिषन धर्यौ धनु हाथ ॥७०॥
श्रवन विराजत स्वाति सुत । करत न बनै बषान ॥
मनु कमल पत्र अग्रज रहै । ओस उडगगन आन ॥७१॥
कंठ माल मोतीन की । सोभत सोभ विसाल ॥
मेरु सिपर पारस फिरत । जानि नछित्रन माल ॥७२॥
मिस भीने सु मयंक मुष । निपट विराजत नूर ॥
मनौ बार उर काम के । उगे आनि अंकूर ॥७३॥

॥ गाथा ॥

समयं इक निसि चंदं । वाम वत्त वहि रस पाई ॥
दिल्ली ईस गुनेयं । किती कहो आदि अंताई ॥७४॥

॥ दूहा ॥

कह्यौ भांमि सौं कंत इम । जो पृछै तत मोहि
कान धरौ रसना सरस । व्रन्नि दिपाऊं तोहि ॥७५॥

॥ दूहा ॥

सुकी कहै सुक संभरौ, कही कथा प्रति प्रान ।
पृथु भीरा भीमंग पहु, किम हुआ बैर विनान ॥ ७६ ॥

॥ कवित्त ॥

कुंअरप्पन प्रथिराज । तपै तेजह सु महावर ॥
सुकल बीजु दिन हुतें । कला दिन चढत कलाकार ॥
मकर आदि संक्रमन । किरन बाढें किरनाकार ॥
यों सोमेस कुंआर । जोति छिन छिन अति आगर ॥
हयहथिथ देत संकैन मन । पल षंडन गढ गिरन बर ॥
चिहु ओर जोर दसहूं दिसा । कीरति विस्तरि महिय पर ॥ ७७ ॥

॥ कवित्त ॥

भोरा भीम भुअंग । तपै गुज्जर धर आगर ॥
है गै दल पायक्क । पग्गबल तेजह सागर ॥
काका सारंगदेव । देव जिम ताम बड़ाइय ॥
तासु पुत्र परताप । सिंघ सम सत्त सु भाइय ॥
परतापसीह अरसीह बर । गोकुलदास गांविंद रज ॥
हरसिंघ स्याम भगवान भर । कुल अरेह मुष नीर सज ॥ ७८ ॥

॥ दूहा ॥

जोरावर जुरि जङ्गमति; भरे बध्य नभ गाज ॥
दुकम स्वामि छुटत सु इम, मनौ तितर पर बाज ॥ ७९ ॥
तिन पर तुट्टै बीज जौं, जिन पर राज अरुट्ट ॥
राजकाज संमुह भरन, दर्ई न कबहू पुट्ट ॥ ८० ॥

॥ दूहा ॥

सारंग दे सुरलोक गत, भौ प्रतापसी पाट ॥
सान भ्रात सेवा करै, तपै तेज थिर थाट ॥ ८१ ॥

॥ दूहा ॥

भोरा भीम भुआल के, कोई एक मैवास ॥
तिन उज्जारत देस कौं, परि पुकार नृप पास ॥ ८२ ॥

॥ गाथा ॥

प्रात समै पूकारं, आई नरिंद भीम दरबारं ॥
करि नीसान सुधावं, चढि राजं साजि आतुरयं ॥ ८३ ॥

॥ दूहा ॥

चालुककह गुज्जर धरा, ईस नेति किय भीम ॥
मो उम्मेँ तिहु पुर सुवर, को चंपै अरि सीम ॥ ८४ ॥

॥ छंद पद्वरी ॥

चढ़ि चलन राज आवाज कीन । नीसान नद बज्जे बजीन ॥
चिहु ओर भरनि छुट्टे तुरंग । सजि सिलह भाँति नाना अभंग ॥ ८५ ॥
धम धमकि धरनि धाने सुभंग । गज्जिय अकास कै गहर गंग ॥
भय हूह हाक आतंक जार । सह सुरन फेरि भेरीन घोर ॥ ८६ ॥
उडि रेन सेन मुंदिग अकास । परि रोर सोर जहँ तहँ मवास ॥
धरि रोस मुच्छ मुररंत भीम । रस बीर वक्र संक्रोध हीम ॥ ८७ ॥
चंपी सु सीम अरियन सुजाम । डेरा सुदीन नृप सरित ताम ॥
जुररा सिकार तीतर बटेर । पेजंत सरित तट भइ अबेर ॥ ८८ ॥
इहि समय ताम परतापसीह । लहु बंधु साथ अरसी अबीह ॥
ए हुते सकल बाहुर ते बेर । नय मभभ आइ पेजत अबेर ॥ ८९ ॥
गजराज नाम साहन सिगार । सरितान मभभ वह पियै वार ॥
सुनि सोर दान छुट्टे छँछार । जनु भूत भंति भय भीत भार ॥ ९० ॥
जमुना कि जगि काली करार । सिर धूनि महाव्रत दियौ डार ॥
गज एक वारि पीवंत दूरि । तिनपर सुतुट्टि जनुं सिंघ चूरि ॥ ९१ ॥
धरि पंष पब्व जनु धपि धाय । भुज पर्यौ नम्भ बहर सुमाय ॥
दिपि दुरद उनहि आवंत आन । धुनि करि सुडारि उन पीलवान ॥ ९२ ॥

धायौ ति समुह साहन सिंगार । जनु बंध जंम उप्पर अपार ॥
 कलपंत पाइ जनु पवन आई । हल हले पव्व जित तित बिठाइ ॥६३॥
 जम रूप दूअ जनु जंम द्वार । द्वय भ्रात बीच घेरे असार ॥
 इक ओर वारि द्रह गहर गूल । इक जोर जोर वर उंच कूल ॥६४॥
 परताप सनमुष पर्यौ जाइ । डारंत अश्व असि कियौ घाइ ॥
 बहि सीस परन दो हथ करार । परवूज जांनि बिफर्यौ बिफार ॥६५॥
 जगनाथ हंडि जनु बंदि दोइ । इह भंति कुंभ कुंभी न होइ ॥
 गज पर्यौ धरनि साहन सिंगार । किओ अकाम परताप पार ॥६६॥
 अरसीह पुट्ट जग धर्यौ देप । सनमुष क्रम्यौ सम सीह भेष ॥
 गज गही दौरि सिर पगध सुंड । दिय गुरज चीर द्वय हथि सुंड ॥६७॥
 फर्यौति सीस भइ पंच फारि । गजढर्यौ जानि गिरवर विसार ॥
 सुनि वत्त राज भोरा सु भीम । पायौ अनंत दुप आप हीम ॥६८॥
 कह बाव कियौ नृप अप्प साम । तुम सो न हमहि चाकरह काम ॥६९॥

॥ दूहा ॥

भा उभय अहंकार करि, हन्यौ सुवर गजराज ॥
 दोस हमहि लग्यौ नहीं, आप हि कीन अकाज ॥१००॥

॥ दूहा ॥

सात भ्रात निज बात सुनि, भए अप्प चलचित्त ॥
 पृथ्वीराज सुनि कुंअर ने, आप बुलाये हित्त ॥१०१॥
 दिये हथ लिषि गाम पट, रहे वास थिर आनि ॥
 चालुक चातुर वीर वर, जिन उंपत मुप पानि ॥१०२॥

॥ सोरठी दूहा ॥

सभ इक सोम कुमार, सम सामंतन सूर सम ॥
 सोभ सीस भुअ भार, सो बैठे सुभ सभा रचि ॥१०३॥

॥ छंद मोतीदाम ॥

रची सुभ सोम सभा पृथ्वीराज । विराजित मेरु जिसे भर साज ॥
 भुजा सम कन्ह रजे चहुवान । तिनैं मुख राजत है मुह पान ॥१०४॥
 जिनैं चष चाहि कंपै भर मान । कंपे जनु मोरन श्रप विवान ॥
 रहै चष वारि सुरातन एम । जवा अन प्रात कियो सक जेम ॥१०५॥

तहां वर चावंड राइ रजंत । जुधं मधि चावंड रूप सजंत ॥
 नृसिंघ विराजत सिंघ जिसौह । विभीषन भा कयमास जिसौह ॥१०६॥
 सबैं भर ओर उतथ्य सुभंत । तिनं मधि पीथ कुंआर रजंत ॥
 मनौं सुकलं पष बीज कौ चंद । तिया रस राजत तारन वृंद ॥१०७॥
 प्रतापसि सातउ भ्रात सरीस । प्रथी पति आइ नमाइय सीस ॥
 नि सोइत मानुस तं सत मेर । किधौं सत सिंधु सुहंत उजेर ॥१०८॥
 सनंमुप कन्ह प्रतापसि आइ । ठई तिन वैठक साल सुभाइ ॥
 कदै भर भारथ बत्त स वांन । धर्यौ परतापसि मुच्छन पांन ॥१०९॥
 लयी चहुआंन सु कन्ह अपंन । कढी असि तव्य असंप भपंन ॥
 दई असि दौरि जनेउ उतारि । इही धर अद्ध उपंन विचारि ॥११०॥
 मनौं सब नागर सावु कटंत । इही जनु गंठि बिचैं बिच तंत ॥
 पर्यौ परताप प्रथी पर आप । भई भर मध्य सुजोर अमाप ॥१११॥

॥ दूहा ॥

भई हूह मभक्त महल, पर्यौ भुंमि परताप ॥
 हाक वीर बज्जे विषम, अरसी कुण्णौ आप ॥११२॥

॥ कवित्त ॥

भई हूह परताप । पर्यौ दिग्यौ अरसी वर ॥
 उज्यौ कढिद तरवारि । दई भुज कन्ह वाम कर ॥
 इक्क सीह बर ओर । गैर पषपर गहि डारी ॥
 एक अगनिता मद्धि । आनि कंपी घृत धारी ॥
 चहुआन कन्ह अगै सुवर । ता पच्छै लोहनदग्यौ ॥
 जाजुलितसत्तवरवीरमति । बीर बीर रस सौं छग्यौ ॥११३॥

॥ दूहा ॥

उट्टि कुंवर पृथिराज लगि, गयौ महल निज मद्धि ॥
 दै किंवाट मिलि थाट जुध, मच्यौ कलह सभ मद्धि ॥११४॥

॥ गाहा ॥

कढ्ढी असि अरसिंघं । नरसिंघस्य भारयं सीसं ॥
 दई गुरज गुर अड्डं । बड गुज्जरं रंभ कंदाई ॥११५॥

॥ चालि ॥

दिषि चावंडं । षिजि चावंडं ॥
 लोह चावंडं ॥ मन चावंडं ॥ चावंडं ॥११६॥

॥ कवित्त ॥

बढिय जंग उत्तंग । जंग जनु दाह जुलगिय ॥
 परिय रौर गाव रन । जुगिय जुध कन्ह अभिगिय ॥
 मारि डारि अरिसीह । हक्यौ गोयंद मेह गति ॥
 कढिह हथ जम दढढ । दर्ह चहुआन कूप घन ॥
 करि रोस कन्ह करचंपिसिर । दो हथन भेजी उडिय ॥
 निकसीय प्रान गोविंद उर । जाति भेदि जातिह मिलिय ॥११७॥

॥ दूहा ॥

कोलाहल दरबार भौ । सुनि चालुक भ्रत सथ ॥
 धसिय पौरि गज मत्त सम । पुच्छत-पुच्छत कथ ॥११८॥
 छिछ रुधिर उठत गिरिय । परिय सत्र परिधारि ॥
 दिपि चालुक भ्रत तेह टग । कुलह बाजि जनु डारि ॥११९॥

॥ कवित्त ॥

पंकर सिंघ कि छुटि । छुटि इन्द्रह कि गरुअ गज ॥
 के महिप छुटि मय मत्त । भरिय दीयौ कि दुष्ट कजि ॥
 भौ कि हास रस रोस । मद्धि रावत्त विरञ्चिय ॥
 कोलाहल बल कूक । मज्झ रावर हल मञ्चिय ॥
 चालुकषवास ताकथ कथि । कोलाहल इन जानि घर ॥
 ङडिय सयल बोहिय नृपति । हनिग कन्ह सारंगहर ॥१२०॥

॥ दूहा ॥

भर प्रताप दरबार के । द्वार परे मत मत्त ॥
 सुनत बत्त इह कहि परे । मनु निस तुटि नछत्त ॥१२१॥

॥ करषा ॥

सार सिर मार विकरार रक्तन भरत ॥
 परत धरनीय ढरैं जरकि जूपी ॥
 चक्का चहुवांन चालुक भृत उपर चर ॥
 कोपिय कन्ह मनौ काल रूपी ॥१२२॥
 रुंड भकरुंड किय तुंड मुंडन ररत ॥
 बाहि सिर सार मनौ मेह बुढै ॥

कूह करि जूह संमूह को कोक हर ॥
 रोस रिम राह जुम जीव छुट्टै ॥१३३॥
 पांनि करि पांनि अरि पांनि करनीय हक ॥
 सीस अरी पारि सब षेत सीच्यौ ॥
 भ्रात सोमेस नृघ्नात भंजन भरम ॥
 षेत पयकार पय काल षीज्यौ ॥१२४॥

॥ श्लोक ॥

हनिनं निनायकं सेना, कथितं न च पूर्वयम् ॥
 अयुद्धं चक्रतं एषां, विना स्वामि रणे युधम् ॥१२५॥

॥ दूहा ।

नीठ विसासत अप्प भर, गह्यो कन्ह चहुआन ॥
 गए ग्रैह लै सकल मिलि, पृथीराज अकुलान ॥१२६॥
 पारि भित्त चालुकक भर, मध अजमेर प्रमान ॥
 सात भ्रात भीमह हने, रन जीत्यौ भर कांन ॥१२७॥
 वत्त सुनी तब कन्ह नें, षिज्यौ कुंअर प्रथिराज ॥
 बैठि रहे तब निज सुघर, ऐदरबार समाज ॥१२८॥
 तीन दिवस अजमेर में, परी हट्ट हटनार ॥
 हूह कोह बज्यौ विपम, लग्यौ सु भूत भुआर ॥१२९॥
 मधि बजार चलि रुधिर नदि, रुरत तुंड घन मुंड ॥
 बरकि कन्ह चहुआन करि, तिल तिल सम तन तुंड ॥१३०॥

॥ कवित्त ॥

सात दिवस जब गए । कन्ह दरबार न आए ॥
 तब पृथिराज कुंआर । अप्प मनए ग्रह जाए ॥
 तुम ऐसी क्यों करौ । अप्प सिर चढिय सुकाई ॥
 कहि हैं सब चहुआन । हने चालुक सुराई ॥
 आएति विषे अप्पन सुघर । सो रावर ऐसी करिय ॥
 इह दोस अप्प लग्यौ खरौ । बत्त वितरिय जग बुरिय ॥१३१॥

॥ दूहा ॥

कही कन्ह चहुआन तब । मो बैठें कोइ आनि ॥
 सभा मद्धि संभरि अवर । मुन्छ धरै क्यों पानि ॥१३२॥

करी अरज प्रथिराज बर । जो मानौ इक कन्ह ॥
 सभा बुराई जौ मिटै । चष बांधि पट्ट रतन ॥१३३॥
 तब प्रथिराज विचार करि । चष आर्यौ हो पट्ट ॥
 बहुरि कोई भर भोरही । धरत परै इह बट्ट ॥१३४॥
 मनी बत्त सुसत्य मन । लै जराव को पट्ट ॥
 राजन कन्ह चष बंधही । मनौ सिरी गज घट्ट ॥१३५॥

॥ कवित्त ॥

पाव लप्प परिमान । मोल किंमति ठहराइय ॥
 तौल टंक इकईस । नयन आकार सवारिय ॥
 जरिय जवाहर मद्धि । अरक उद्योत प्रकासिय ॥
 दिष्टि मंडि देपत । दुअन उर अंदर त्रासिय ॥
 कंचन किलाव लगाय कल । पट्टी बंधिय चंद भट ॥
 तिहि बेर कन्ह अहुअन चष । रूप प्रगटि अति पित्रि वट ॥१३६॥

॥ दूहा ॥

पाटी बंधिय कन्ह चष । इह आपम करि अप्पि ॥
 तन सरवर जल बीर रस । आटा बंधि सुरप्पि ॥१३७॥

॥ दूहा ॥

सां पट्टी निस दिन रहै । छोरि देइ द्वै ठाम ॥
 कै सिज्या वामा रमत । कै छुटत संग्राम ॥१३८॥

॥ दूहा ॥

अति दुख मन्यौ भीम हिय । लिखि कग्गद चहुअन ॥
 सत्त भ्रात मेरे हते । इहै बैर अप्पान ॥१३९॥
 सुनिय राज चहुअन वर । दिय कग्गद फिरि तेह ॥
 जब तुम मंगौ बैर वर । तब हम बैर सुदेह ॥१४०॥

कवित्त

बाँचि कग्गद चालुक । रोस लग्यौ अयान कह ॥
 करो सेन सब एक । चलो अजमेर देस रह ॥
 तब कह्यौ बीर परधान । मास पावस्स रहें घर ॥
 करि कातिप घन कटक । हनै चहुअन सोम वर ॥
 सुनि राज अप्प मन्यौ सुहिय । भत्तरु सब जन अवर नर ॥
 उपसम्म रोस चालुक नृप । पिन पिन वित्तय जेम थिर ॥१४१॥

॥ दूहा ॥

रहै राज अजमेर महि । संभरेस चहुआन ॥
निसि दिन यौ क्रीला करै । ज्यौ अवतार सुकान्ह ॥१४२॥

॥ दूहा ॥

संभरि वै चहुआन कै, अरु गज्जन वै साह ॥
कहौ आदि किम बैरहुअ, अति उतकंठ कथाह ॥१४३॥

॥ कवित्त ॥

बंधव साहि सहाव । मीर हुस्सेन बान धर ॥
निज्ज वान सु प्रमान । वान नीसान बधै सुर ॥
गान तान सुज्जान । बाहु अज्जान वान वर ॥
भेव राज परवान । उच्च जसुथान जुभफ भर ॥
उद्धार चित्त दातार अति । तेग एक बंदै विसब ॥
संकेत साहि साहाब तिन । तेज अत्रै जयमंत भव ॥१४४॥

॥ कवित्त ॥

इषिष बधु आचार । मीर उमराव जंपि जस ॥
एक पात्र साहाब । चित्ररेषा सु नाम तस ॥
रूप रंग रति अंग । गान परमान विचष्षण ॥
बीन जान बाजान । आनि वत्तीसह लच्छन ॥
दस पंच बरष वाचा सुवच । सुप्रसाद साहाब अति ॥
आसिक्क तास हुस्सेन हुअ । प्रीति परसपर प्रान गति ॥१४५॥

॥ कवित्त ॥

एक सुदिन सुविहां । साह हुस्सेन सुबुल्लिग ॥
वे काफर आतस्स उतंग । दह दिसि नह डुल्लिग ॥
पैसंगी पासंग । लष लषां नलवाही ॥
साई सौ संग्राम । हक्कि हैवर गुरदाही ॥
गदन गुराव महि महि मषां । षां षवास अषिषय घरह ॥
अनहल्ल नाल लभभय रवन । करौ तुच्छ तुभभी बरह ॥१४६॥

॥ दूहा ॥

सुनिअ बैन साहाब तब । प्रीत न छंडी बाम ॥
कोपि कछो सुरतान तब । हनौ कि छंडौ ग्राम ॥१४७॥

॥ कवित्त ॥

सुनिय बत्त हुस्सेन । सेन अप्पन साधारिय ॥
छंडि नयर निस्संक । संक मन साह नसारिय ॥
निसा जाम इक आदि । लई सो पात्र परम गुन ॥
तरुनि पुत्र परिवार । सज्जि सब साज सुअप्पन ॥
परिगह सुअप्प अगै करिय । पांन पांन बंधी सिलह ॥
संचर्यौ नैर नागौर इह । तजिय देस निज गंठ ग्रह ॥१४८॥

॥ दूहा ॥

लै परिगह हुस्सेन गय । दिसि प्रथिराज नरिंद ॥
संभरि वै संभारि कै । मनु आयौ ग्रहदंद ॥१४९॥

॥ दूहा ॥

भोजन भण्ये विविध वर, बहु आदर विधि कीन ॥
मान महातम रषि रज, राज उभय ह्य दीन ॥१५०॥

॥ कवित्त ॥

आपेटक चहुआन । पास हुस्सेन संपतौ ॥
बार आइ चहुआन । भाइ घन ताहि दिपतौ ॥
नीति राब कुटवाल । तास ग्रह राज सुअप्पिय ॥
वर कैथल हांसि हिसार । राजपट्टो दै थप्पिय ॥
इह चरित देपि सब दूत तब । जाइ संपते साहि दर ॥
चरवर चरित जुगिनी पुरह । कहिय बत्त सें मुषंधर ॥१५१॥

॥ छंद पद्धरी ॥

संभरिय बत्त साहाबदीन । उच्चरिय बैन अति कोप कीन ॥
मुक्कलौ इत चहुआन पास । कठ्ठौ हुसैन जो जीव आस ॥१५२॥
बोल्यौ पांन तातार तब्ब । संजोव पांन उमराव सब्ब ॥
पुच्छी सु बत्त किय इत सार । थप्पी सु बत्त पुरसान बार ॥१५३॥

आरब्ब सेष लोनौ बुलाइ । वैब्रद्ध ब्रद्ध बुद्धी सुताइ ॥
 वंछै सुपेम सक लेहिं साहि । लज्जी अनंत आदब्ब थाहि ॥१५४॥
 उच्चर्यौ बैन साहाब भास । आरब्ब जाहु चहुआन पास ॥
 अपै जु पात्र हुस्सेन जाम । लै आउ सम्म हुसेन ताम ॥१५५॥
 मुक्कों सुगुनह कीनौ पसाव । मै दीन पच्छ करिषिमा दाव ॥
 छंडै न पात्र हुस्सेन प्रब्ब । चहुआन भिलै सामंत सब्ब ॥१५६॥
 जंपियौ बयन चहुआन साइ । कढ्ढौ हुसेन नागौर थाइ ॥
 अज्जीज पांव तुम सच्च उच्च । लिष्यौ सुपत्र हम परम रुच्च ॥१५७॥
 कढ्ढौ हुसेन तुम देस अंत । बंछौ जो पेम मानौं सुमंत ॥
 रष्या हुसेन जो असु परेस । चतुरंग सेन सज्जौं विसेस ॥१५८॥
 भंजौं सुनैर नागौर देस । जीवंत बंदि बंधौं नरेस ॥
 सामंत सूर सब करौं अंत । बंधौं सुबंध सा तरुनि कंत ॥
 उच्चरि गुमान तन बत्त थूल । संपेप कहैं मानौं स मूल ॥
 तुम जाउ सिघ्र नागौर वाम । मति करौ एक पिन घर विश्राम ॥१५९॥
 सै तीन दीन असवार सथ्थ । आरुहन दीन नरयान रथ्थ ॥
 संचर्यो सेख आरब्ब राह । दो पषप पत्त नागौर थाह ॥१६१॥

॥ दूहा ॥

गय आरब नागौर धर । मिल्यौ साह हूसेन ॥
 भोजन भषष सुभाव किय । विवध प्रसन्निय बैन ॥१६२॥

॥ दूहा ॥

कही बत्त हूसेन सम । जो कहि साह सहाब ॥
 नह मंनिय सोमंत हिय । दिय आरबू जवाब ॥१६३॥

॥ दूहा ॥

गयो सेष आरब्ब दर । लही षवर प्रथिराज ॥
 बोलि मभूभ मंडिय महल । सामंतन सब साज ॥१६४॥

॥ दूहा ॥

उठि गोरी दिन्ने बहुरि । गयौ सु अंदर साह ॥
 बहुरि षान मीरं बरा । अति चंचल तुर ताह ॥१६५॥
 तपै साहि गोरी सबर । चित सालै चहुआन ॥
 वैरोचन की साष ज्यौं । कीटी अंग प्रमान ॥१६६॥

॥ अरिस्त ॥

जगत् निसि भंषत सुरतानह । धरो सत रहि सेष प्रमानह ॥
जगि आयस देय दोन निसानह । चिता साहि चढी चहुआनह ॥१६७॥

॥ छंद मोतीदांम ॥

भए सुर तीन धुनक निसान । चह्यौ अश्व सज्जि सिलहै सुरतान ॥
चढ़े सब घांन सु उम्मर मीर । सजे सहनाइ बजे रस बीर ॥१६८॥
बजे सब बाज भयानक भाइ । चितैं हिय बुद्धि जिनैं जन नाइ ॥
चह्यौ सब सज्जिय सेन गरिष्ट । परी दस दिग्ग सुधूधरि दिष्ट ॥१६९॥
सबह सियाँन सुसेन कपोत । सनंमुष साहि दिष्यौ दल दोत ॥
भयौ दिसि बामिय कग करार । रुक्यौ दिबि धोमय धूम गभार ॥१७०॥
सनंमुष देषिय जंवुक सेन । बिरोमिलि चंपहि मगहि तेन ॥
क्रमें तस उपर गिद्ध असंष । चवै सुर रुद्र पसारिय पंष ॥१७१॥
गही सुरतान सु आरब बग । रहौ दिन आज सगुंन न जग ॥
रहैं कुहु अज्ज ततार सुदिन्न । गही चढ़ि चल्लहु मन्नि सगुन्न ॥१७२॥
कहै सुरतान अहो तुम क्रूर । भयैं भय म्रित्यु सु भंषहु नूर ॥
कहा बल जुद्ध कहा प्रथिराज । कितौ बल सामत जुद्धिह साज ॥१७३॥
हनौ रन सूर जिके चहुआन । गहौं जुध राज सु पंडिय प्रान ॥
कहा डर काफर दाषहु मुभ्फ । कहा भर आवध आगरि जुभ्फ ॥१७४॥
नमंनि चमंकि चह्यौ सुरतान । टमंकि गज्जिय नह निसान ॥
जलथल होय थलं जल भार । अमगह मग चलै गहि लार ॥१७५॥
मिल्यौ इक साहन लष समुंद । समुभ्फन कंन भयो सुर मुंद ॥
चल्यौ सुरतान मिलान मिलान । बढी अति वित दुनी चहुआन ॥१७६॥

॥ दूहा ॥

गयौ साहि चहुआन घर । दिए मिलान मिलान ॥
गए सुचर नागौर पुर । कहौ षवरि सुरतान ॥१७७॥

॥ दूहा ॥

देखि चरित नृप साह चर । गए पास सुरतान ॥
कहैं सेन समुप रजै । चढि आयौ चहुआन ॥१७८॥

॥ दूहा ॥

सुनि चरित साहाब चर । दिय निरयोष निशान ॥
चह्यौ सेन सज्जे सिलह । करिब फौज सुरतान ॥१७९॥

॥ छंद मोतीदाम ॥

चह्यौ सुरतान सुसज्जिय फौज । बजे बर बज्जन बीर असोज ॥
 भयो गज घुंमर घंट निबोर । मनौं भुकि कंअ भयौ सुर रोर ॥१८०॥
 गजै गज मइ मनौं घन भइ । चिकार फिकार भए सुर रुइ ॥
 तुरंग महीस कडक्क लगांम । खरक्किय पष्पर तोन सुतांन ॥१८१॥
 चमंकत तेज सनाह सनाह । करं धर पद्धर राह बिराह ॥
 भलक्कत टोप सुटोप उतंग । मनौं रज जाति उवांत बिहंग ॥१८२॥
 दमंकत तेज कमान कमान । चितं चित मीर रही मइमान ॥
 भले भर सांइय ध्रंम सगति । लपैं धरं जीयन जत्तिन गति ॥१८३॥
 नमैं निज सांइय पंच बषत्त । सिपारह तीस पढ़ै दिन रत ॥
 नमैं निज सेष धरंम सरंम । क्रमैं रह रीति कुरान करंम ॥१८४॥
 दिढबर बाचरु काछह मीर । तरुंनिय एक रतैं बर बीर ॥
 सबइय बेध करैं तम तांह । भमंतिअ पंषि हनैं छित छांह ॥१८५॥
 धरै इक एक अनेक सुवान । भलक्कत मुंड तवल्लह मान ॥
 धरैं धर नाहिय स्याहिय सीस । सिरक्कहि बंवर धुंमर दीस ॥१८६॥
 अनेक सुवान अनेकह रंग । चढ़े सब मीरह सेन अभंग ॥
 अने सुवान अनेकय व्रंन । समुभिभन हीय समुभिभन क्रंन ॥१८७॥
 पयं भर अगग अनेक सुभार । अनेक सुजाति अनेक सुतार ॥
 सिरं किय मुंडिय मुंड सुअद्ध । जुवट्टिय उट्टिय जानि अनद्ध ॥१८८॥
 करं तिय भंडिय रंग अनेक । फुरक्कहि भंषहि भंषह तेग ॥
 चले धर बान सुसद्विय दिठ्ठ । अगें हथ नारि अभूल गरिठ्ठ ॥१८९॥
 अगें किय मइ सरक्क सुभार । मनौं पय चल्लत पव्वत लार ॥
 ढलैं सिर ढाल अनेक सुरंग । फरैं फरहारि उभारिय अंग ॥१९०॥
 बरंनह भंडय मंडय जूव । मनौं षट रित्ति अनंगह रुव ॥
 भई पुर डंबर अंबर रेंन । जलं थल पद्धरि संकनि सेन ॥१९१॥

॥ अरिहज ॥

जगि मंत्री कैमास महा भर । गंठिय चित्त चरित्त कहिय बर ॥
 जगेगय सथ्थ सज्ज निस सेनं । गया राज यह सज्जि द्रगेनं ॥१९२॥

॥ दूहा ॥

चरित लष साहाव चर । गए पास सुरतान ॥
 सजी सेन सामंत पति । आयो जोजन थान ॥१९३॥

॥ छंद विश्रवरी ॥

सुनि चरित्त साहाव तासचर । बोलि मीर उमराव महा भर ॥
 दिय निरघात घाव नोसानं । चलयौ सेन सज्जै सव्वनं ॥१६४॥
 वाजित्र वीर अनेक सुवज्जे । धर पडिहाय सुगोमह गज्जे ॥
 डग्यौ सूर चह्यौ सुरतानं । बज्जि निहाव नाल गिरि बानं ॥१६५॥
 फौज सुपंच सजी साहावं । उलट्यौ सेन समुद्रह आवं ॥
 दच्छिन दिसा सज्जि तत्तारं । दिसि बाँई धुरसान सुधारं ॥१६६॥
 हाजिय राजिय गाजिय पानं । सनमुष सेन सजी सुरतानं ॥
 मीर जमांम पानं कमानं । महबति मीर पुठिठ सजितामं ॥१६७॥
 पान मरुस्तम रुस्तम पानं । मद्धि फौज रज्जे सुरतानं ॥
 सहते वीस वीस सजि फौजं । तुंबा पंच रचे अहहौजं ॥१६८॥
 चिहुपष्पां गज घूमहि डंमर । हथ्य नारि गिरि बान असंबर ॥
 रिन रन तूर घोर नीसानं । भेरी शृंग गरुड थन थानं ॥१६९॥
 नफेरी त्रिय बिध सुर डंडं । जोमप पट्ट बजे घन दंडं ॥
 आवत भुमभ डहक्क ठहक्किय । है वर हींस दरक्क गहक्किय ॥२००॥
 गज चिकार फिकार सबहं । तंदुल तबल मृदंग रबहं ॥
 जंगी वीर गुंडीर अनेकं । वाजित्र अनेक गने को बेगं ॥२०१॥
 फौज पंच साजी साहावं । मीर अनेक गने को नावं ॥
 देस देस मिलि भाप अनंतं । तवीयन नाम अनेक गनंतं ॥२०२॥
 फौज पंच सजि चत्यौ जु साहं । गज्जै धरनि गैन पुर गाहं ॥
 सारुंडै सज्ज्यो दिसि वामं । पद्धर सद्धर उत्तिम ठामं ॥२०३॥

॥ दूहा ॥

उत्तिम पंथरु पुठिठ जल । तषपी जय सुथान ॥
 सारुंडौ दिसि वामं दै । सजि ठाढौ सुरतान ॥२०४॥
 उड्डि रेन डंवर अमर । दिष्यौ सेन चहुआन ॥
 सुनिग कंन वाजित्र त्रहक । सजे सीस असमान ॥२०५॥

इंछिनी-विवाह प्रसंग

॥ दूहा ॥

जंपि सुकी सुक पेस करि । आदि अंत जो वत्त ॥
इंछिनि पिथ्यह व्याह विधि । सुष्प सुनंते गत्त ॥१॥

॥ कवित्त ॥

तपै तेज चहुआन । भान दिल्ली इच्छा बर ।
बीर रूप उष्यौ । पन्न रष्यै जुगिगुन भर ॥
आवू वै अनभंग । जंग पंगौ पल दारुन ॥
जोग भोग पग मग । नीर पित्री अवधारन ॥
कित्ती अनंत सलपेज भुअ । धुअ प्रमान पन रष्यई ॥
चब बरन सरन भुजदंडभर । दल दुज्जन भिर भष्यई ॥२॥

॥ दूहा ॥

जैत पुत्र सलपेज लघु । इंछिनि नाम कुमारि ॥
बर मंदोदरी सुंदरि । बियन रूप उनिहार ॥३॥

॥ गाथा ॥

सो अप्पी बर भट्टं । रुद्रं बर माल थानयं भेवं ॥
सिद्धं सिद्ध सुपुत्रं । नामं जास भीमयं रायं ॥४॥

॥ कवित्त ॥

अनहलपुर आभ्रन । राज भोरा भीमदे ॥
देसां गुज्जर षंड । डंड दरिया से बंदे ॥
सेन सबल चतुरंग । बीर बीरा रस तुंग ॥
अति उत्तंग अनभंग । बियन पुज्जै बल जंग ॥
कलि काल किन्ति मिन्ती इतिय । पलटि प्रीति कृत जुग करन ॥
भोरा नरिद भीमंग बल । उभै दीन तक्कै सरन ॥५॥

॥ कवित्त ॥

जहोरा पारक्क । सर्व सोढा पज्जाई ॥
 बारी बंभन वास । ठाम ठठ्ठा छड्डाई ॥
 माही माल्हन हंस । पालि आबू धर लग्गा ॥
 आगेँही सलषान । दई मंदोदरि सग्गा ॥
 आचंभ रूप ईच्छिनि सुनी । जन जन बत्त बघानियां ॥
 भोरा अभंग लग्यौ रहसि । काम करक्कै प्रानियां ॥६॥

॥ कवित्त ॥

तिन प्रधान पट्टाइय । लिष्यि आबू दिसि रायं ॥
 तुम बड्डे घर बडे । बानि बड्डे चित्त चायं ॥
 सैध सगप्पन सध्यौ । चूरि चालुक परिहारं ॥
 पज्जाई दो बार । बाल बांरु रुकारं ॥
 नग हेम मुत्ति मानिक्क घन । कहि न जाइ लष्पा लिषां ॥
 ईच्छिनि सुचित चहुआन बर । तौ आबू गिरि सर भषां ॥७॥

॥ दूहा ॥

कै ईच्छिनि परनाय मुहि । रषि सगप्पन संधि ॥
 जौ चित्तै चहुआन को । गढ तें नष्यौ बंधि ॥८॥

॥ कवित्त ॥

जै अब्बू वै भार । लाज अब्बू गज रष्यौ ॥
 मान प्रमान समदान । अंग कवितन कवि सष्यौ ॥
 डोलौ लंमन होइ । घाइ बज्जै रस भीरं ॥
 सलष सुतन पामार । समद लज्जा मुष नीरं ॥
 मिलि मंत तंत इक्क सु करन । करक क्रसस सगुनं सुबर ॥
 संवरन मंत मंतह रवन । भान दान दिष्ये सुबर ॥९॥

॥ दूहा ॥

इम कहि जैत सुगत सम । गढ वपु रष्यौ सच्छ ॥
 हम तुम जाइ सुराज पै । लैआवैं बर पच्छ ॥१०॥

॥ कवित्त ॥

गय सलषानी राव । बीर अगार गढ रष्यै ॥
 बर आबू की लाज । धेम क्रंनह सिर भष्यै ॥

बंधो राव धरंनि । बीर पामर सुर सषी ॥
 प्रजा पुलंत नरेस । ग्राम षडू दिसि रषी ॥
 वर मुक्कि बीर धारह धनीय । हथराज परवान लिषि ॥
 सोमेस पुत्र प्रथिराज कों । दै इच्छिनि सगपन सुबिषि ॥११॥

॥ कवित्त ॥

बर उद्धरन नरिंद । षेम क्रंनह गढ साहिय ॥
 जोग मग्ग लम्भियन । षग्ग मग्गह मुत्ति पाइय ॥
 बहुत सिद्ध साधन सुमांडि । आरंभ विचरिय ॥
 मुक्कि त्रिगुन गुन गहै । छिमा सद्धै क्रमनारिय ॥
 हम परत भूमि पंचह सुधर । पहिलै मोधर चंपिहै ॥
 गोइंद परै बड़ गुज्जरें । आवू आनि सुजंपिहै ॥१२॥

॥ दूहा ॥

चालुक्का चहुँआन सौं । बंधे तोरन माल ॥
 ते कविचंद प्रकासिया । ज हूँदे दल हाल ॥१३॥

॥ दूहा ॥

सुनि कगगर नृपराज प्रथु । भौ आनंद सुभाइ ॥
 मानौ बल्ली मूकते । बीरा रस जल पाइ ॥१४॥

॥ कवित्त ॥

पंच हस्ति सत बाजि । द्रव्य दीनो सत पंचं ॥
 धरमत्ती मेवात । दियो हिंसार सुपंचं ॥
 तेग एक पुरसानि । इक्क माला गुन दानं ॥
 आदर संजुत बोल । मुक्कि मंत्री अगिआनं ॥
 संभाग राज सोमेस सुअ । सलष राज कीनौ गवन ॥
 सुनि बात राय भोरंग हिय । मनौ घाव दीनौ लवन ॥१५॥

॥ दूहा ॥

करि जुहार भीमंग सौ । चल्यो जैत कुंआर ॥
 षेमकरन षंगार कों । दै सिर उप्पर भार ॥१६॥

॥ दूहा ॥

गढ साह्यौ सुनि भीम ने । कन्यावर प्रथिराज ॥
 बोलि मंत्रि सज्जन कह्यौ । दुहूँ बाजएँ बाज ॥१७॥

॥ छंद पद्धरी ॥

जं बात सुनिय सलेषज बीर । परि तत्त तेल जनु बूंद नीर ॥
 प्रजरंत रोस चालुकक भान । धर धरिग धरा षल संकमान ॥१८॥
 बंधू समेत पाताल मेत । जमराज पून को करे हेत ॥
 डंकिनी पास पीठी मिडाइ । कोतिरै समुद बिन हथ्य पाइ ॥१९॥
 को हथ्य सिध पुच्छी जगाइ । कोलेइ नाग मनि सीस लाइ ॥
 को काल ग्रेह गहै पंचि हथ्य । घालै जु कौन तत अग्नि वथ्य ॥२०॥
 रष्यै सु कौन चालुकक पून । संभर्यौ कौन त्रैलोक हून ॥
 मै सुन्यौ क्रंन जुगिनि पुरेस । परमार रषि अपमध्यदेस ॥२१॥
 ज्यौ पियौ कृष्ण दावानलेस । त्यौ पिंड गढ्ढ आवूअ देस ॥
 गढ चढै मान मन धरिग भार । सम करों जारि संपारसार ॥२२॥
 मुक्कलें दूत दिल्लीय थान । रष्यै न सरन ज्यौं चाहुआन ॥२३॥

॥ कवित्त ॥

जपि भोरा भीमंग । अंग कंप्पै रस बीरह ॥
 बिषम भार उद्धार । बारि बोरें अरि नीरह ॥
 दिसि दिसान कगार । प्रमान पट्टे पट्टनवै ॥
 बारिधि बंदर सिंधु । बाज सोरठ ठट्टनवै ॥
 कच्छे न जथ्य जहव जहर । सेन इक्क भए आनि भर ॥
 चालुकक राइ चालंत दल । अम्मर घुम्मर घुमर बर ॥२४॥

॥ कवित्त ॥

बर गिरनार नरेस । कियो साहस चालुककी ॥
 लांहानौ कट्टीर । सेन बंधे भुअलुककी ॥
 आवू उपर कूच । बीर भीमदे दिज्जै ॥
 वर निसान सुर गज्ज । गच्छि जैजै अरि पिज्जै ॥
 सहनाइ नफेरिय बीर बजि । सिंधुअ राग सु आदरी ॥
 पंमार भोम पूजी सहर । वजी कूह गुन गहरी ॥२५॥

॥ छंद भुजंगप्रयात ॥

धरा धूरि पूरं । सिरं सेत नेतं । पंहं पंड पंडं । उडी रैन रेतं ॥
 मदं गंध भौरं । लगे भौर भारं । मनौ कज्जलं कूट । कलषंठ थारं ॥२६॥

ढलं ढाल ढालें । चलै ब्रंन ब्रंन । मनौ केलि पंच । रगंचा सुव्रन ॥
 चलें चौर चावहिसं वात पत्तं । मनौ भौरयं भौर वासंत मत्तं ॥२७॥
 नवं नह नीसान बज्जं अघातं । गजै गैन कै सिंघ कै गिर्गिरातं ॥
 नवं नह नफ्फेरि भेरी सभालं । तरक्कंत तेगं मनौ बिज्जु नालं ॥२८॥
 करक्के नरं षाल षगं षनक्कें । मनौ काल हथ्थं सुबिज्जु भलक्कें ॥
 जलं बेथलं वेथलें तथ्थ नीरं । मनौ नंषियं बान रघुनाथ बीरं ॥२९॥
 जलं बेत पुट्टी वनं वेत तुट्टी । थलं वेत छुट्टी फनं वेत उट्टी ॥
 धरं रेन उट्टी सुलग्गै अभानं । दलं वेत बढ्ढी पयानं पयानं ॥३०॥
 करी आनि सेना सुआबू गिरहं । मनौ पारसं चंद आभा सरहं ॥
 कवी बीय ओपंम चित्तं बिचारी । उरं हूव माला सिवं ज्यौ अधारी ॥३१॥
 चिहूं कोर डेरा कहुं पीत सेतं । मनौ ग्रीपमं अंत उट्टि मेघ मेतं ॥३२॥

॥ गाथा ॥

आभा सरदं प्रमानं । सेनं सज चालुकं बीरं ॥
 छिति छत्रीयं छत्रं । जनु बहलं छुटि संकरं मेघं ॥३३॥

॥ छंद भुजंगो ॥

मिले सेन पंमार चालुककं एतं । कुहू रेन जुट्टै मनौ प्रेत हेतं ॥
 भरं सीस तुट्टै विछुट्टै बिहारं । करं गल्ल ग्रजें पिसाचं चिहारं ॥३४॥
 तरक्कंत घायं परै पाइं कच्छी । मनौ नीर मुक्कें तरफंत मच्छी ॥
 क्रियौ जुंहरं जालि बालानि तत्थें । चढ्यौ राउ भोरा सिरें अब्बु मत्थें ॥३५॥
 चपं चच्चरंची सुरंची भनक्कै । बज्यौ जानि घरियार संभया ठनक्कै ।
 रुधि धार पारं भई भूमि रत्ती । रमै जानि वासंत निस्संक छत्ती ॥३६॥

॥ कवित्त ॥

परे भुभिक्क रन वीर । मरन ज्यौ जानि जम्म बर ॥
 पुत्र मित्र सज्जन सुलच्छि । टरे नन काल काल कर ॥
 धरी लच्छि धर धर्यो । धारि उद्धार पमारं ॥
 सह परिगह छह पुत्त । तुट्टि धाराधर धारं ॥
 धुअ धाइ भीम लीनौ सुगढ । सुकल पच्छ पुंनिम सुदिन ॥
 जय दंद बत्त चालुकक सुनि । नभ लग्यौ सलषान तन ॥३७॥

॥ दूहा ॥

एक मास दिन पंच रहि । गढ़ मुक्यौ तिन बार ॥
 पट्टनवै पट्टन गयौ । अब्बूवै सिर भार ॥३८॥

॥ भुजंगी ॥

थपी थान थानं सुअब्बू प्रमानं । गवौ राज पट्टं सु पट्टं निधानं ॥
 दियं कग्गदं साहि सुरतान गोरी । करौ भेद बत्तं बधौ पिथ्थ जोरी ॥३६॥
 धप्यौ साहि गौरी सुसारुंड आवै । हमं सब्ब सेनं पसौ कित्ति धावै ॥
 दऊं गद्ध अब्बू रुजंबू निधानं । हनौ साहि चौहान करि पग्ग पानं ॥४०॥
 तहां मुक्कल्यौ बीर मक्कवान राजं । लिपे कग्गदं चालुकं राजकाजं ॥४१॥

॥ दूहा ॥

पूत परिग्गह बंधु सह । मैँ मुक्कलि स्रग लोग ।
 एकै इच्छिनि कारनह । मति सलपानि अजोग ॥४२॥

॥ गाथा ॥

मम मनरंजन भंजौ । सजौ सेनाइं संभरी देसं ॥
 जो मिलई सुरतानं । भंजौ राज दिल्लियं पानं ॥४३॥

॥ कुंडलिया ॥

कग्गर गुरिय सहाबदिस । भरि लिपि भोरा राइ ॥
 तुम धरि संभरि उत गहौ । हम नागौर निहाइ ॥
 हम नागौर निहाइ । बंधि संभर गिरि अब्बू ॥
 जो मिलंत मुहि आइ । देउं घन अंबर दब्बू ॥
 पहु पारक पटनेर । सीम भण्णर ही अग्गर ॥
 गुज्जरवै गरू अत्त । लिपे गोरी दिस कग्गर ॥४४॥

॥ कवित्त ॥

चाहुआन सामंत । मंत कैमास उपाइय ॥
 बंदि लग्न हुंकार । बंध बंधान उचाइय ॥
 दस गुंनां बल देषि । साजि साधन सु सुगंधह ॥
 दुहु मुष्ठांही लगि । बीच चण्पौ सुम्रदंगह ॥
 गोरीय एक गुज्जर धनी । मुप विचित्र धनि संभरी ॥
 हजार दून द्वादस भरह । दी मिलगि दुहु दिसि बुरी ॥४५॥

॥ कवित्त ॥

सारुंडै साहाब । दीन सुरतान विलग्गा ॥
 सोमक्ती भर भीम । रात लण्णह असदग्गा ॥

नागौरें सामंत । ईस चहुआन पिथाई ॥
 अस पति गुजर पती । जानि मिरदंग बजाई ॥
 दो बीच हजारो अट्ट चव । गेहा मंत परठ्ठयौ ॥
 चामंड राइ कैमास सम । षीची षग बरठ्ठयौ ॥४६॥

॥ छंद भुजंगी ॥

बँटी फौज दूनौ चढ़ै चाहुआन । भरं स्वामि दूनौ भरे चित्त वान ।
 तिन की उपमा कबी चंद पढ़ै । मनौ कर्क अरु मकनिसिदीह बढै ॥४७॥
 दुई इक्क मन्नै उमन्नै नसाई । करी संभरी भृत्य दूनो दुहाई ॥
 भित्त मुष्प उंचं दिरै चाहुआन । मनौ डंमरी बाल उगो बिभान ॥४८॥
 फिरै उंच तेजं तुरं गति ताजी । जिनै देपतै नैन गत्यै न लाजी ॥
 पचै बाग उट्टे चुटके हरेवं । मनौ मंडियं मौज केकी परेवं ॥४९॥
 पहु पाइ मंडं तनं चित्त इपी । मनौ कज्जलं कूट धावै धरत्ती ॥५०॥
 बिनं उप्परं ढाल नेजे सुरंगं । तिनं ओपमां चंद चिती सुचंगं ॥
 जरे पाटनारी बिचै हेम गुंथे । मनौ षज्जुरी केलि जुग मेर मथे ॥५१॥
 ठनकन घंटा चलै अंग मारै । मनौ कूलटा छैल चित चालि चारै ॥
 भंमै दंत दंती सुनेनं बिराजै । मनौ बिज्जलत्ता नभं मध्य छाजै ॥५२॥
 सुपं सूर सूरं सुमुच्छी बिराजै । तिनं चंद बीजं गतं देपि लाजै ॥
 पटे वीय पासं उपमा सुकब्बी । मनौ राह वीयं रनं चंपि रब्बी ॥५३॥
 सजे आवधं सूर छत्तीस डब्बे । मनौ राह रूपं ससी कोटि दब्बे ॥
 करी सेन गोमं मिलानं दवानं । बढो वेय बाजू सरित्ता किजानं ॥५४॥
 गह्यौ मुष्प गोरी प्रथीराज राजं । मनौ राह अरु भानं मिलि जुद्ध साजं ॥
 मुषं रांकि सुतानं कां चाहुआन । उते रांकि कैमास भोरा मुहानं ॥५५॥

॥ दूहा ॥

पीची षग परट्टि बर । वर भीमंग चालुक्क ॥
 तिहुँ दिस तिहुँ बर धाइया । ज्यौं पच्छिमी आरक्क ॥५६॥

॥ कवित्त ॥

मिले मल्ल आलंग । जंग भोरा भुअंग जगि ॥
 कै कुलाह कंतार । धारा डंडूर पूर लगि ॥
 है हुलाह छुट्या कि । सिध मैंगल मै मत्ती ॥
 कै अप्पां अप सेन । राव रावत्त बिरत्ता ॥

आवृत सेन उत्तर दिसा । ईसानै लगिगय लहरि ॥
 धावंत धाम सामंत सों । सूर समर लग्गे समरि ॥५७॥
 चंडिय देवि पसाइ । हस्ति तोरै मै मत्ते ॥
 चढ्यो राव भीमंग । चौर मौरह सिलहंते ॥
 कै अप्पानी रारि । काह वाम कि डंडूरिय ॥
 कै छुट्टा संग्राम । सिंघ संकर निज्जूरिय ॥
 कै वीर धाम धुज्जिय धरा । कै कलाल कलपंत हुअ ॥
 जा जंपि जंपि जंपन कहै । जपै राज भीमंग भुअ ॥५८॥
 नां अप्पानी रारि । नाहि वाइ सुडंडूरिय ॥
 नां छुट्टा संग्राम । सिंघ संकर निज्जूरिय ॥
 है हक्कां धर कंप । चंप उत्तर थी लगिगय ॥
 चौकी गस्त गुराइ । कोट कोटन इत भगिगय ॥
 सा द्रुग देव सत्तरि पती । पति पहार ठेल्यो करिय ॥
 आहंन हंन हंतेव हठ । निसि निसान सदह भरिय ॥५९॥

॥ दूहा ॥

सदां सह उसह भय । बज्जा बज्जिय लग्ग ॥
 जूना जंजर हैर बल । भई गुरासुर जग्ग ॥६०॥
 संभरि सों लग्गे समर । अंमर कौतिग एव ॥
 घरी सत्त सत्तमि दिवस । उग्यौ उडगन देव ॥६१॥

॥ भुजंगप्रयात ॥

घरी सत्त सत्त उग्यौ चंद मानं । बरं बीर चालुक्क पगं षगानं ॥
 बजी जूह कूहं कलं कोकनहं । मनो गज्जियं मेव नहं प्रसहं ॥
 कुलं बीर जग्गे मुषं नीर भारी । परे लोह आवृत्त सा व्रत सारी ॥
 बहै षग धारं गजं सीस भारी । मनो धूम मभक्के उठे अगि भारी ॥
 तमी तेज भग्गे जग्गे तेज पगं । बजै जंग नीसान ईसान मगं ॥
 करै अप्प अप्पं नृपं बे दुहाई । नचे रंग भैरू ततथ्येन घाई ॥
 बहै बांन आवृत्त सावर्त्त तेज । तहां चंद कव्वी उपमां कहेजं ॥
 लगें अंग अरि गंजि सुग्रीव भारी । फिरंतं ज जंगम दीसै उतारी ॥
 परें संघ बंधं असंघं निनारे । मरोरंत चौरं मनो मूर बारे ॥
 फिरें मद्धि ढालं रिनं मंभ रीती । तिनं मुक्कियं कुत वारी निव्रती ॥६२॥

॥ कवित्त ॥

है गै पग रथ अरथ । बढ़ि बढी नर लग्गा ॥
 कै घायां घन नंत । भयें भंभरि भर भग्गा ॥
 चालुक्कां चंयो सयन । सैं दल सामंता ॥
 गौरीरद कैमास । भूप भोरा धावंता ॥
 रथ सत्थ सिलह सज्जन कह्यौ । गहकि गज्जि भोरा सुभर ॥
 को करै काल सों चाल क्रत । महन रंभ मानों अमर ॥६३॥

हक्कारयो रा भीम । मत्त में गल गज्जानां ॥
 सहस पंच साहन समंद । ढालै ढल्लानां ॥
 जंत्र मंत्र गोला गहक्क । छोनी सब संकिय ॥
 साहन् वाहन बर बिरह । आव्रत उत्तंकिय ॥
 लल्लरिय लोह अप्पां अपन । भर उभार लग्यौ गयन ॥
 हल हले सेन सामंत दल । मनो अंत जम जुथ्य पन ॥६४॥

ना छुट्टा रासिंध । डांम डंडूरन उठ्यौ ॥
 ना हंकाया आप । सेन भारथ्य न जुट्यौ ॥
 सा मंतांरी हाक । धाक उत्तर दिसि लग्गी ॥
 अप्पांनी सेना सुमंत । भारत भिर भग्गी ॥
 सन्नाह राय सज्जी सुकसि । बिघ्न विधान लगिय अमर ॥
 चालुक्कराइ चित धूमरी । सार सार लग्गी समर ॥६५॥

महन रंभ आरंभ । जगि भोरा सनाह सजि ॥
 तव लगि दल रुक्कयौ । राज कंठीर कन्ह रजि ॥
 भर अभंग चालुक्क । रोस आकास प्रमानं ॥
 हाला हल तंमस्यौ । तमसि तामस तम भानं ॥
 चैनेत जगि प्रलैकाल जनु । बंधि बंधि गज्जे उभय ॥
 बंभानं जग्य जे उप्पने । करों सोइ निर्वीर मय ॥६६॥

षग उभारि दल रारि । तारि कढ्ढन दुज्जन वै ॥
 औडन हंथह नंषि । धंषि भ्रत चाल्लुक नरवै ॥
 कढि कबंध धर लुट्टि । लुथ्थि पर लुथ्थि अहुट्टिय ॥
 श्रोन धार षल हलिय । मोह माया भ्रम छुट्टिय ॥

तुटि अंत दंत पाइक दुरहि । बहर रूप थावै अछग ॥
पग पगति सिभ पग पग मुगति । भुगति लभ किन्ती सुजग ॥६७॥

॥ दूहा ॥

किन्ती सजन लग्यौ नृपति । सुर विध्वंसन काल ॥
बीस सहस पारस परिय । मनौ बीर बर माल ॥६८॥

॥ छंद मोतीदाम ॥

समग अमग विमग विसाल । रहे जुरि चालुक देवन साल ॥
जुरे बर बीर दसों दिसि पंति । मनो घन भद्व वत्तन भंति ॥
दाऊ दिसि थाव बदे करि साज । मनो चव चंग कुलंगन बाज ॥
परे बहु दंतिय भंतिय काल । वरै वर दूँढि विवानन बाल ॥
मनो मुगथा मन मान प्रमान । रही इम अच्छरि रंछ विमान ॥
सुदेव जयं जय नंषि पुहप । करै दोउ चंद सुकीरति जप्प ॥
इकै श्रइ कोरनि अमृत एक । कछूक कवित सुधारै विसेक ॥
सुर च्छिनंत नहि बीर बलान । बदे बर बांन कमां मय थान ॥
अमंतिय गिद्धिय रुद्धिय भान । रही इछ अच्छर अच्छ विमान ॥६९॥

॥ कवित्त ॥

सहस पंच दस सेन । अलप चहुआन संघातिय ॥
बाल पोस प्रत्यंग । सस्त्र सत्रंग निघातिय ॥
चमर तबल टंकार । हंक हंकार हकारिय ॥
लोह छक्क धर धक्क । कंक अनसंक वकारिय ॥
सहस तीस सह सेन मिलि । गिलन मेछ गज्जे गहर ॥
तिन संग बीर बेताल चढि । पढत मंत बढ्ढे कहर ॥७०॥

॥ कवित्त ॥

सजि धायौ चहुआन । साइ सारुंड सु संभरि ॥
उत जित्यौ चालुक । रत्ति रति वाह सुभंमरि ॥
धनि सुभाग प्रथिराज । बीरा भोरा विडुर्यौ ॥
अरि अनंत कन्हंत । सेन सामंतन भार्यौ ॥
लग्यौ पग उड़ि हथ ते । त्रिया नयन मत्ता मयन ॥
गाहन गहन दुज्जन दलन । सुबर सूर सज्जिय सयन ॥७१॥

॥ छंद भुजंगी ॥

पर्यौ धाइ सुरतांन सुविहांन गोरी । चंपे चाइ चहुआंन गौ पंच डोरी ॥
 षिभ्यौ वंक सूरं सलषं पवारं । नपं सार टट्टी किसारं किवारं ॥७२॥
 षिभ्यौ कन्ह कंकं भँडा मड्डि गाढौ । मनो राषसी सेन मै कपि ठाढौ ॥
 गहै दंत दंतीय भुज्जं उषारै । धरा कढिढ मूला मनो मार डारै ॥७३॥
 दुवं वीर हक्कै महावीर सहं । भये रंग रक्तं मनो मल्ल हई ॥
 लगै सख अन संष हथ्थीन टारै । मनो कोपियं भीम पाहार फारै ॥७४॥
 तुटै टोप टूकं सुउडुंत दीसैं । मनो चंद तारा नपै हथ्थ रीसैं ॥
 लगी नागमुष्पी गजं सीस भारो । मनो द्वार रुंधे धिरक्की उधारी ॥७५॥
 हुले सेल सालें वरं वीर दीसं । मनो सिद्ध तारी लगी सीस ईसं ॥
 परं तेन दीसं वरं वीर कोई । लगें धार धारा रजी रज्ज होई ॥७६॥
 पर्यौ राउ रघुवंस बरसिंघ जोरं । जिनै मुत्ति लम्भी बरं वीर भोरं ॥
 बजें धार धारं गजं सीस तेगं । नचें जानि बीजं घनं मध्य वेगं ॥७७॥
 लगै कुडुक वांनं गजं जोर सीसं । उठे छिछ इच्छं गिरं ऊक दीसं ॥
 भरं सुंड रक्तं सहं अंग डोरं । श्रवं बहली मेघ गेरून धारं ॥७८॥
 घुमैं मुक सीसं भटं लोह छक्कै । उमै जानि भूतं महा मंत्र हक्कै ॥
 फिरं रुंड विन मुंडरस रोस राचे । मनो भगारं नट्ट विद्या कि नाचे ॥७९॥
 परै अश्व हुंतं सिरं जोर सूरं । तुठें पुष्परी हड्ड ह्वै भूर भूरं ॥
 लगै गुर्ज सीसं भजी भंति छुड्डें । मनो भंषनं दद्धि मंथान उड्डें ॥८०॥
 हुपे छीन छीनं छरी मार छक्कै । भरं रक्त डोरी महा मल्ल हक्कै ॥
 भिरै सख विन बथ्थ भर भीर भीमं । परैं लोथि जूथं विनं जीव हीमं ॥८१॥
 लरंतं जदीसै परं तेन कोई । लगे षग षगं श्रमे मल्ल होई ॥
 तुठें दंत दंतो कि रच्चा निनारें । मनो कज्जलं कूट तें चंद भारें ॥८२॥
 दाऊ क्रम हस्तो चुवै रुद्धि भारी । मनो कूट तें उतरै भूमि रारी ॥
 बहै वांन कंमान मिटि थान थानं । तहां पंति पंथीय पावै न जानं ॥८३॥
 उते षान गोरी इते सिंघ राई । मनो वीय सिंघं पलं काज धाई ॥
 चंपे गिद्धि मंसं उडै रुद्धि छुट्टै । मनो रक्त धारा नभं मेघ बुट्टै ॥८४॥
 मुर्यौ साहि गोरी महावीर धीरं । तसव्वी तिनष्पी लिए षिभिभू तीरं ॥
 धरो ध्यारज्यौ चञ्चरं षग संध्यौ । षजै साहि गोरी सु चौहांन रुध्यौ ॥८५॥

॥ अरिह ॥

जित्यौ वे जित्या - चैहानं । भग्ना सेन सन्या सुरतानं ॥
 तेरह षान परे परमानं । सारुंडै तोर्यौ तुरकानं ॥छं०॥८६॥

॥ कवित ॥

साह डंड डंडयौ । मेह मंड्यौ नागोरिय ॥
 भट्टिय रा भटनेर । राव सिंघातन तोरिय ॥
 जा रानी जग हथ्थ । मंडि मंडोवर पामह ॥
 जै जै जै जैप्रथिराज । देव सहेति अकासह ॥
 आरज लज सुरतानं कहि । फिरि मिलानं दीनौ पुरां ॥
 जो सत्थ कत्थ कैमास किय । चालुक्कां सोभति धरां ॥८७॥

॥ दूहा ॥

सुकी सरस सुक उच्चरिय । प्रेम सहिन आनंद ॥
 चालुक्कां सोभति सध्यौ । सारुंडै में चंद ॥८८॥

इंछनि व्याह कथा

॥ दूहा ॥

कहै सुकी सुक संभलौ । नींद न आवै मोहि ॥
रयनि रवानिय चंद करि । कथ इक पूछौ तोहि ॥१॥
सुकी सरिस सुक उच्चर्यौ । धर्यौ नारि सिर चत्त ॥
सयन संजोगिय संभरै । मन में मंडय हित्त ॥२॥
धन लद्धौ चालुक संध्यौ । बंध्यौ षेत पुरसान ॥
इंछनि व्याही इच्छ करि । कहों सुनहि दै कान ॥३॥
मुक्कि साह पहिराइ करि । दंड दियौ सलषानि ॥
लगन पठाइय धिप्र करि । वर व्याहन पिथ्यान ॥४॥
पठयो प्रोहित भान कर । कनक पत्र लिखि लगन ॥
श्रीफल बहुल रत्तन जरि । पिषिष होत जिहि मग्न ॥५॥

॥ कवित्त ॥

अब्बवै अब्ब समप्पि । सीम बंधी दह गुन्निय ॥
पावारी इंछनिय । व्याह सोधन वर मन्निय ॥
लच्छि मेह कूबेर । अंत ग्रीषम दिन धारी ॥
परनि राज प्रथिराज । हथ श्रीफल अधिकारी ॥
नर नाग देव गंधर्व गुन । गांन जांन मोहें सकल ॥
अछै उतंगलच्छन सहज । थान नंधि बंधी विकल ॥६॥

॥ दूहा ॥

प्रथु पूछत बंभननि सुनि । कहौ बाल किन बेस ॥
कितक रूप गुन अगरी । सुनन मोहि अंदेस ॥७॥

॥ साटक ॥

बाले तन्वय मुग्ध मध्यत इमं स्वपनाय वै संधयं ॥
मुग्धे मध्यम स्याम बांमति इमं मध्यान्ह छाया परां ॥
बालप्पन तन मध्य जीवन इमं सरसी अवग्गी जलं ॥
अंगं मद्धि सुनीर जे मल ससी सुम्भै सुसैसव इमं ॥८॥

॥ कवित्त ॥

अति सरङ्ग वय स्याम । संधि वय संधि जुरिय बर ॥
 ज्यों दंपति हथ लेव । पंथ जोगिद मिलत गुर ॥
 नयन मयन आरुहिन । धर्यौ आरुहन थांन दिन ॥
 कछु कज्जल अंकुरिय । करिन आवें पें लज्ज मन ॥
 ज्यों करकादि निसा मकरादि दिन । करक आदि सैसव सुगुर ॥
 मकरादि बाल जावन जदिन । काम धुरा लीनी सुधुर ॥६॥

॥ दूहा ॥

स्याम सु वांम अनंग भय । घटी न घट्टि किसोर ॥
 बालप्पन बैवेस तन । मनो भरें घन चोर ॥१०॥

॥ कवित्त ॥

षट हथ्थी बहु हेम । रतन गुर पाट पटंबर ॥
 पीत रत्त गुन सेत । स्याम नग सुन गति अंबर ॥
 सो मंगी चालुक्क । साई दानो प्रथिराजं ॥
 मनु छंद बधू सचचीव । काम बंधो चढि पाजं ॥
 बर बरनिराज सैभर धनो । सुफल बंधि फल संग्रहिय ॥
 इंछनि अवाज आवाज क्रम । अदिन भंजि के दिन सजिय ॥११॥

॥ साटक ॥

नां पतनी नल राज राजम बधू दमयंति नां इंद्रयं ॥
 नां सचचीव सुनाथ नायक धरं लच्छीन धरया धरं ॥
 नां रत्ती मनमथ्य रत्ति कलया मंदादरी रावनं ॥
 सोयं सा प्रथिराज इंछनि बरं समयौ न लम्भै कवी ॥१२॥

॥ दूहा ॥

तिहि सुंदरि व्याहन नृपति । रिति ग्रीष्म दिन संधि ॥
 चढ्यौ सूर संभरि धनिय । सुष संचन षल बंधि ॥१३॥
 धर अंबर तर जलध बल । कहुं न सूर तप सीत ॥
 अगम पंथ नर धरनि सुष । विलसत दंपति मीत ॥१४॥

॥ साटक ॥

पंथ दुस्तर वाय मुकुलितसरं ज्वाला इला दुस्सहा ॥
 क्रीलायां धन क्रयन यांइ सुथनं निर्जीव शब्द धरा ॥

आवर्त्त वरतत्त मित्त करनी धूमाय विदिसा दिसा ॥
सरनं मरनय पंथ ग्रीषम पथं सुष्पं ग्रहं प्राणिनां ॥१५॥

॥ दूहा ॥

प्रानी पंथ न सुष्प जल । मरन मुनिश्चय मानं ॥
दीह उदय दिसि मुदय भय । सुरति स्वयंवर ठानि ॥१६॥

॥ कवित्त ॥

सथ्य कन्ह चहुआन । सथ्य निडुर रषि राजं ॥
सथ्य सोम सामंत । अल्ह पल्हन प्राति साजं ॥
बलिय गरुअ गहिलांत । बलिय भोंहा बर सिध नर ॥
दाहिम्मा कैमास सथ्य । सौ चावंडा गुर ॥
मति भद्र मंति साधन सकल । लौहांनौ स्वांमित धुर ॥
चतुरंग सूर वय रूप गुन । लिए राज राजन गुर ॥१७॥

॥ छंद पदरी ॥

चढि चल्लौ राज प्रथिराज राज । रति भवन गवन मनमथ्य साज ॥
सिर पहुप पटल बहुसा षवास । अवलंब रहिय अलि सुर सुरास ।
मुप सोभ जलज कंद्रप किसोर । दीजै सु आज व्रप कौन जोर ।
चिति काम बार रजि अंग और । संकर्यौ जान मनमथ्य जोर ।
जिम जिमति लाज अरु चढत दोह । लज्जा सुजांनि संकलिय सीह ।
जिम जिम सुमंत व्रप श्रवन वत्त । तिम तिम हुअंत रस काम रत्त ।
मधु मधुर बेन मधुरी कुंआरि । रति रचिय जांनि सैसव सवारि ॥१८॥

॥ श्लोक ॥

साय दीपसमो दिष्टे । जैति जैति विजै जितं ॥
देवासुर मनुष्यानां । काले केक न गच्छति ॥१९॥

॥ कवित्त ॥

कौन काल बसि पर्यो । काल ग्रह कौन न बंध्यो ।
कौन काल जित्त्यो । काल किहि षाइन रुंध्यो ॥
मठ विहार वापीन । विरष सुर थावर जंगम ॥
सुवर राज राजिद । कौन दिष्पौ न अभंगम ॥
ज्यां बंध्यौ साहि गोरी सुबर । मरन तिनं कति नंत्यौ ॥
इंछनिय इच्छ इच्छा सुफल । सुबर बीर बीरह ज्यौ ॥२०॥

॥ साटक ॥

बीरं जा बर बीर भीमति बरं कामं तनं उष्ण्या ॥
 पंथे वानति वान मानति वरं कुरनंद केवं कुरू ॥
 धाता मानय बीर वामन बलि पूरारवा भथेयं ॥
 तू पत्नी प्रथिराज कालांत रहं कालं जसं वर्तते ॥२१॥

॥ कवित्त ॥

सुनि आवत चहुआन । करिय अग्यौन सलष बर ॥
 हय गय लच्छि सुअच्छि । आदि उम्महिय राज दर ॥
 पट अंबर रुजरात्र । जेब नंगन जगमगिय ॥
 फुल्लिय मानहु संभि । चित्त चकचौधिय लगिय ॥
 चहुआन रत्त तोरन समय । लगन गोधूरक संधयौ ॥
 जानै किअर्क राका दिवस । इक्क थांन उगि रुंधयौ ॥२२॥
 जिम सावन भादव सिंधु । घुमरि घन घटा मिलत दुअ ॥
 जनु समुद्र अरु गंग । उमडि मिलि दुहुंन थोभ हुअ ॥
 जनु सुर अरु मुक्र । सिगिरिषिगननिगगनमिलि ॥
 जनु दधि मथि सुर असुर । करन मधुपांन षिभिर ठिलि ॥
 तिम संभरेस अब्बूनी । अनी बनी रस बिरस भरि ॥
 नग जोति जरकज दीप दुति । नहीं श्रवन बाजंव करि ॥२३॥
 पंच हस्ति मद बहि गिरंद । गरजंत मेघ जनु ॥
 तुरी बीस ऐराक । तेज तन अगिन पवन मनु ॥
 जर कंमर जंनेउ । हथ संकर नग मंडित ॥
 सत्त सुपम पर काल । हेम तं तन तन छंडित ॥
 वारोठि विवह वस्तह समभि । सह चक्रत पिष्यत रहिय ॥
 विवहार विबुध जोतिग गिनत । सलष कित्ति जात न कहिय ॥२४॥

॥ दूहा ॥

तोरन कर वर बंद तह । मुत्तिय अच्छित डारि ॥
 मनो चंद त्रिय भेष गरि । अच्छित अछ उछार ॥२५॥

॥ साटक ॥

बंदे विद कलस्स तोरन बरं तुगे रसं मन्मयं ॥
 सुषं साजति सक चक्रति कला निग्राह नु ग्राहनी ॥

जां निज्जै त्रैलोक उम्भति पुरे बदे कवी उप्पमे ॥
दुअ पासं दुअ नारि दिष्पत वरं मनो नैर वर दिष्पयं ॥२६॥

॥ कवित्त ॥

नृपति काज अलि दिषहि । अलिन दिष्पत नर नारिय ॥
जनु मिलतराज प्रथिराज । नयर विय वांह पसारिय ॥
जनु वन्ही गुर देव । सत्ति स्वाहा हाहा हुअ ॥
जै जै जै उच्चार । राज खनी रंजत रुअ ॥
पंमार सलष वंदत बलिय । दिष्पि कला मनमथ्थ पिथ ॥
दिष्पै सुत्रिया दुरि दुरि नयन । मनहु तरंग कि काम तिय ॥२७॥

॥ छंद पद्धरी ॥

चित काम वीर रज्जिय और । संकुर्यौ जांवि मनमथ्थ ज्येर ॥
दुरि दिषे बाल भीनेति वस्त्र । उपमान चंद जंपंत तत्र ॥
जाने कि जार परि मध्य मीन । पुज्जै कि दीप भोडल प्रवीन ॥
इक करन पलाटि इक करन लंत । घुंघट्ट बदल लज्जा सुभंत ॥२८॥
घुंमलिय रेंन जनु बदल जोट । उभकंत चंद जनु आनि कोट ॥
कर उंच बाल अच्छित्त उछारि । जनु कमल बाइ बसि ओस भार ॥
गावंत गान बहु विधिसवारि । कलयंठ कंठ जनु रति धमारि ॥
मुसकंत हास दिषियै विसाल । विकसंत कमल जनु चंद ताल ॥
तनु ऐंठि मैंठि भोहै कि बाल । मूरख्यौ मैन जग वही प्याल ॥२९॥

॥ दूहा ॥

कलस बंदि सुभगा सिरह । महु र मद्धि सय मेलि ॥
बहुरि सुहाग सुहागिनी । वई कांम रस बेलि ॥३०॥
कनक थार आरति उदित । सुभग सुवासिनि लाइ ॥
जनु कि जोति तम हर परह । नव ग्रह करत बधाइ ॥३१॥
महु र पंच सै थार धरि । दुति दूलह जिय जांनि ॥
कांम कसाए लोइननि । हन्यौ मदन सर तांनि ॥३२॥
सषिन ओट सलषह घरह । दूलह दुति दग देषि ॥
कोटि काम छवि पिष्पि पिथ । जनम सफल करि लेषि ॥३३॥
महल भुंड महलनि बहुरि । जनवासह जुरि जांनि ॥
सोभि साम सामंत सह । जनु बिटन शनि भांमि ॥३४॥

॥ छंद पद्धरी ॥

बहुरी बरात जनवास थान । छवि सोभ सुवन भुवभंति भान ॥
 संग सुभट सामंत सूर । बलवंत मंत दिषियै करूर ॥
 अंग अंग अंग उल्हास हास । जनु लच्छि लाह सोभा प्रकास ॥
 सत षन अबास साला सुरंग । सुभथान जैत आबू दुरंग ॥३५॥
 जालीन गोष सोभा न पार । रवि सोभ क्रांत क्रनन प्रसार ॥
 पंच रंग ब्रन चित्रत सुवेस । बहु गरथ रूप भंडित जुदेस ॥
 रेसम गिलम दुल्लीच मंडि । तिन जोति होति दुति चित्र षंडि ॥३६॥
 द्वादसह सेज विछाय पंचि । तिन ढिगग मूढ गादीय संचि ॥
 प्रति सेज सेज फूलन अमार । तिन सोभ गंध रंग रंग पार ॥
 इक लाष पांन बीरा बनाइ । घनसार मद्धि बीरन लगाइ ॥
 कुंमकुमन कुंभ जहं तहं छुटंत । वातीन अगार धूपन लुटंत ॥
 कर्दमन जषप मचि कीच भूमि । नाना सुरंगे रहि गंध धूमि ॥
 मस्साल दीप प्रजरि फुलेल । केतकी करन वेली गुलेल ॥
 ऊडत कपूर पवनं पषांनि । तिन सरस गंधि सक्कि न बषांन ॥
 सूरंत क्रांति सोभा विसाल । सोमंत जुरे तहं श्रव भुआल ॥३७॥
 प्रथिराज कुंअर कुअरन नरिंद । धरि भूप रूप अवतार इंद ॥
 मनु कांम रूप रति भ्रमन चित्त । अश्विनि कुमार ससि सोभ मित्त ॥
 नग कनक मंडि वासन विचित्र । ससि सूर सोभ सुभ सज्जि छत्र ॥
 वर विष्णु अण्णगज गाह धारि । जनु सोम उभय आरति उत्तारि ॥३८॥
 आसंन अस्स प्रथिराज आह । तहां पंच सबद बाजे बजाइ ॥
 संग एक कुंअर जल पान धार । ड्यौढी न रुकि सामंत भार ॥
 गुर राम चंद कवि ढिगग आइ । परधान कन्ह काइथ अताइ ॥
 पुनि कन्ह काक गोइंद राइ । परिपुर्न क्रोध जे लगत लाइ ॥३९॥
 पुंडीर धीर पावस्स संग । दाहिंम दूव जम जार जंग ॥
 जैतसी सलष लषनह सिव । छिति छत्र ध्रंम जे इषि रंध ॥
 वलिभद्र सिंघ कूरंभ राइ । अनि नांम सूर कित्तक गिनाइ ॥
 प्रथिराज इंद दिकपाल सूर । अंग अंग बद्धि सब जोति नूर ॥४०॥

॥ दूहा ॥

गवष जाल महलनि महल । फिरे चारु मन सर्व ॥

सौंज सोभ अंतन लही । दिष्यत भग्गत गर्व ॥४२॥

महलनि सालनि महल मंडि । दासी सालनि गांन ॥
मंडप मंडित वेद धुनि । सुभटन सोभ समान ॥४३॥
जहां तहां आनंद उमग । अनैग उछाह अनंत ॥
वंस छत्रीस छत्रीन छह । भाट विरह भनंत ॥४४॥

॥ छंद मोतीदांम ॥

गहने नग जोतिन हीरन लाल । पटंमर पूर भरपिय भाल
मनि मानिक मोतिन हीरनि हार । भगीरथ भंति हिमगिरि धार ॥
रितं रित भूपन भांति अनेक । धरे धन पंतिय आनि धनेक ॥
रँग रंग बारनि बारनि बार । धरे नवला नष भूषन भार ॥
तिते सब संचि सवारिस ओप । भलंमल भालन ढालन नोप ॥
सकुंकम कूपन वंदिन पोति । सुहाग सुमंगल अष्टन होत ॥४५॥

॥ दूहा ॥

अष्ट मंगलिक अष्ट सिध । नवनिध रत्न अपार ॥
पाटंबरे अंमर वसन । दिवस न सुभभहि तार ॥४६॥
फिरिय चार करि फिरिय सब । भोजन कारन बोलि ॥
भाव भगति आदर अमित । देव पूजि सम तोलि ॥४७॥
जनवासें पधराइ बर । बरी सिंगार अरंभ ॥
जुरि जुब्बन सुर सुंदरी । जे रस जानत डिंभ ॥४८॥

॥ छंद त्रोटक ॥

बिन बस्तर अंग सुरंग रसी । सुहलै जनुसाष मदन कसी ॥
लव लोनइ लोइ उवट्टनकौ । कि बस्यौ मनु कांम सुपट्टन कौ ॥
द्रिग फुल्लिय कांम विरांमन के । उघरे मकरंद उदै दिन के ॥
बिन कंचुकि अंग सुरंग षरी । सुकली जनु चंपक हेम भरी ॥४९॥
सुभई लट चंचल नीर भरी । तिनकी उपमा कवि दिव्य धरी ॥
तिन सों लगि के जल बूंद ढरै । सुछटै मनु तारक राह करै ॥
जु कछू उपमा उपजी दुसरी । मनो माटय स्यांम सुमुत्ति धरी ॥
अति चंचल हूँ बिछुटै मुषतें । मनो राह ससी सिसुता बषतें ॥५०॥
सुमनो सति स्वात असुत्त इयं । तिनकी उपमा बरनी न हियं ॥
कबहूँ गहि सुक्त सिषंड बरें । मनो नषत केसन सिंदु सरें ॥
जु सितं सित नीर लिलाट धसैं । सुमनो भिदि सोमहि गंग लसैं ॥

जल में भिजि मूँह कला दुसरी । सु लरै मनु बाल अलीन षरी ॥
बुधि चित्त उपम कितोक कहौ । जिन पाट अमै ब्रत वेद लहौ ॥५१॥

॥ दूहा ॥

मयति मत्त अस्नान करि । सुभ दंपति दिन सांधि ॥
चाहुआन इछिनि बरन । मयन रीति अवरोधि ॥५२॥
करि मंजन अंगोछि तन । धूप बासि बहु अंग ॥
मनों देह जनु नेह फुलि । हेम मोज जन गंग ॥५३॥
तन चंपक कुंदन मनो । कै केसर रंग जुक्ति ॥
पीय बास छबि छीन लिय । और छीन सब जुक्ति ॥५४॥
अंग अंग आनंद उमगि । उफनत बेंनन मांफ ॥
सषी सोभ सब बसि भई । मनो कि फूली सांफ ॥५५॥
निरषत नागिनि बसि भई । किनर जष कितेक ॥
सब सोभा ससि सांनि कै । सांची इछिछिन एक ॥५६॥
प्राग माघ अस्नान किय । गज गंजे घन घाइ ॥
विश्वनाथ सेए सदा । पृथ्वीराज तो पाइ ॥५७॥

॥ कवित्त ॥

कमल भाल जनु बाल । मकर कर मंडि इछिनिय ॥
निरषि नैन प्रतिबिब । करहि निवछार निछिनिय ॥
प्रमुदित अगनि अनंग । कोक कूकन उच्चरत ॥
एक रमन रस रंग । बात बातन मुच्चारत ॥
गंधअर वख गहनै करनि । हास भास मंडीर रिय ॥
तिन मध्य पवारी पिषियै । जनु विधिना अप्पन घरिय ॥५८॥
श्रवननि लगत कटाच्छ । जनु पवन दीपक अंदोलति ॥
मुसकनि विकसत फूल । मधुर बरसति मुष बोलति ॥
इठलति अलसति लसति । सुरति सागर उद्धारति ॥
रति रंभा गिरजादि । पिषि तां तन मन हारति ॥
तिह अंग अंग छवि उक्ति बहु । छंद बंध चंदहु कहिय ॥
जीरन जुग महि अजर इह । कल एक कीरति रहिय ॥५९॥
कमल विमल लज्जा सुगंध । बाल विस माल उर ॥
भूषन सोभ सुभंत । मनो सिंगार सुचिर घर ॥

भूषन सोभ सुभंत । मनो सिंगार सुचिर धर ।
अलप जलप रति मंद । चंद बारुनि कुल ताभनि ॥
सो इंछिनि पामार । राज ललिय अति सारनि ॥
सत च्यारि बरष बरनि सुंदरिय । सुर विसाल गावत गरज ॥
चहुँआन सुअन सोमेस कहि । विधि सगपन साई अरज ॥६०॥

॥ छंद मोतीदाम ॥

सजे पट दून अभूषन बाल । मनो रति माल विसालति लाल ॥
धर्यौ तन वस्त्र सुकोर कुआरि । मंडी जनु सिभ मनमथ रारि ॥६१॥

॥ छंद कंठाभूषना ॥

इक गावही रस सरस रस भरि विमल सुंदर राजही ॥
मनो वृंद उडगन राति राका सोम पाति विराजही ॥
इक त्रित रंगन काम अंगन अजस लज्ज कि सुंदरी ॥
मनो दीप दीपक माल बालय राज राजन उच्चरी ॥६२॥
सुभ सरल बांनिय मधुर ठानिय चित्त भंजय जोगय ॥
दृग निरषि निरषि कटाच्छ लगहि जुक्त रंभन भोगय ॥
अलि रूप नयन मनहु वयन चलिहि तिषि कटाषय ॥
छुट्टंत निकरहि वार पारह करत तकि तनतच्छय ॥६३॥

॥ कवित्त ॥

विधि विवाह दुज करिय । करिय तन अंग वाम जन ॥
निरषि नयन मुष कंति । भयौ रोमंच खब्ब तन ॥
फुलिग नयन मुष वयन । भयौ आरुढ़ काम मन ॥
चित बसीकरन समह । भयौ आनंद खब्ब तन ॥
अभिलाष मिलन हित हिलन मन । का कविंद कवितह करै ॥
प्रथमह समागम मिलन को । बहुत अडंबर विस्तरै ॥६४॥

॥ दूहा ॥

सोंधा सुगंध घन डंमरी । सुमन सुदिष्ट पसार ॥
धूप अडंमर धुंधरिय । भल मल जल समढार ॥६५॥

॥ छंद पदरी ॥

बरबग मग्ग चिहुँ दिसा दिषि । जहाँ तहाँति सुमन अति बैठि पिषि ॥
कच मग्ग भूमि चिहुकोद गस्सि । नारिग सुमन दारिम विगस्सि ॥

प्रतिबिम्ब तास दिषिय सरूप । उप्पम एम जपै अनूप ॥
 नव बधू अंग नवजल प्रवेस । मुसकंत दंत दिषिय सुदेस ॥६६॥
 प्रतिबिम्ब चंप देषे फुलीन । दीपकक माल मनमथ्य दीन ॥
 उप्पम और उर एक लगि । संजीव मूरि जनु जोति जगि ॥
 हल हलै लता कछु मंद वाय । नव बधू केलि भय कंप पाय ॥
 उपमां उर कवि कहीय तांम । जुब्बन तरंग अंगि अंगि कांम ॥६७॥
 पाटीन दिषि चकचौंधि होइ । ससि परह उठिठ घन घटा दोइ ॥
 सुभ भाग सरल सूधी सुबानि । ससि क्रम चली घन छेकि जानि ॥
 फुल्ले सुगंध के वरनि फूल । देषंत बग पावस्स भूल ॥
 घन वर अनंद अगें निसब्ब । जनु रंक इच्छ पासै सुदब्ब ॥६८॥
 नल नलनि नीरू चहवचनि उद्धि । धर धार गंग जनु उठि बिरुद्धि
 बिट बिटनि बेलि भुलि बेल फुलि । जनु काम ग्रह बाग तर छत्र भूलि ॥
 कदलीन पत्र हलि पवन जोर । जनु करत पपा नृप पिथ्य और ॥
 निरतंत केक केकीन संग । पावसह जानि गिर रभत रंग ॥६९॥

॥ दूहा ॥

नंदन वन वैकुण्ठ जनु । इंद्र लोग सुर बाग ॥
 वृंदावन भूलोग जनु । सोभा सुभग सुभाग ॥७०॥

॥ गाहा ॥

तिहि थांनं रजि राजं । उत्तरियं बीर सा साजं ॥
 सब संबल वित्थान । जानं बुद्धाईं बीजयौ चंदं ॥७१॥

॥ कवित्त ॥

कै केंद्री गुर राज । भान सत्तम अधिकारी ॥
 भान नवम पृथिराज । राह अष्टम अधिकारी ॥
 बर वज्जी नीसांन । बंदि लीनं नृप राजं ॥
 प्रीय त्रिया हित बंध । सोई इंछिनि बर पाजं ॥
 त्रियांह तात अरु बाल सह । उच्चरें मुप इंछिनि सुनहि ॥
 धनि धनि गवार पूजा लह्यौ । सुघर सुबर सुंदर समहि ॥७२॥
 ब्रह्म वेद अद्धइय । अग्नि होतय बर राजय ॥
 स्वाहा अग्नि विवांह । रत्ति कामह गुन गाजय ॥
 दुहिति नाम दुहु रिषि । दुहुति परहं दुहुं गोती ॥

राजं गुरु उच्चरै । सलष चहुँआन सकोती ॥
 अनेक भाव दिषपहि सुदिव । दिव दिवांन दुंदुभि बजइ ॥
 प्रथिराज राज राजन सुबर । तिहित लषै रतिपति लजइ ॥७३॥
 कुंदन ओपति अंग । मंग जनु चंद किरनि सिर ॥
 बैनी सुभग भुजंग । फूलमनि सीस मीस थिर ॥
 पटिटय घुटित मैन । तिमिर कज्जल छवि छीनिय ॥
 भुअजुग गोस धनुष । वदन राका रुचि भीनिय ॥
 सुक नास नैत फूले कमल । कंबु कंठ कोकिल कलक ॥
 दुल्लह सुचित्त फंदन मनहु । फंद मंडि रषिय अलक ॥७४॥

॥ दूहा ॥

फुनि पंडित मंडप मंडिय । वेद पाठ आधार ॥
 षट करमी सरमी अनिध । गुर संगह गुर भार ॥७५॥
 तिन दूलह मंडप बुलिय । हम सत घमस निसांन ॥
 जनु बहल ब्रज किस्न पर । सुरपति बहुरि ऋषि रिसांन ॥७६॥
 देषि सोभ प्रथिराज त्रिय । बारत राई नौन ॥
 हर्ष हास मुष चप उदित । जनु कमल विकसरवि भौन ॥७७॥

॥ कवित्त ॥

देसन देस नरेस । भेस अमरेस अमर भति ॥
 सोल सत्त गुनवंत । दांन षग कहन कोन मति ॥
 जरकस पसम जराउ । गंध रस सरस अमीवर ॥
 तेजवंत उहार । बडम विवाहर ग्रंथ भर ॥
 मंडप जान दुअदिसि मिलत । हास तर्क जात न गन्यौ ॥
 दीपतिनगनि निसिदीह भय । वर दाई दिव वर मन्यौ ॥७८॥

॥ दूहा ॥

साल अटा जालिन गवष । त्रिषत नव रनिवास ॥
 छत्र छाह छवि करत जित । भमर मत रस वास ॥७९॥
 नग माती गहने अगन । गिरत न सुद्धि सम्हार ॥
 कांम लहरि छवि छोल उठि । दुति दरियाव बेपार ॥८०॥
 मंगल गावत भुमकनि । कोकिल कंठी नारि ॥
 सुघर पुरुष जोवन छके । सुनहि सुहाई गारि ॥८१॥

पटां बैठि पट गंठि गुह । पूजे प्रथम गनेस ॥
 दुव कुल वारि बिचार कर । व्याही बांम नरेस ॥८२॥
 ग्रहन पूजि ग्रहदेव पुजि । पूजि अगनि दुज देव ॥
 साषोचार उचार धुनि । प्रसन भए नृप बेर ॥८३॥
 चंद सूर तहां साधि दिय । बन्ह बारुन बुध वाइ ॥
 प्रोहित गुर उपदेस करि । बांम अंग तब आइ ॥८४॥
 पढि संकलप विकलप तजि । भजि भगवति भगवंत ॥
 तम सु पाइ परसांद करि । चिर जिअौ इछिन कंत ॥८५॥
 अबूबूपति पट गंठि त्रिय । विनय जोर कर कीन ॥
 इह कन्या नृप सोम सुत । दासपन पन दीन ॥८६॥
 कहो कन्ह तब जैत सम । मंडन संभरि गेह ॥
 ज्यां गवरी सिव लच्छि प्रभु । त्यों तन बाढौ नेह ॥८७॥
 लगन साधि आराधि नृप । पुनि ज्यौनारि जिआइ ॥
 छ रस अंन अंतन लहौ । क्यों कबि कहै बनाइ ॥८८॥
 अगनि पक्व घृत पवन कर । दूध पक्व बेपार ॥
 नेल पक्व लषियै नहीं । जहं तहं लूट अमार ॥८९॥

छंद भुजंगी

रहस्यं रहस्यं अनेकंत भंती । धनं जोति मिष्टानं पानं प्रभंती ॥
 उडंदं पुडंदं गुडंदंति मासं । किते ब्रंन प्रंगं किते बीर भासं ॥
 किते स्वाद स्वादं प्रथी देव बंछै । तहां केवलं ब्रंनि आवत्तं गंछै ॥
 मरे एक वारं अतं बंड मद्धी । दिषे स्वाद राजं चलै देव बंधी ॥९०॥
 घनं अंमरं डंमरं दिसि प्रमानं । उठै जत्र तीनों सुगंधं निधानं ॥
 अंगं अंगं अंगं सलपन नारी । महा लालचै कम वसु भौ निनारी ॥
 हथं लेव राजं सुदंपत्ति बंधे । मनो मिस्स अंगं गुरं जित्त संधे ॥
 बंधे अंचलं संचलं इन प्रकारं । मनो बंधियै मौन मनमथ्य धारं ॥९१॥
 लियौ हथ्य राजं त्रिया हथ्य सोहै । मनो पैसि सत पत्र कमोद सोहै ॥
 जनं अंग अंबं बरं मालधारी । मनो काम अंगं जु विश्वा पसारी ॥
 छितं छित्त राजै नरं नाह नारी । मनो जीवनं काम लज्जी उधारी ॥९२॥
 परं पुब्व कथं कथै कबिश्च चंदं । रही लजि मानो रत्ति फिरि दन हं ॥
 दियै तिलक दद्धि अछि अछत्त सारे । मनो उगि अंकूर सुष सेन भारे ॥
 दिषै कंकनं हथ्य चहुंआन राजै । मनो रत्ति बंध्यौ दई छाप छाजै ॥
 रहै एक गेहं घरी अद्ध भारे । तहां वेद मंत्रं दुजं जा उचारै ॥९३॥

॥ कवित्त ॥

सुभत बीर तन तांम । बाल राजै दिसि वामं ॥
मनहु मुत्ति पहिचान । रत्ति बंधी कर कामं ॥
अति सोभा सोभई । चंद ओपमं तहं वर वर ॥
मनों मकर मकरेस । आय चंपाई अप्प घर ॥
सज्जे सुरत्ति मनमथ्य वर । कै इंद्रानी इंद्र परि ॥
संप्रति लच्छ लच्छिय सुवर । संप्रति तन सज्जेउ वर ॥६४॥

॥ वृह्वा ॥

वर सोभे वर राजपति । लिय दच्छिन हत वामं ॥
मनों व्याह पूरन करै । सुव्रित वीरतम हामं ॥६५॥
परनि बीर प्रथिराज वर । बहुत कहै रस जोइ ॥
कवि वर वरनत नां बनै । वर भूषन तिन गोइ ॥६६॥

॥ छंद पद्धरी ॥

लज्याति मांन गुन प्रव कटाछ । अलपहति जलप सुलपहं सुलाछ ॥
भोर भर अभय भंय सील नील । सरसात पिम रस पिम चील ॥
गुंजंत ग्राम सोभिल कुआंरि । तिहि हरत हरनि मनमथ्य रारि ॥
तन सात नितंबनि तहं प्रमान । वर हरै वरनि पिय लटि प्रमान ॥
सित असित सुवृत्त कटाछ बाल । शृंगार मध्य भूषन रसाल ॥
रस हास मध्य शृंगार होइ । संकर सुभाग उप्पनै लोइ ॥६७॥

॥ साटक ॥

कामं जा गढौइ लज्ज गढने भय भ्रत्त भय कोटकं ॥
घूघंटं पद डोढि वानति बले ऊधी सुकागछ रसे ॥
जाति जात न जाति जोगित वरं भंज मनं विश्रमं ॥
नां दीसंत गता गतेस सैनं द्रुगं चलं निश्चलं ॥६८॥

॥ छंद ओटक ॥

वरनं गुरु अछिछर अंति पयौ । इति तोटक छंदय नाग गयौ ॥
त्रिय नाग सुबहिय बाहनयं । षग पत्ति विपत्ति सुगाहनयं ॥
वरनं वरनं वरनीन कथं । सु चह्या जनु मेष प्रथम रथं ॥
प्रग अंचल चंचल बाल ढंके । तिहि काम बिरामन बांन थुके ॥६९॥

नव बास सुनूपुर सद गुरं । नृप आगम जाह बधाइ धरं ॥
 गज ज्यौं मनमत्त जंजीर जरी । क्रम निठूठत निठूठ्य पाइ भरी ॥
 दस पंच सषी नृप पास गई । ति मनो सुष श्रीफल हाथ दई ॥
 करुनातिमुची रस भौरसता । श्रम भौ अभिलाषरुघ्नजिता ॥१००॥
 नृप पुठ्ठ मुपं अवलोक करे । सु मनो धन रंक विलोकि गुरै ॥
 ति कंही न बनै कविचंद कथा । सु लजै रसना अरु बोर जथा ॥
 सुकळूक कहों दिठि क्रम क्रम । सुमनो मनता बरनी न भ्रमं ॥१०१॥

॥ दूहा ॥

ऐन सैन रति मैन सय । प्रथम समागम बाल ॥
 नेह देह दुअ एक हुआ । परे प्रेम रस जाल ॥१०२॥

॥ गाहा ॥

इत्तं सुष गनिज्जै । लज्जीजै जाह्यौ कब्बी ॥
 ज्यो वारिज शिपनं मभं । सुभूमै ना यहि गरुआयं ॥१०३॥
 मूलं वर मकरंदं । विजो पुर षाई सुंदरो वीयं ॥
 मालचि दंपति वासं । चहुआनं वीरयौ पत्ती ॥१०४॥
 जं भ्रम भ्रमैति चित्तं । आवै नठ्ठेय ग्यानयं चितयं ॥
 जं भ्रमि भ्रमि सह रूपं । अवलोकं इछनी करियं ॥१०५॥
 इक्क जगो विस वाले । काम मयंक पयौ द्विगयं ॥
 जानिज्जै गगन सैसं । नैनायं जोग व सनायं ॥१०६॥
 उअर उरोजति सद्धे । बुद्धी बालाय दिठ्ठयौ नैनं ॥
 कुच तुछ अंकुर उट्ठे । मनो प्रीतिम विभ्रावहीयौ चढयं ॥१०७॥

॥ चौपाई ॥

नैननि प्रथम प्रमानिय पुढ । सेवालिय रामावलि रुढ ॥
 अग्यानय जोवनति कुंआर । अब जान्यौ सैसव चलि भार ॥१०८॥
 इहिविधि मत्त गत्त भय रजनी । बाल लता बल्हम गहिसजनी ॥
 यो डग डगमग सुंदरि विरुभाई । ज्यो वेलिय अमलंब लहाई ॥१०९॥

॥ दूहा ॥

पांवारी प्रथिराज बर । पुनि जनवांसे जाइ ॥
 एक सहस हय हथिय बर । दीने तुरत लुटाइ ॥११०॥

होत प्रात जगिगय सलष । भंति अनेक तिभोग ॥
जु कछु देव देवंस मति । सो लभ्भै नहिं लोग ॥१११॥

॥ छंद भुजंगी ॥

सुइंदं सुइंदं सुइंदंति राजं । सुतौ देषियै कोटि कोटेक साजं ॥
लषं लष भाइं नटं नट्ट रागं । मनो देषियै यंद ग्रह ग्रहन आगं ॥
जिते तार भंकार नच्चे निनारे । मनो देषियै भानं ससि लष तारे ॥
सुभंगं सुतालं मृदंगं बजावै । हहा हूह सुगं सुगंधर्व गावै ॥११२॥
घनं पक्क षानं समानंत नेहं । करै प्रथिराजं अपं अप्प देहं ॥
करै राज राजंसवै व्याह काजं । मनो दिषिये राजसूजग्य साजं ॥
षरे अग राजं छिती छत्र जोरी । मनो उन्नयौमेव आषाढ कोरी ॥
फिरै दास भारी बुलै राग बैनं । मनो नभ्यसी मास कै बीज गैनं ॥११३॥
बजै ग्राम नारी छतीसों सुरागं । मनो बोलयं मोर आषाढ गाजं ॥
बजै घुघरू नारियं रंग भारी । मनो दादुरं जोति मनमथ्य सारी ॥
रंगे कासमीरं सवै वस्त्रधारी । किधों बहुलं रंग कै ग्रहन गारी ॥
किधों इंद्रबंदू चढ़ी नीर धारा । किधों राज वासंत भूपाल वारा ॥११४॥

॥ दूहा ॥

गति त्रिजाम भय प्रातवर । इह मनुहार प्रमानं ॥
बर दिष्यौ चहुआन नृप । रत्ति काम उनमान ॥११५॥

॥ गाहा ॥

रत्ति काम दुअ दाहं । कै दुःषंकरी कत्तरी बाले ॥
सौ इंछनि पांवारी । लस्भी नृप मुक्तिका रूपं ॥११६॥

॥ छंद हनुफाल ॥

इति मुकति सकति सकोर । जिन लभि न पारस चोर ॥
जिन काम बांन भकोर । गुन मुदित मुदित सथोर ॥
चित भित्त भित्तह जोर । मनो उदय निषत्रन चोर ॥
सुष जुगति भुगति उपाय । का करिहि मुक्ति अभाइ ॥११७॥
सुष करन दिन प्रति जीह । दिन सुफल घरियति ग्रीह ॥
प्रति राज राजन जोर । पावार सलषति ओर ॥
मनुहार मंडित थोर । नृप चलन ग्रेह सजोर ॥
है गैति रथ बर बाजि । नृप दए दान विराजि ॥११८॥

॥ कवित्त ॥

सहस एक रथ साजि । दासि बिय तिपनि इक्क सधि ॥
 इक्क इक्क करि सथ्य । किरनि पंचौ प्रति प्रति बधि ॥
 सौ हाथी इह भांति । माल मुत्तिय उत्तंग बर ॥
 लच्छि पटंबर अंग । दए राजिंद राजगुर ॥
 इतनौ देत सकुच्यौ नृगनि । तौ दिनता चरनन गहिय ॥
 प्रथीराज राजन सुवर । सलष फेरि चल्यौ ममिय ॥११६॥

॥ दृष्टा ॥

पंच दिवस च्यारौ बरन । भुजत अंन अपार ॥
 छरस अंन छहरितिन सुप । अब्बवै आचार ॥१२०॥
 पलकि चार अचार करि । समद करी सबसथ्य ॥
 है हथ्यी जरकस बसन । को कवि बरनै कथ्य ॥१२१॥

॥ छंद पद्धरी ॥

पहिराइ राइ पावार सथ्य । नह वुद्धि बरन बर विविध कथ्य ॥
 इक करी सत्त हय सोम राइ । औराक जाति जे पवन पाइ ॥
 सिर-पाव पंच जरकस पसंम । सूतरू पोत रेसम नरंम ॥
 सोइ बिदा कीन दूलह बनाइ । जमदार सोंपि संभरि गनाइ ॥१२२॥
 कलभूत कलस दस गढ़ित हथ्य । इक उंच कुंडि जल न्हान सथ्य ॥
 दस थार कनक प्रतिबिंब सूर । बाटका बीस बिअ अभुत नूर ॥
 ता सक्क पंच दुव मनह थार । बाजौठ एक हिम जटित लाल ॥
 पालकनि हेम रेसम निगारि । अनि ठांम नन्ह को लहै सार ॥१२३॥
 कठलोंनि बीस सोवन मटाइ । पल्लान ऊच दाबन चढ़ाइ ॥
 मन बीस पंच इह सोंज श्रव्व । जिन कोय करौ छित्रीस प्रव्व ॥
 दुअ हथ्य साजि माभे जिजीर । रूपेन साज सज्जे बजीर ॥
 हंडवाइ बीस मन साजु सुद्ध । उज्जल रज रज्जक जनु उफनि दूध ॥१२४॥
 दस सहस हेम दासीन संग । तिन देवि रंग रंभ होत भंग ॥
 सामंत सत्त इक रस्स अगग । पहराह तिनह नृप नमिय पगग ॥
 इक तुरी जात औराक थान । अगगीय अंग पग पवन मान ॥
 इक इक्क बटुअ मालाति इक्क । मुद्रकी इक्क इन पुहचि किक्क ॥१२५॥

सिर-पाव उंच जरकस अनूप । तिन दिष्पि होत हैरांन भूप ॥
 बंभन बनंक कायथ्य संग । पसवांन लोग जे रषिक अंग ॥
 लघु दिघ्घ और असवार पाल । करि सुमन सव्व अब्बू भुआल ॥
 पंच सै सोम रनिवास नांम । रेसंम सूत गनि पंच ठांम ॥१२६॥
 सब हर्ष सहित समदे नरेस । सजि चले सुभट सब अप्प देस ॥
 इंछनिय मद्धि पिथ बैठ ढाल । गज गाह घुरें दुहुँ अंग भाल ॥१२७॥

॥ वृहा ॥

चल्यौ व्याहि संभरि धनी । मंगन भए निहाल ॥
 पुहचावन घन संग भए । नृपगुन चवें रसाल ॥१२८॥
 पंच कोस परथिथ्य कहु । बिदा मंगि अबु ईस ॥
 ओर देन तुम सोंभ कह । बांम तुम्हें हम सीस ॥१२९॥
 नशमि मंडि बहुरे घरह । बे सज्जे अप देस ॥
 नृपति व्याह दुअ रस रह्यौ । हिम गिरि जांनि महेस ॥१३०॥
 आरिज आरिज सलष तें । इंछनि इच्छा पूरि ॥
 भुअ मंडल मंडित दिनह । सिर दधि अछित्त जूर ॥१३१॥
 चलन राज प्रथिराज बर । बरनि पत्त बर राज ॥
 मद्धि अमोलक सुंदरी । डोला सठिठत साज ॥१३२॥
 यौ आयाँ नृप प्रेह बर । सुनि अवाज त्रिय कांन ॥
 मानौ बीर दुहाइयां । कांमहि नषन बांन ॥१३३॥

॥ कवित्त ॥

सोमेसर संभरिय । राज आवत प्रथिराजह ॥
 है गै रंभ सुसाज । इंद चल्ल्यौ लष साजह ॥
 कोटि कोटि मनु इंद । इंद दिष्पो इंदासन ॥
 एक एक दंपतिय । बरह बंधै विवि साजन ॥
 दुज मान वेद मंगल त्रियह । मुत्ति अछित्त बंदहि सुबर ॥
 नृप मौर मुष्प मुत्तिय लगहि । सो ओपम कविराज धर ॥१३४॥

॥ अरिखल ॥

लगत मुत्ति अछित्त सु नृपती मुष बरं ।
 मनौ भान उनघेह सुतारक ऊबरं ॥

मिलि सो फिरि चलहि ससि गन मान को ।
मानहु लषट्टै जानि सु आनै आनको ॥१३५॥

॥ दूहा ॥

बंदि लियो बरनी सुबर । त्रिया हेत लजि गांन ॥
मानों वैसंध सुंदरी । चलत समप्पत दांन ॥१३६॥
बहुरि सुकी सुक सों कहै । अंग अंग दुति देह ॥
इंछनि अंछ वषांनि कै । मोहि सुनावहु एह ॥१३७॥

॥ छंद हनुफाल ॥

धन धवल गावहि बाल । मनमथ्य तिथ्य विसाल ॥
बहु फुल्लि केवर फूलि । बग बैठि पावस भूनि ॥
धन धवल दै मनमथ्य । आनंद अंगनि सथ्य ॥
जनु रंक पाये दब्व । नल नलन नीर चहब्व ॥१३८॥
धर धार गंग कि उठिठ । फिर नम्भ परसि अपुठिठ ॥
बट बटप बेलिय भुल्लि । ग्रिह बाग तरु छत्र भुल्लि ॥
नृप परनि पुत्रि पवार । जनु जुवन सैसुव रारि ॥
इह रूप राजित देव । इन्द्र इन्द्रनी अहमेव ॥१३९॥
सोइ सलष राज कुंआरि । नृप लसी ब्रह्म सवारि ॥
लछि लच्छि पूर सहज्ज । व्रत नाथ व्रत करि कज्ज ॥
कविराज ओप प्रकार । आवै न कोटि बिचार ॥
सिष नषष ब्रंन सुरत्त । किम करय मंद सुमत्त ॥१४०॥
जगि रंग जोवन गौर । वै स्यांम राजत और ॥
बनि केस देस सुवेस । कवि कहत उप्पम तेस ॥
चढि मेर नागिन नंद । ससि गहत संमुष फंद ॥१४१॥
उप्पम कवि कहि बाम । जुबून तरंग अंगि काम ॥
पाटोय चकचुंधि होइ । सिसि परह उठि घट दोइ ॥
लिल्लाट आउ प्रकार । मनमथ्य अंगन प्यार ॥
तिन मद्धि मुत्ति तिलक्क । कवि कहत ओपम थक्क ॥१४२॥
हरि कठिन गंगय मांन । ससि भेद ग्रस चलि जान ॥
कविराज ओपम दीय । दछि पुत्रि ससि मिलि हीय ॥
तिन मध्य अंगमद व्यंद । कवि जंपि उप्पम छंद ॥
ससि उड़त मद्धि कलंक । हरु अत्त अंकह अंक ॥१४३॥

लछिन्न हरि तन ताह । ससि थांन बैठो राह ॥
 अति हलत चपलह भौह । कवि कहत उप्पम सौह ॥
 ससि धरत जूप सु अँन । तिहि चलित चकित नैन ॥
 मन धरत उप्पम आंन । अमि संधि अलिसुत जान ॥१४४॥
 बर बाल नैन भकोर । ग्रह जियन बातह जोर ॥
 जिम भए भोरह चोर । मै भरै धाम भकोर ॥
 इक कही ओपम चाइ । पंजन कि उडि फल षाइ ॥
 जनु बाग छुटिद्य अँन । तिम होत चकित नैन ॥१४५॥
 सित असित नैन उचार । मनो राह तारक चार ॥
 तिन मद्धि सौभै रत्त । विधि धरिय मंगल गत्त ॥
 रसवास नासिक नीय । तिल पुहप चंपक दीय ॥
 मनो लज्जि मंजरि मध्य । कल प्रगटि दीपक सध्य ॥१४६॥
 नव रुलत मुत्तिय नास । तसु किंच ओपम भास ॥
 रस ग्रहन अमृत चाइ । तप करै ऊरध पाइ ॥
 मुष कीर सौमित जोस । जनु चुनत कनव्रत आंस ॥
 जगिनीय पुर मन रज्जि । कवि कही उप्पम सज्जि ॥१४७॥
 अध अधर रत्तसुरंग । ससि वीय रंग तरंग ॥
 उत्तंग रंग सुभाल । जनु फुलि कमुदिनि ताल ॥
 कै पक्क बिंब संभाल । सुक डसिय प्रसिय न आल ॥
 तिन मध्य दंतन कंत । जनु वज्र राजत पंत ॥१४८॥
 फुनि कही ओपम साज । सुत स्वाति सीपय राज ॥
 सति इक्क ओपन अछ्छ । बत्तेस लछ्छन लछ्छ ॥
 इक अलक सुम्मत मुष्प । कवि कहत ओपम सुष्प ॥
 ससि मुक्कि मधुरय अंक । बर भजत विभय कलंक ॥१४९॥
 जनु जनम धारा रेष । कै मिल नगी चलि सेष ॥
 कल ग्रीव रेष त्रिवल्लि । कवि राज ओपम भल्लि ॥
 ससि मिलत पुब्बय बैर । गुरदेव सेव सुसैर ॥
 गर पांति जोति विचारि । ससि चरन फंदय डारि ॥१५०॥
 ससि समर दंद प्रमांन । जिति राह बैठो थांन ॥
 कै सष श्रीवर जानि । कर अंगुलि इक थांन ॥

कालंक दिठवन जौर । कवि इक्क उप्पम दौरि ॥
 जनु कमल कोर प्रकार । सिसु भ्रंग बैठे बार ॥१५१॥
 रस सरस कुच कहि चंद । उर उकिर आनंद कंद ॥
 ससि बदन मदन सु जोर । चित रहै चाहि चकोर ॥
 कलिकाकि कंज अनूप । उर उदित रवनिय रूप ॥
 करि कलभ कुंभ प्रमान । छवि स्याम रंग सुदान ॥१५२॥
 गुन गांठ मुत्तिय माल । कुच परस कंत विसाल ॥
 विय सिंभ सीस कि चंग । चढि चलिय गंग सुरंग ॥
 नव रोम राजिय राजि । कही कवी ओपम साजि ॥
 मनो नाभि कूप प्रमान । भरि भूरि अमृत थान ॥१५३॥
 अमृत आवहि जाहि । पप्पील रंगहि चाहि ॥
 उर उदित सुभगय बाल । आनंग रस ससि बाल ॥
 जनु लछ्छि क्रीडे ताल । हिम फाब लगि रसाल ॥
 सुभ निरषि त्रिवली तेह । कवि चंद ओपम एह ॥१५४॥
 बय सिसु मिलनह बाल । सिढि मंडि कांम विसाल ॥
 रिपु उभै मुम्मिय आनि । छवि लंधि लंक प्रमान ॥
 नितंब उत्तंग रज्जि । मनमथ चक्र विसज्जि ॥
 पैरंग पिडिय ढार । सित सीत उष्ण तुसार ॥१५५॥
 नव रंभ गति विपरीत । छवि पंभ देवल जीत ॥
 गज सुंड सुलप सरूप । मनो कुंद कुंदन भूप ॥
 किधौ करम कोर प्रकार । तिन मद्धि उतरत ढार ॥
 मनो मीन चित्रत देह । छवि छरत पिडुर एह ॥१५६॥
 घन घुमि घुघर हेम । कवि कहो ओपम एक ॥
 मनोकमल सौरभ काज । प्रति प्रीत भमर विराज ॥
 कह कहौ अंग सुरंग । रति भूलि देषि अनंग ॥
 लषि लछ्छि पूर सहज्ज । चित्त वृत्त मानो रज्ज ॥१५७॥
 सो सलष राज दुआर । नृप लही ब्रह्म सवार ॥
 इन लछ्छि इछनिय रूप । कुल वधू लछ्छिन भूप ॥
 रति रूप रमनिय रज्जि । छवि सरल दुति तन सज्जि ॥
 रसि रसित रंगह राज । तिह रमन हुआ प्रथिराज ॥१५८॥

॥ कवित्त ॥

नयन सुकज्जल रेष । तषिष तिष्पन छवि कारिय ॥
 श्रवनन सहज कटाछ । चित्त कर्पन नर नारिय ॥
 भुज मृनाल कर कमल । उरज अंबुज कल्लिय कल ॥
 जंघ रंभ कटि सिघ । गमन दुति हंस करी छल ॥
 देव अरु जषि नागिनि नरिय । गरहि गर्व दिष्वत नयन ॥
 इंछिनी इषि लज्जा सहज । कितक सक्ति कविवय वयन ॥१५६॥
 दर्पन दल नष जोति । सुरग महदी मुचि रुरिय ॥
 एडी इंगुर रंग । उपम ओपियै सु संचिय ॥
 सो तिन सकल सुहाग । भाग जावक तल बंधिय ॥
 विकसित अंग अंग अंग । चारु मुसकनि वै संधिय ॥
 दिष्वंत नैन दंपति कनहि । हर्ष सोभ वर्पत अकल ॥
 रति कांम कांम गहि गछनिय । और उप्पम लुट्टिय सकल ॥१६०॥
 जेहरि नूपुर नह । सह घूवर कांतूहल ॥
 विछिय निसह निसाल । सह भिगुर कल कूहल ॥
 अगुठनि जटित अनोट । पोट कुंदन नग मंडित ॥
 निरपत द्रप्पन नैन । बदन बीरी रद पंडित ॥
 हाव अरु भाव संभ्रम विभ्रम । बड पुन्य करि प्रभु पिथ्य लहि ॥
 इंछनिय इच्छ अछर अवनि । सुनिय सोभ ससि कविव कहि ॥१६१॥
 जरकस घुवर घमंड । जानु रवि किन्न कदलि ग्रह ॥
 कसुंभ लरे नीसार । रंग छवि छंडि हंड हर ॥
 पीत कंचकी संचि । पंडि कस अंग उपट्टिय ॥
 कंकन कर बर बरत । गंध हरदीय उपट्टिय ॥
 आलोल नैत गति बचन बहु । सधिन सोभ मंडिय तनह ॥
 फुल्ली सु सांभ कवि चंद कहि । मनहु बीजु थरकी घनह ॥१६२॥

॥ दूहा ॥

सुनत कथा अछि वत्तरी । गइ रत्तरी विहाइ ॥
 दुज्ज कही दुजि संभरिय । जिमि सुप श्रवन सुहाइ ॥१६३॥
 आरिजु आरिजस लषहीं । सो इंछिनि इच्छा पूर ॥
 भुव मंडल मंडित दिनह । सिर दधि अछूछित जूर ॥१६४॥

शशिव्रता विवाह प्रस्ताव

पुच्छ कथा सुक कहौ । समह गंधवी सुप्रेमहि ॥
 स्त्रवन मंमि संजोगि । राज सम धरी सुनेमहि ॥
 इम चितिय मन मभिम् । (चित्र सख गंधर्व ईसह) ॥
 (कै) करो पति जुगनि ईसह । ईस पुजै सु जग्गीसह ॥
 शुक्र चिति बाल अति लघु सुनत । ततविन विस उपजै तिहि ॥
 देव सभा न जहुव त्रपति । नालकेर दुज अनुसरहि ॥१॥
 नालकेर दुज गहिय । द्वार जैजंद गयो बपु ॥
 करी पवर हे जमह । अप्प अंदर बुलाइ त्रप ॥
 नालकेर दुज आनि । कह्यो राजन अब धारी ॥
 देव सु गिरि त्रिप भ्रात । पुंज ससिवृत्त कुमारी ॥
 सो दइय बंध नृप वीर कहु । लगन मास दिन पंच वर ॥
 मुनि श्रवन एह गंधर्व कथ । चलयौ सु दछिन्न देव धर ॥२॥

॥ दूहा ॥

चलयौ सु दछिन्न देव गिरि । जहां शशिवृत्त कुमारि ॥
 त्रिपन मद्धि क्रीड़ा करन । समह बाल चितचारि ॥३॥

॥ कवित्त ॥

हेम हंस तन धरिय । विपन मद्धे विश्राम लिय ॥
 दिष्ण तास शशिव्रत । अतिहि अचरिज मानि जिय ॥
 बल कर गहिय सु तत्थ । हत्थ लै करि तिहि पुच्छिय ॥
 कवन देव तुम थान । कवन माया तन अछिय ॥
 उच्चर्यौ हंस ससिव्रत सम । मति प्रधान गन्धर्व हम ॥
 सुरराज काज आए करन । तीन लोक हम बाल गम ॥४॥

॥ कवित्त ॥

कहै बाल मुनि हंस । कवन हम पुब्व जम्म कह ॥
 कवन पत्ति हम लहँहि । लेप विचार लहो इह ॥
 तबै हंस उच्चर्यौ । सुनहि शशिवृत्ता नारी ॥
 चित्ररेष अपछरि । सगीन अति रूप धरारी ॥

तिहि गरब इन्द्र सम कलह करि । क्रोध देवबन्दी सुरम ॥
दच्छिन नरेस नृप तान बंधु । पुंज ग्रहै अवतार सुम ॥५॥

॥ चौपाई ॥

कहै हंस सुनि बाल बिचारी । पंग बधुर बीर सु पुत्तारी ॥
तिहि तु दई मातु पितु बंधं । सो तुम जोग नहीं बर कंधं ॥६॥
तेम रहै वर वरण इक्क महि । हय गय अनत भुभिभ है समतहि ॥
तिहि चार करि तुमहि आयौ । करि करुना यह इन्द्र पठायौ ॥७॥
तब उच्चरिय बाल सम तेहं । तुम माता सम पिता सनेहं ॥
मुभक्त सहाय अवरि को करिहौ । पानि ग्रहन तुम चित अनुहरिहौ ॥८॥

॥ चौपाई ॥

तब बोल्यो दुजराज विचारं । सुनि ससिवृत्त कथ इक सारं ॥
दिल्लीवै चहुबान महा भर । सो तुम जोग चिन्तयौ हम बर ॥९॥
सत सामंत सूर बलकारी । तिन सम जुद्ध सुदेव विचारी ॥
जिन गहियौ सब बर गज्जनवै । हय गय मंडि छंडि पुनि हिय वै ॥१०॥
गुज्जरवै चालुक्क भीमतर । ते दिन राति डरै जंगल धर ॥
बरन जोग तुम तेह विचारं । सुनि की सुंदरि हरष अपारं ॥११॥
तहाँ तुम पिता कृपा करि जाउ । दिल्लीवै अनुराग उपाउ ॥
मांस षटह हों वृत्तह मंडों । तथ्यु ना आवै तौ तन छंडों ॥१२॥
तब उड़ि चलयौ देह दिस उत्तरि । दिग ससिव्रत रषि निज सुंदरि ॥
जुगिनि पुर आयो दुजराजं । सोवन देह नग नग साजं ॥१३॥

॥ कवित्त ॥

जय किसोर प्रथिराज । रम्य हा रम्य प्रकारं ॥
सेत पश्य विय चंद । कला उदित तन मारं ॥
बिपन मध्य चहुआन । हंस दिष्यौ अप अषिष्य ॥
चरन मग दुति होत । हेम पछ्छी विय लषिष्य ॥
आचिज देषि प्रथिराज बर । धाइ नपति बर कर गहिय ॥
आपुब्ब दुज गति दूत कथ । रहसि राज सों सब कहिय ॥१४॥

॥ दूहा ॥

बिपन मध्य आचिज्ज इह । दिषि राज प्रथिराज ॥
धूत दूत कलधौत तन । हंस सरूप विराज ॥१५॥

संभ सपत्नौ नृपति पै । दूत सु जहव राइ ॥
 बर कग्गद नृप हथ्य दै । कहि श्रोतान बधाइ ॥१६॥
 राका अरु सूरज्ज बिच । उदै अस्त दुहु बेर ॥
 बर शशिवृत्ता सोभई । मनो शृंगार सुमेर ॥१७॥
 इन वै इन रूपह तरुनि । इन गुन आवै मान ॥
 सो बर बर कविचंद कहि । सुनहु तो कहूँ प्रमान ॥१८॥

॥ त्रोटक ॥

बय संधिरु बाल प्रमान व्रनं । कहि त्रोटक छंद प्रमान सुनं ॥
 बय स्यामऽरु शैशव अंकुरयं । अह अंत निसागम संकरयं ॥१९॥

॥ त्रोटक ॥

जल सैसव मुद्र समान भयं । रषि बाल बहिकम लै अथयं ॥
 बर सैसव जोवन संधि अती । सु मिले जनु पित्तह बाल जती ॥२०॥
 जु रही लागि सैसव जुव्वनता । सु मनो ससि रंतन राज हिता ॥
 जु चलै मुरि मारुत भंक्रिता । सु मनो मुरवेस मुरी मुरिता ॥२१॥
 कलकंठ सु कंठय पंप अली । गुन जंपि कवित्त सु चंद बली ॥२२॥

॥ कवित्त ॥

ससिर अंत आवन वसंत । बालह सैसव गम ॥
 अलिन पंष कोकिल सुकंठ । सजि गुंड मिलत भ्रम ॥
 मुर मारुत मुरि चले । मुरे मुरि बैस प्रमानं ॥
 तुछ कौपर सिस फुट्टि । आन किस्सोर रँगानं ॥
 लीनी न अभि नक स्याम नन । मधुर मधुर धुनि धुनि करिय ॥
 जानी न बयन आवन वसत । अग्याता जोवन अरिय ॥२३॥

॥ कवित्त ॥

पत्त पुरातन भरिग । पत्त अंकुरिय उट्ट तुछ ॥
 ज्यों सैसव उत्तरिय । चदिय बैसव किस्सोर कुछ ॥
 शीतल मंद सुगंध । आइ रिति राज अचानं ॥
 रोमराइ सँग कुच नितंब । तुच्छ सरसानं ॥
 बढदै न सीत कटि छीन ह्वै । लज्ज मानं टंकनि फिरै ॥
 दंकै न पत्त दंकै कहै । बन वसंत मन्त जु करै ॥२४॥

॥ दूहा ॥

श्रवनन भव श्रोतान नप । मन बंछै चहुआन ॥
मनु ससिवृत्त कुंआरि कौ । पर्यौ उरद्वर बान ॥२५॥

॥ कवित्त ॥

निसि नरिंद चहुआन । चित्त मनोरथ विचारै ॥
भई दीह सब निशा । निशा सयनंतर धारै ॥
सयनंतर ससिवृत्त । चाटु चटु बैन उचारै ॥
चारु चारु बर बयन । मान मानिनि संभारै ॥
दैवान मनोरथ चित्त बर । भव भव छअन कह करै ॥
भौ प्रात दूत पुच्छै नपति । जहोवै चित्तै धरै ॥२६॥

॥ दूहा ॥

बर बंध्यौ ससि वृत्त कौ । अरु नप भान कुंआर ॥
बे ही दिन कमधज्ज कै । नाम बीरवर भार ॥२७॥

॥ कवित्त ॥

चित्र रेष वाला विचित्र । चंद्री चन्द्रानन ॥
स्वर्ग मग्ग उत्तरी । चित पुत्तरि परमानन ॥
काम बान सुंजुरी । बाल अंजुरी सु लच्छिय ॥
मार कलह उत्तरी । पुब्ब अच्छरी सु लच्छिय ॥
लछिन वत्तीस लच्छी सहज । रति पति चित्त समंधरे ॥
संग्रहै वृत्त चहुआन कौ । गवरि पुज्ज दिन प्रतिकरै ॥२८॥

॥ दूहा ॥

बरनी जोग बरअ को । बर भुल्लै करतार ॥
तिहि कारन दुंढत फिरै । सत्त समुद्रह पार ॥२९॥
जा कारन दुंढत फिरत । सो पायौ दीलीस ॥
अब जहव ससिवृत्त चढ़िय । दीनी ईस जगीस ॥३०॥

॥ दूहा ॥

हंस कहै राजन सुनि । इह उतपति अनुराग ॥
श्रवन सुनौ संभरि सु पहु । कहौ वृत्त संलाग ॥३१॥

॥ कवित्त ॥

देवागिरि नृपभान । सोम वंसी सुतपै नृप ॥
 तिन अनंत बल तेज । बहुल है गै पैदल तप ॥
 नयर मध्य कोटीस । बसै बानिकक अनंत लछि ॥
 धर्म तप्पनह पार । न कोऊ दास रहै इछु ॥
 सा एक लक्ष पयदल पुलख । पग जोर धन बहै ॥
 जहव नारिद सब गुन कुसल । धन प्रताप दिन दिन लहै ॥३२॥
 तास पुत्र नरिन । पुत्रि ससिवृत्ता प्रमानं ॥
 दुअ अनंत सूरत्ति । रूप मकरंद सु जानं ॥
 भगिनि भ्रात दुअ प्रीत । पिता माता प्रिय मानं ॥
 अति उछाह रंग रमै । असन इक ठाम प्रधानं ॥
 सुव रिष भई सत्रहवरु दुअ । अति अभूत लच्छिन प्रबल ॥
 लालित सरूप पिय चंद सम । राजकुंअरि राजै अतुल ॥३३॥
 तिन राजन कै मंत्र । नाम आनंद चंद भर ॥
 तिन भगिनी चंद्रिका । व्याह व्याही सु दूरि धरि ॥
 नैर कोट हिस्सार । तास पित्रीय प्रमथ बर ॥
 अति सु प्रीति नर नारि । सुष अनुभवै दीह पर ॥
 कोइक दिवस भरतार वहि । तुच्छ दीह परलोक गत ॥
 आनई कहनि फिर अप्प ग्रह । अति सुदुष निशि दिन करत ॥३४॥

॥ दूहा ॥

अति प्रवीन विद्या लहन । गान तान सुभ साज ॥
 केइक दिन अंतर वहिग । गइ अंते बर राज ॥३५॥
 तिन संगह ससिवृत्त सुअ । पठन विद्या सुभ काज ॥
 देवि कुंअरि अदभुन अवय । रंजिन है अति लाज ॥३६॥

॥ कवित्त ॥

जब पित्रिन चंद्रिका । कहै गुन नित चहवानं ॥
 जेस पराक्रम राज । तेइ वरने दिन मानं ॥
 राजकुंअरि जब सुनै । तवै उम्भरै रोम तन ॥
 फिरि पुच्छै ससिवृत्त । सदि एकंत मत्त गुन ॥

जे जे सु पराक्रम राज किय । सोइ कहै पित्रिन समथ ॥
श्रोतान राग लग्यौ उअर । तो वृत्त लिनौ मुनौ सुकथ ॥३७॥

॥ दूहा ॥

यों वरष दुअ वित्ति गय । भइय वैस बर उंच ॥
तब कामन सु कलेव सुर । करे सेव सुचि संच ॥३८॥
हरि सेवा निस प्रति करै । मन बाचा क्रम बंध ॥
वर चहुआन सुकामना । सेवा ईस सुगंध ॥३९॥
बचन सिवा सिव वाच दिय । पति पावै चहुआन ॥
बर प्रमुदिय प्रथमाधिपति । दुअ सुपनंतर मान ॥४०॥
कै जानै भन अप्पनो । कै पित्रिन कै ईस ॥
और शिवा सुनि ईस प्रति । किय अस्तुति बर दीस ॥४१॥

॥ कवित्त ॥

दुअ प्रसंन सिव सिवा । बोलि हूँ पठय तुम्ह प्रति ॥
इह बरनी तुम जोग । चंद जोसना वान वृत्त ॥
ज्यों रुकमिनि हरि देव । प्रीति अति वढै प्रेम भर ॥
इह गुन हंस सरूप । नाम दुजराज भानय चर ॥
बुल्लिय सु पिता कमधज्ज नर । व्याहन पठ्यौ सु गुर दुज ॥
आवै सु भ्रात जैचंद सुत । कमध पुंज व्याहन सुकज ॥४२॥

॥ दूहा ॥

हवै प्रसन्न बहु पंगुरै । दियौ हुकुम सुअ बंध ॥
प्रेरि सत्थ जब अप्प पर । अति पर घर सुअ नंध ॥४३॥
सज्जि सेन चतुरंग नर । देवगिरि कज व्याह ॥
अति अगनित सथ द्रव्य लिय । नर उच्छव करनाह ॥४४॥

॥ दूहा ॥

कह संभारि बर हंस सुनि । कह जहों संकेत ॥
कोन थान हम मिलन है । कहत बीच संमेत ॥४५॥

॥ गाथा ॥

कह यह दुज संकेत । हो राज्यंद धीर दिल्लेसं ॥
तेरसि उज्जल माघे । व्याहन बरनीय थान हर सिद्धि ॥४६॥

॥ दूहा ॥

तब राजन फिरि उच्चरै । हो देवस दुजराज ॥
जो संकेत सु हम कहिय । सो अषी त्रिय काज ॥४७॥

॥ अरिल्ल ॥

सो अषिय हम नेम सु ददं । तुम अवस्य आवो प्रभु गदं ॥
सेत माघ त्रयोदसि सा वहि । हर मुकलेव थान सुति भावहि ॥४८॥

॥ दूहा ॥

इह कहि हंस सु उड़ि गयौ । लग्यो राज श्रोतान ॥
छिन न हंस धीरज धरत । सुख जीवन दुख प्रान ॥४९॥
दस सहस्र हेंवर चढ़िय । नप दिल्ली चहुआन ॥
हुकम सहि साहन कियौ । दै सूरन विलहान ॥५०॥

॥ छंद भुजंगी ॥

दियौ कन्ह चहुआन मानिकक बाजी । जिनैं देपतं चित्त की गति लाजी ॥
मुपं मभूपायं कटै वाज राजं । मनो वग्ग भीपं कृतं कटिद पाजं ॥५१॥
दियौ वाजि इंदं बरं जाम देवं । दिपै तेज ऐसैं चिरं पंष एवं ॥
धरै पाइ ऐसे इलं मभिम् जैसे । सुनै जैन ध्रमं धरै पाइ तैसे ॥५२॥
चढ्यौ राव कैमास चिन्तं तुरंगी । रहै तेज पासं उछहंत अंगी ॥
चमककंत नालं विसालं सुरंगी । मनो बीज छबूबू कि आभा अनंगी ॥५३॥
उड़ै भार भारं पयं नाल भारी । समं बंद धावै मानौं चार तारी ॥
चढै राजहंसं सुचामंड जोटं । मनो तेज बंधी मुनी बाइ मोटं ॥५४॥
डुलै कन नाहीं सिलीका सुग्रीवं । मनो जोति बंधी सुनिर्वात दीवं ॥
चढ्यौ राज पीची प्रसंगं पहुपा । उड़ै वास ज्यो बाय वगै अनूपा ॥५५॥
बंध चौर चित्तं चमककंत चाहं । हरद्वार छुट्टै कि गंग प्रवाहं ॥
चढ्यौ राज पट्टं अजानंत बाहं । कही कविराजं उपम्माति चाहं ॥५६॥
दियौ बीच तारी कोई नाहि पुजै । बलं ताहि दिष्यै सरित्ता अमुकै ॥
दियौ मृगराजं चढ्यौ देवराजी । उडै पंखि पाजी रही पच्छ लाजी ॥५७॥
चढ्यौ निड्डुरं राह अंगं अभंगं । छुट्टै जानि तारान के व्योम मरगं ॥
चढ्यौ हाहुली राइ जंबू नारिदं । बढ्यौ बांन ज्यो तज कम्मान चंदं ॥५८॥
चढ्यौ लंगरी राव लंगा सुबीरं । किधो वाय बढ्यौ बुझं जानि धीरं ॥
चढ्यौ राज गोइंद आहुट्ट राजं । किधो वाय बुंदं सा छुट्टीय साजं ॥५९॥

चढ्यौ राव लष्षं सु लष्षं पवारं । भ्रमै अंग ऐसे उपम्मा विचारं ॥
 किथौ अग्गि दंडं ब्रजं बाल फेरै । किथौ भोर हथ्थं किथौ चक्र हरै ॥६०॥
 किथौ राति बोहिथ्थ भ्रमि भोर नारं । कही चंद कब्बि उपमाति चारं ॥
 चढ्यौ चंद पुंडीर राजीव नामं । तिनं ओपमा चंद देशी बिरामं ॥६१॥
 जिनं गत्ति जोती सयन्नं पगारं । चली अपि के पंप चित्तं बधारं ॥
 चढ्यौ अत्त ताई उत्तंगं तुरंगा । मनो बीज की गत्ति आभा अनंगा ॥६२॥
 चढ्यौ राव रामं रघूवंस वीरं । गति सूर जित्ती मृगं चंद भीरं ॥
 चढ्यौ दाहिमं देवनरसिख कैसे । मनो चित्त के अर्थ की गत्ति जैसे ॥६३॥
 चढ्यौ भोज राजं पहारं त्रिनैतं । फुटै सद् तेजं आवाजं त्रितेतं ॥
 चढ्यौ वीर जोद्धं कनकं कुमारं । चली कृत्य पूरन्न आचार पारं ॥६४॥
 चढ्यौ राव पञ्जून कूरंभ वीरं । बढे लोह अंगं धनं जैतपूरं ॥
 चढ्यौ सामलौ सूर सारंग ताजी । गद्दी होड बंधो वयं वाम पाजी ॥६५॥
 चढ्यौ अलहं वीर बंधव पानं । चढ्यौ दान ज्यो ग्रहं जुद्ध वानं ॥
 चढ्यौ लष्षलष्षी सलष्षं वधेला । बढ्यौ नेत ज्यो देह देपै सु हेला ॥६६॥
 चढे सव्व सामंत छल बलत वीरं । मनो भान छुट्टी किरन्नी कि तीरं ॥
 चढ्यौ बाज राजं पृथी राजं राजं । तवै पण्ण्यो बाज साकत्ति साजं ॥६७॥
 उडै सूर ज्यो हंस तुट्टै कमधं । वरं ओपमा चंद जंपी कविंदं ॥
 द्रुमं ज्यो मरोरै शिरं स्वामि हेतं । मयूरं कला बाज रची बंधि नेतं ॥६८॥
 जगी जोगमाया सुजग्गीय थानं । प्रलीनं प्रलै ज्यो प्रलीनं प्रमानं ॥६९॥
 जगें वीर वीराधि डोरुं बजावैं । नचै नहनंदी त्रिवाइ त्रिघावैं ॥७०॥

॥ दूहा ॥

अगमं निगम जानि कै । चलि त्रप सुकंवार ॥
 माह वदि पंचमि दिवस । चढि चलिये तुर तार ॥७१॥

॥ छंद त्रोटक ॥

कवि चंद सु ब्रंनन राज करं । सोइ त्रोटक छंद प्रमान धरं ॥
 जिहि च्यार परे सगना सगनं । सुभ अन्धिर लाह तजै अगनं ॥७२॥
 विवहार धरै बरनं सु बर । पढि पिंगल बाहन केन हरं ॥
 वर चोजन चारु सुरंग इलं । तहां भौर न मोर सुरंग हुलं ॥७३॥
 गज उपर ढाल ढलक्कि तरं । सुकहो तहां केलि अचिज्ज बरं ॥
 तहां पल्लव ललित रत्त बचं । तहां जे धन दंतिय पंति रचं ॥७४॥

भ्रमकैँ बर नंग मयूष कसी । निकसी तहां केतक सी बिकसी ॥
 सु चलें बर मंद सुगंध प्रकार । बढी दिसि दस्स सु उज्जल मार ॥७५॥
 बजै महु रंग सु गंधन भ्रंग । बजे सहनाइ न फेरि उपंग ॥
 हल बर लत्त पयन्न भकोर । घरघर होहि पिलपित जोर ॥७६॥
 बुलै कलै कंठ सु कंठह सह । तहां चढ कवि वसीठ उवह ॥
 सकैस कुसंम रु अंकुस पानि । हने ढर काम असो गज जानि ॥७७॥
 अतसी बर पुष्प सु वाढहि भृंग । बजै गज पांनि सु इंदुब रंग ॥
 लता ललिताह हलावन ढाल । उतह जम लगगय रूपतिताल ॥७८॥
 विकासित केसर कुंकुम कांम । सरोज सुरंम अनूपम नांम ॥
 उहां मिटि ताल तरंगिनि कांम । उहां चलि ते निय ना तिहि ठांम ॥७९॥
 उहां बरहा जनु उप्परि केल । किने तब ढीठ हिया छबि मेल ॥
 हले जनु नेजे षजूर बसंत । ढली बन राह सुढालह मंत ॥८०॥
 तजी बर बाल सुरंग सुभेस । चलयौ प्रथिराज सु दृषिण देस ॥
 विरदै चहु विप्र कहै कविचंद । सही चहुआन प्रथी पर इंद ॥८१॥

॥ दूहा ॥

चढ्ढि चलिय प्रथिराज बर । देवगिरिधर राज ॥
 तब सुकन्ह बरदाय बर । पुच्छिय विगत सुकाज ॥८२॥
 एक लष दस अग । सेन सज्जे कमधज्जं ॥
 वीय सहस वारुन्न । सत्त हज्जार फवज्जं ॥
 अद्ध लष पैदल । अद्ध साइक्क बहंतं ॥
 सजि समूह चतुरंग । दिसा दच्छिन परजंतं ॥
 सुनि श्रवन कुंअरे शशिवृत्त लिय । सुनि अवाज बर बीर घन ॥
 चहुआन वृत्त लीनी अध्रम । प्रान हीन कढ्ढन सुमन ॥८३॥

॥ दूहा ॥

बाल प्रान कढ्ढत सुपुनि । सगुन एक मन मान ॥
 बढि अवाज चहुआन की । अली सुन्यौ अप कान ॥८४॥
 यों सु सुनिय अप भांन नै । पुत्रि प्रलय व्रत कीन ॥
 चर पिषिय चहुआन पै । जहव मोकल दीन ॥८५॥

॥ कवित्त ॥

दुहूँ पास नृप नयर । राज दिष्ट्यै प्रति राजं ॥
मनों हथ्य बर नयर । राज संमुह प्रति साजं ॥
कोट कठिन मेखल सु । कटि द्रिग पलक उधारिय ॥
राज कित्ति संभरन । गोप श्रवनन संभारिय ॥
किंकिनि सुपाइ घुंवर सु गज । राज निसान संबद्ध प्रति ॥
चहुआन राव आगम सुव्रत । कमल हीय बद्धिय सुरति ॥८६॥

॥ दूहा ॥

यों करंत दुत्तिय बियौ । कथा श्रवन सुनि मंत ॥
जाकौ तें पतिवृत्त लिय । सो आयौ अलि कंत ॥८७॥
श्रवन नयन को मेल कै । भय चंचल चल चित्त ॥
गोतानं दिष्टानं अरु । मिलि पुच्छै दांइ मित्त ॥८८॥

॥ चंद्रायना ॥

कर्न प्रयंत कटाछ सुरंग विराजही ।
कछु पुच्छन कों जाहि पै पुच्छत लाजही ।
नैन सेंज में बात जु स्रवनन सों कहै ॥
काम किधों प्रथिराज भेद करि ना लहै ॥८९॥

॥ दूहा ॥

नैन श्रवन्नन पूछई । तुम जानौ बहु मंत ॥
मेर जीय अंदैस है । कही न मैं पिय जंत ॥९०॥
श्रवनन सन नेंना कही । तुम जानौ चहुआन ॥
काम नृपति कौ रूप धरि । आवत है इन थान ॥९१॥
ताम हंस आयौ समपि । कछो अहो शशिवृत्त ॥
चाहुआन आयौ प्रछन । मिलन थान हर सित्त ॥९२॥

॥ कवित्त ॥

घेरि गांम जद्व नरिंद । उम्मे चिहु पासं ॥
पल नंषिय रंभा सु । करन आरंभ प्रवासं ॥
एक एक गुन करहि । सब्ब फूले सत पत्रं ॥
तिन मध्यह शशिवृत्त । भई कम्मोदनि मंत्रं ॥
पित पुच्छि पुच्छि परिवार सब । पुच्छि बंध रज्जन सकल ॥
आवृत्त तात अग्या सुग्रहि । भईय बाल बुध्या विकल ॥९३॥

॥ दूहा ॥

विकल बाल जहं सकल हुअ । बुद्धि विकल प्रति साज ॥
भान वचन सच्चै सुकरि । जिन अष्पी प्रथिराज ॥६४॥

॥ गाथा ॥

बीरं चंद सुब्बाहं । सो व्याहं जोगिनीपुरयं ॥
संभरि क्रन शशिवृतं । अगम बीराइमं जनंत तयौ ॥६५॥

॥ कवित्त ॥

पुच्छि मात पित पुच्छि । पुच्छि परिवार ग्रेह सब ॥
मैं वृत लियौ निवद्ध । गवरि पुज्जन बाल जव ॥
तिन थानक सब देव । नीति आरंभ व्रत लीनौ ॥
तव प्रसाद उप्पनौ । मोहि इच्छा व्रत दीनौ ॥
तिन काल व्रत लीनौ सु मैं । गवरि प्रसाद सु पुज्ज फल ॥
बारंज बात तुअ मोह हुअ । कहै और अब लहिअ फल ॥६६॥

॥ दूहा ॥

दुष देवल कौ छंडनह । उर सिंचन अंकूर ॥
दीह काल बल वीचि बदि । लिय समान संपूर ॥६७॥
बाला बेनी छोरि करि । छुट्टै चिहर सुभाइ ॥
कनकु थंभ तैं उतरी । उरग सुता दरसाइ ॥६८॥

॥ छंदश्लोक ॥

मय मंजन मंडित बाल तनं । घनसार सुगंध सुयोरि घनं ॥
नव लोइन अंजित मंजि चली । कि मनो कस कुंदन पंभ हली ॥६९॥
सुभ वख सुअंग सुरंगनसी । सुहली मनु साध मदन्न कसी ॥
जरि जेहरि पाइ जराइ जरी । सजि भूषन नम्म मनौ उतरी ॥१००॥
सिगरी लट यों विथरी विगसैं । शशि के मुख तैं अहि सैं निकसैं ॥
रंग रत्त उबटत उज्जल कै । तिन मैं कछु सेत सुधा चलि कै ॥१०१॥
नव राजिय रोम विराज इसी । जमना पर गंग सरस्वति सी ॥
परि पान मुकुंदम मज्जन कै । नव नीरज अंजन नैननि कै ॥१०२॥

॥ कुंडलिया ॥

करि मज्जन सज्जन सुकम । आभूषन न समान ॥
केहं काके कोहि दिसि । सजि सधि नैन कमान ॥

सजि सधि नैन कमान । केश बागुरि विस्तारिय ॥
 हावभाव कट्टाच्छ । ठुंकि घुट्टी दिय भारिय ॥
 बैठि नैन नृप मूल । पेम देषन गह सज्जन ॥
 मन मृग पिय कृत काज । ताकि बंथन किय मज्जन ॥ १०३ ॥

॥ छंद नाराच ॥

सुगंध कैस पासयं । सुलगि मुक्ति छंडियं ॥
 अनेक पुष्प बीचि गुंथि । भासिता त्रिपंडियं ॥
 मनोसनाग पुष्प जाति । तीन पंथि मंडियं ॥
 दुती कि नाग चंदनं । चढंत दुद्ध पंडियं ॥ १०४ ॥
 सिंदूर मध्य गुच्छता । अंगमदं विराजयं ॥
 मनो कि सूर उगगतं । गहे सु पुत्र लाजयं ॥
 सु तुच्छ सुच्छ पाट आट । पेम वाट सोभियं ॥
 मनो कि चंद राह वान । वे प्रमान लोभयं ॥ १०५ ॥
 कनक काम कुंडिलं । हलंत तेज उम्भरे ॥
 ससी सहाइ मान भाइ । सज्जि सूर दो करे ॥
 दुती उपम्म त्रिद की । किरन्न चंद दिठ्ठयं ॥
 मनो कि सूर इंद गोदि । अप्प आनि विठ्ठयं ॥ १०६ ॥
 भुवन्न बंक संक जूअ । नैन अग जूवयं ॥
 उरद्धता चपल्ल गत्ति । अच्छ आनि ऊवयं ॥
 कटाक्ष नैन बंक संक । चित्त मान बंकयं ॥
 सुछंडि वै सु कुंचितं । श्रवन्न वान नंषयं ॥ १०७ ॥
 सुगंधता अनेक भाँति । चीर चारु मंडियं ॥
 सुरंग अंग कंचुकी । सुभंत गात ता जारी ॥
 बनाइ काम पंच वान । ओट जोट लै धरी ॥ १०८ ॥
 सुरंग माल लाल बाल । ता विसाल छंडयं ॥
 सुपुब्ब पैर जानि काम । अगि संभ मंडयं ॥
 दुती उपम्म मुत्ति माल । यो विसाल ता कही ॥
 जु भारथी सु गंग लै । सुमेर शृङ्ग तें बही ॥ १०९ ॥
 जराइ चौकि स्याम पाट । रत्ति पत्ति तें बुली ॥
 सुरंग तिथ्थ थान मंडि । ईस शीश तें चली ॥

सुवर्नं छुद्रघटिकादि । पोडसं बषानयं ॥
 सु मत्ति तात मोर तन्न । गोदरं बषानयं ॥ ११० ॥
 सुगंध गोप चिन्ह मंडि । पीत रत्न जावकं ॥
 अभूषनं धरंत चित्त । मित्त हित्त शावकं ॥
 बनाइ कें चौडोल लाल । चढूढिता सु सुन्दरी ॥
 सुदोषिता सुरंग थान । अस्तु तास उच्चारी ॥ १११ ॥

॥ दूहा ॥

सजि शृङ्गार शशिवृत्त तन । चढ़ि चौडोल सुरंग ॥
 पूजन कौं बर अंबिका । आई बाल सु अंग ॥ ११२ ॥

॥ छंद नाराच ॥

चली अली घनं बनं । सुभंत सथ्य संवनं ॥
 विहंग भंगयो पुरं । चलंत सोभ नोपुरं ॥ ११३ ॥
 अलीन जुथ्य आवरं । मनो विहंग सावरं ॥
 चुवंत पत्त रत्त जा । उवंत जानि अंबजा ॥ ११४ ॥
 कलिद सीम केसयं । अनंग अंग लोभयं ॥
 उठंत कुंभ कुच्चयं । उपम कच्चि सुच्चयं ॥ ११५ ॥
 मनो जरंत बाल की । धरीसु आनि लालकी ॥
 सुभंत रोमराजयं । प्रपील पंति छाजयं ॥ ११६ ॥
 मनोज कूप नाभिका । चलंत लोभ आलिका ॥
 सुरंग सोभ पिंडुरी । परादि काम पिंडुरी ॥ ११७ ॥
 नितंब तुंग सोभए । अनंग अंग लोभए ॥
 मनौ किरथ्यरंभ के । सुरंभ चक्रक संभके ॥ ११८ ॥
 नषादि आदि अच्छनं । मनो कि इंद्र द्रुपनं ॥
 ढरंत रत्त पडियं । उपम्म कच्चि टेरियं ॥ ११९ ॥
 मनौ कि रत्त रत्तजा । चिकंत पत्र अंबुजा ॥ १२० ॥

॥ गाथा ॥

मढ मे रष्यत बाले । लगा सेनाय पास चिहु बीरं ॥
 धरिधीरंतन दुरयं । रोमं राज रोमयं अंचं ॥ १२१ ॥

॥ बूहा ॥

बाल धरक्कति वचनि गति । ग्यान मोह विष पान ॥
त्यो कमधज्जै देपि कै । बर चित्तै चहुआन ॥१२२॥

॥ दूहा ॥

शंकर रस आचार किय । मढ़ दिषिय प्रति जोइ ॥
मन लगिगय बंधत सु पय । मन कंठप रस भोइ ॥१२३॥

॥ कवित्त ॥

दहति तीन चौडोल । मध्य चौडोल बाल भय ॥
भमर टोल भंकार । दासि बिटिय सु पंच सय ।
सित्त पंच असवार । पंति मंडिय चावदिसि ॥
अद्ध लष्प पैदल्ल । सथ्थ आयो सुअंग कसि ॥
मंगल विवेक विधि उच्चरे । बंधी बंदनमार करि ॥
उत्तरी बाल देवल सुढिग । लगिपाइ परदच्छि फिरि ॥१२४॥

॥ गाथा ॥

जो इज्जै मन चरियं । हरियं एक कभाग्यो सबदं ॥
सब सेना कमधज्जं । धिटे वा बाल सरसायं ॥१२५॥
बर जैचंद सुबंधं । प्रोहितपंगरषियं आइयं ॥
सहचर चारु सुपठियं । हालाहलं बालयं मनयं ॥१२६॥

॥ दूहा ॥

चह्णौ पुंज नव साज बर । अरु भर लिन्ने सथ्थ ॥
शंभु थान पूजन मिसह । चलि बर आयौ तथ्थ ॥१२७॥
तब लगि दल चहुआन के । ग्रह गुपंति कर आइ ॥
रुक्मिकसकै नन मध्य लिय । बोलै संमुह धाइ ॥१२८॥

॥ कवित्त ॥

सहस सत्त कप्परिय । भेष कीनौ तिन वारं ॥
गोप तेग गहि गुपत । कपट कावरि सब भारं ॥
किहुन फरस किहुँ छुरी । चक्र किन हाथन माही ॥
किन त्रिसूल किन डंड । सिंगि सब सथ्थ समाही ॥
सा अंग सिद्ध चहुआन लै । दूतन दूत बताइ हरि ॥
सा अंग बाल उतकंठ करि । पै लग्गी परदच्छि फिरि ॥१२९॥

॥ अरिस्त ॥

फिरि परदच्छि बाल अपु लगगी ॥
 सुमन काम कामना सुभगगी ॥
 मन मन बंधि कियौ हथ लेवं ॥
 सुमन मंत्र प्रारंभ सुदेव ॥१३०॥

॥ दोहा ॥

उतरि बाल चौडोल तें । प्रीत प्रात्त छुटि लाज ॥
 शिवहिं पूजि अस्तुति करी । मिलन करै प्रथुराज ॥१३१॥

॥ कवित्त ॥

सहस सत्त कपरिय । भेष कीनों तिन वारं ॥
 कपट कंध कावरिय । धसिय देवौ दरबारं ॥
 सर्व शस्त्र आरंभ । हस्त आरंभ सुरी सल ॥
 धसिय भीर सम्मूह । जूह पाई समंडि कल ॥
 दल प्रबल उद्धि ज्यों मथन कज । भुज सुकिस्न चहुआन किय ॥
 शशिवृत्त बाल रंभह समह । मिलिय गंठि बंधन सुहिय ॥१३२॥
 दिठिठ दिठूठ लगगी समूह । उतकंठ सु भगिय ॥
 निष लज्जानिय नयन । मयन माया रस पगिय ॥
 छल बल कल चहुआन । बाल कुअरप्पन भंजे ॥
 दोषत्रोय मिट्ट्यौ । उभय भारी मन रंजे ॥
 चौहान हथ बाला गहिय । सो ओपम कविचंद कहि ॥
 मानों कि लता कंचन लहरि । मत्त बीर गजराज गहि ॥१३३॥

॥ चंद्रायना ॥

गहत बाल पिय पानि । सु गुर जन संभरे ॥
 लोचन मोचि सुरंग । सु अंसु बहे परे ॥
 अपमंगल जिय जानी । सु नन भुप बही ॥
 मनो पंजन मुप मुत्ति । भरकत नंषही ॥१३४॥
 दुहु कपोल कल भेद । सुरंग ढरकही ॥
 सज्जन बाल बिलास । सु उरज षरकही ॥
 सो ओपम कवि चंद । चित में बस रही ॥
 मनु कनक कसौटी मंडी । अग मद कसरही ॥१३५॥

॥ गाथा ॥

मृग मद कसयति चित्ते । मित्तं पुनरोपि चित्तयं बसयं ॥
 अजहूँ कन्ह वियोगे । कालिदी कन्हयो नीरं ॥१३६॥
 गहियं गह गह कंठो । बचनं संजनाइ निठ्ठयो कहियं ॥
 जानिज्जै सतपत्रं । बंधे सदाइ भयरयं गहियं ॥१३७॥
 तपतं दिल मै रहियं । अंगं तपताइ उपरं होइ ॥
 जानिज्जै कसु लालं । घटनो अंग एकयौ सरिसौ ॥१३८॥
 अप मंगल अल बाले । नेनं नपाइ नप किसलयौ ॥
 जानिज्जै धन कृपनं । सपनंतरो दत्तयं धनयं ॥१३९॥

॥ कवित्त ॥

गहि शशिवृत्त नरिंद । सिढी लंघत ढहि थोरी ॥
 काम लता कल्हरी । पेम मारुत भकंभोरी ॥
 बर लीनी करि साहि । चंपि उर पुठिठ लगाई ॥
 मन सुरंग सोइ बत्त । कंत लागि कान सुनाई ॥
 नृप भयौ रुदकरुना सुत्रिय । बीर भोग बर सुभर गति ॥
 सगपन सुहास वीभच्छरिन । भय भयान कमधज्जदुति ॥१४०॥

॥ दूहा ॥

बीर गति संधिय सुमति । वृत्त अवृत्त न जाइ ॥
 घरी एक आवृत्त रषि । सुबर बाल अनुराइ ॥१४१॥
 बाल सु बैर स बैर त्रिय । भान विरुद्ध न कीन ॥
 सकल सेन साधन धरी । कलहंकृत गति चीन ॥१४२॥

॥ अरिस्त ॥

आवृत्त वृत्त गुन निग्रहराज । देव जुद्ध देवत्तह साज ॥
 है गै दल सज्जै तिहि बीर । हरी बाल चहुआन सधीर ॥१४३॥

॥ कवित्त ॥

सबर बीर कमधज्ज । अरघ अप्पिय षग मगं ॥
 इष अचिछत उच्छरहि । जानि परिमानन मगं ॥
 सार धार पुंषियै । बीर मंगल उच्चारै ॥
 सबै साथ बंदियहि । सकल पूजा संभारै ॥

बर मुक्कि बरन बरनी सुबर । इह अपूबू पिण्यौ नयन ॥
उप्पनौ बीर सिंगार संग । रुद्र बीर चौरी नयन ॥१४४॥

॥ दूहा ॥

सिर सोहत बर सेहरौ । टोप ओप अति अंग ॥
बगतर बागे केसरे । रुधि भीजत विषमंग ॥१४५॥
सकट भग लइ बग बर । कमधज बीर विसेज ॥
मिले बीर बीरत्त बर । दोऊ दैवत तेज ॥१४६॥

॥ दूहा ॥

चाहुवानं कमधज्ज बर । मिले लांह छुटि छोह ॥
वार मुरै मुप ना मुरै । मरट मुच्छ कन जोह ॥१४७॥

॥ दूहा ॥

इह कहि कदिदयं सार कर । पोलि पग दोउ पानि ॥
मानहु मत्त अनंग द्वै । धृत छुट्टै जम जानि ॥१४८॥

॥ छंद भुजंगी ॥

मिलेहथ्य बथ्यंन सथ्यंस धारे । मनौ बारुनी मत्त गज दंत न्यारे ॥
उडै लोह पंती परै श्रोन रुंदं । मनौ रुद्धि धारा बरषंत बुंदं ॥१४९॥
घुमे घाय घायं-अघायं अघायं । भुमै भार भारं भनक्कै भकायं ॥
करै जोगनी जोग काली कराली । फिर पैट धाये महा विक्कराली ॥१५०॥
परै सूर वाहै बहथ्यी कृपानं । कढी तांत बाढी मलं चारिजानं ॥
धमां धम्म मत्ती महो माहि धानों । पिजारे सतं रुव पीजंत मानों ॥१५१॥
महादेव मालानि में गूथि मथ्यं । कहैं वाह वाहं वहै सूर हथ्यं ॥१५२॥

॥ मुरिबल ॥

हाहरे रूप कायर प्रकार । छंडीत लज्ज अरु बीर मार ॥
अभ्यसै सूर जिन सूर रूप । दैवत्त भूप दिष्यै अनूप ॥१५३॥

। कवित्त ॥

विषम जग्य आरंभ । वेद प्रारंभ शस्त्र बल ॥
है गै नर होमियै । शीश आहुति स्वस्ति कल ॥
क्रोध कुंड विस्तरिय । कित्ति मंडप करि मंडिय ॥
गिद्धि सिद्धि बेताल । पेषि पल साकृत छंडिय ॥

तुंबर सु नाग किनर सु चर। अच्छरि अच्छ सु गावहीं॥
मिलि दान अस्स अप्पन जुगति। भुगति मुगति तत पावहीं ॥१५४॥

॥ दूहा ॥

करि सुचार आचार सब। समद किति फल दीन॥
गुरुजन मिसि करुना करिय। कायर हाहर कीन ॥१५५॥

॥ दूहा ॥

तब चहुआन सु कन्ह वर। ठढ्ढौ करि गुरुराज ॥
हुकम त्रपति छुट्टौति इम। जनु तीतर पर बाज ॥१५६॥

॥ कवित्त ॥

मुष छुट्टत त्रप बैन। नैन दिठ्ठी धावंतौ ॥
कंम बंध बल मोह। छोह बंध्यौ सु बरत्तौ ॥
सुबर सेन चहुआन। सिंग जद्दून नवाई ॥
जनु मंदिर बिय बार। ढंकि इक बार नाई ॥
तकसीर करन दोउ अंस बर। किति मग करतव्य कर ॥
अथवंतरविह आदित्य दिन। अगनि सार बुद्धिदय कहर ॥१५७॥

॥ गाथा ॥

मुष छुट्टा त्रप बैन। कै दिठ्ठाय धावता नैन॥
बज्जी वाहु सुबार। धारं ढारि मत्तयौ धरयं ॥१५८॥

॥ कवित्त ॥

भान कुंअरि शशिवृत्त। नैन शृंगार सुराजै ॥
बीर रूप सामंत। रुद्र प्रथिराथ बिराजै ॥
चंद अदभुत जानि। भए कातर करुनामय ॥
बीभछ अरिन समूह। सात उप्पनौ मरन भय ॥
उप्पज्यौ हास अप्पछरि अमर। भौ भयान भावी बिगति ॥
कूरंभराव प्रथिराज बर। लरन लोह चिते तरनि ॥१५९॥

॥ छंद त्रिभंगी ॥

कविचंद सुबरनं करै सुकरनं सूरह लरनं भर भिरनं ॥
तिरभंगी छंद नाग नरिंद कथ्य करिंद दुष हरनं ॥
पढमं दह मत्ता पुनि अठ मत्ता असु वसु मत्ता रस मत्ता ॥
घन घाइ सघत्ता सूर सरत्ता मैगल मत्ता करि धत्ता ॥१६०॥

बज्जै बर कोहं लग्गै लोहं छक्कै छोहं तजि मोहं ॥
 सूरा तन सोहं स्वाभिन दोहं मत्ते ढोहं रिन ढोहं ॥
 बर बार बिछुट्टै बगतर फुट्टै पारन पुट्टै धर तुट्टै ॥
 तरवारनि तुट्टै धम्मर लुट्टै अंग अहुट्टै गहि भुट्टै ॥१६१॥
 वीरा रस रज्जं सूर सगज्जं सिंधुअ बज्जं गज गज्जं ॥
 अचछरि तन मज्जं बरे बर जंजं चित्ते बज्जं मन मज्जं ॥
 कायर रन भज्जं तज्जि सलज्जं स्वाभि सु कज्जं भर सज्जं ॥
 जम दढ्ढ सु सज्जे हथ्थह मज्जे छिन्छन छज्जे रिन रज्जे ॥१६२॥

॥ वृहा ॥

सुबर बीर पावास पिजि । कढ्ढी बंकी अस्सि ॥
 सोभै सीस गयंद कै । मनु तेरस कौ सस्सि ॥१६३॥

॥ कवित्त ॥

सुबर बीर पावास । पिभिन्न बढ्ढी सु बंकि अस्सि ॥
 सुभै सीस गज राज । अद्द तेरसि कि बाल सस्सि ॥
 मुठ्ठि चंपि द्रग पानि । नीर बानं सुद्वारह ॥
 मनु मुत्तिय वारुअ । बंदु बंधे इन बारह ॥
 साम्भरम देन पावरि धनि । स्वामि सु अंतर फुनि मिलिय ॥
 जीरन युमास संदेस सदि । गल्ह एक जुग जुग चलिय ॥१६४॥
 सुबर बीर कमधज्ज । राज संमुह चरि भारिय ॥
 मरन पूंज पावास । मरन अप्पन्नौ विचारिय ॥
 सब सु सत्थ पुच्छयौ । तंत मंतह उच्चारिय ॥
 सकल मंत रजपूत । मंत मो देहु सुचारिय ॥
 हारिये धृम जिते सुसब । ता उप्पर तन रषियै ॥
 मो मंत सुनौ तौहूँ कहूँ । दुज्जन दल बल भषियै ॥१६५॥

॥ गाथा ॥

अस्तमितं बर भानु । पायानौ परम संतोषं ॥
 जानिज्जै जल बंधुअं । नवचंदनं तिलकयौ दीपं ॥१६६॥

॥ चंद्रायना ॥

दुरि निसान गत भात भइग बर ॥
 सिंधु संपतौ जाइ तिमिर चढै गुर ॥

कुमुद विमुद अंकूर सुरातन धरियं ॥
मानौ तम को तेज सु तत्त उधरियं ॥१६७॥

॥ मुरिल्ल ॥

।र भान संपतौ थान गुरं । सरसीरूह उदित मुदित वरं ॥
।र बीर क्रमोदनि की सु गती । सुभए रिसिराज उदोतपती ॥१६८॥

॥ दूहा ॥

निसि गत बंछे भान बर । भंवर चक्कि अरु सूर ॥
मंतह मत्त पयान गति । बर भारथ्य अंकूर ॥१६९॥

॥ कवित्त ॥

कुमुद उवरि मूंदिय । सु बंधि सतपत्र प्रकारय ॥
चक्कि चक्क विच्छुरहि । चक्कि शशिवृत्त निहारय ॥
जुवती जन चढ़ि काम । जाँहि कोतर तर पंषी ॥
अवृत वृत्त सुंदरिय । काम बढिदय बर अंषी ॥
नव नित्त हंस हंसह मिलै । विमल चंद उग्यौ सु नभ ॥
सामंतसूर न्न रषि कै । करहि बीर वीश्राम सभ ॥१७०॥

॥ अरिल्ल ॥

।त्त सार प्रति प्रत्ति प्रमानं । जाहु राज दिल्ली चहुआनं ॥
।उन बढ्ढे हम बढ्ढे सस्त्रं । दुष्पमानिसुनि सुनिय विरत्तं ॥१७१॥

॥ कवित्त ॥

दुष्प मानि सो रत्त । सुनै सामंत सूर बर ॥
चंद उडगन काम । सर्यो कहुं दिषि सूर नर ॥
भान काम नन सरे । अरुन जो होइ तेज बर ॥
काम राम नन सरै । हनू कूयोति लंकछर ॥
नन सरै काम मंगल सुबिधि । जो मंगल आकृत्त तप ॥
सामंत सूर इम उच्चरै । कढि मोहि भुभहुति अप ॥१७२॥

॥ दूहा ॥

मुहि कढिरु तुम रहौ बर । जियत जाँहि उन थान ॥
ऐसी रीति अरीत बर । पढ्ढी नह चहुआन ॥१७३॥

॥ गाथा ॥

अंकुर बीर सुभट्टं । अघटं घट्टाइ क्रोधयो कलहं ॥
हल मुक्या चलि बंधी । निदुर सथव सठयो बीरं ॥१७४॥

॥ वृहा ॥

बीर बीर बीराधि बर । कटे लोह तजि छोह ॥
सूर धीर सामंत गति । नहिं माया नहिं मोह ॥१७५॥

॥ रसावला ॥

जिते सूर पत्ती । लगै लोह तत्ती ॥
नचे सूर छत्ती । उडे काल षत्ती ॥१७६॥
जुटे जोध पत्ती । उडी रेन गत्ती ॥
सहा बेन तत्ती । कला कोटि कत्ती ॥१७७॥
ग्रवै ग्राव गत्ती । सुरं पंच छत्ती ॥
मचे कूह मत्ती । पचे रोस रत्ती ॥१७८॥
करे घाव कत्ती । इसे सूर चित्ती ॥
शिष्ट फल्ल सत्ती । घुमै घाई षत्ती ॥१७९॥
भजै भीम मत्ती । हनूमान जत्ती ॥
अनाभूत अत्ती । दिष्टे दारु दत्ती ॥१८०॥
रुधिं धार रुक्कं । भभक्कै भभक्कं ॥
धका धीग धक्कं । बकै मार वक्कं ॥१८१॥
इसे चित्त अक्कं । लुटे मत्त छक्कं ॥
डकारंत डक्कं । त्रिलोकंत हक्कं ॥१८२॥
मनो मोह थक्कं । हको हक्क वक्कं ॥१८३॥

॥ कवित्त ॥

हको हक्कि बजिय प्रकार । सार बज्जै सु बीर बर ॥
सु बुधि बुद्ध आबुद्ध । मत्त लगै असि बर भर ॥
इकत रुद्ध आरुद्ध । नह नारद अधिकारिय ॥
रंभ सिंभ आरंभ । सिद्ध बुद्धं दै तारिय ॥
धनिधन्नि सूर दिन धनित बल । छल छत्रिय अंकुर रजि ॥
कलहंत काल कालह विषम । सुबर वीर बीरत्त रजि ॥१८४॥

॥ दूहा ॥

स्वामि काज लग्गे सुमति । षंड षंड धर धार ॥
हार हार मंडै हियै । गुथि हार हर हार ॥ १८५ ॥

॥ कवित्त ॥

घटिय पंच दिन घट्यो । उमरि आरब्व पुंजपिरि ॥
एक दिना दोउ सेन । मोह छंड्यौ कम निक्करि ॥
बान गंग पत्तयौ । बीर ग्यारसि दिन सोमं ॥
सूर धीर सामंत । सूर उड्डे रन रोमं ॥
कत काम काजसाई विभ्रम । दल दंतिय पंतिय गमै ॥
सामंत सूर साई विभ्रम । रोम रोम राजी भ्रमै ॥ १८६ ॥

॥ दूहा ॥

रोम राज राजी भूमहि । थोर थनी ढुंढि बाल ॥
उतकंठा उतकंठ की । ते पुज्जी प्रथिपाल ॥ १८७ ॥

॥ गाथा ॥

आरंभ प्रारंभौ । उतकंठा किनयौ वृतयं ॥
साधा धरी सु धरयं । नन छुट्टै तीनयौ पनयं ॥ १८८ ॥

॥ दूहा ॥

नह चल्लै पृथिराज रिन । लज्ज लपट्टिय पाइ ॥
त्रिय जोरै कर हथ्य दो । चलि संभरिवै राइ ॥ १८९ ॥
तं वै एकह पन रहै । रंग कसुंभ प्रमान ॥
हौ नन छंडों पास तुअ । तीनों पनह समान ॥ १९० ॥
तं लज्जी मो सथ्य है । दान षग अरु रूप ॥
मौ चल्लै तीनों चलै । संची चवै न भूप ॥ १९१ ॥
परे सुमर दोऊ न दल । निदुद्र देख्यौ बंध ॥
कौन भुजा बल जुध करै । सुनि कमधज्ज अमुंद्ध ॥ १९२ ॥
बाला लै पृथिराज गय । गहिय बग कमधज्ज ॥
रोस रीस बिरसोज भय । रह बाजे अनबज्ज ॥ १९३ ॥

॥ कवित्त ॥

अद्ध कोस नृप अगग । बीर ठह्यौ करि ठढ्ढौ ॥
मद समूह गजरज । छंडि पट्टै बल गढ्ढौ ॥

लाज बंधि संकरिय । बीर बंध्यौ सु अष्ट कसि ॥
 अरिन बौर छंडै न । क्रम मंडै दिलीय दिसि ॥
 मनमथमहावतबंधिअति । मन मत्तौ उन को धरै ॥
 घन धाइ रुधिर छुट्टै परे । अमर पुहप पूजा करै ॥१६४॥
 पूब राज प्रथिराज । पूब जै चंद बंध बर ॥
 पूब सूर सामंत । पूब नृपु सेन पंग बर ॥
 पूब सेन ढंढोरि । पूब भोरी करि डारिय ॥
 पूब बेत विधि गाम । बानगंगा पथ भारिय ॥
 आसेर आस छंडियनृपति । विपतिसपति जानीय भर ॥
 सठिहारराजप्रथिराज कौ । धरै सबह चौडोल घर ॥१६५॥

॥ दूहा ॥

चाहुआन चतुरंग जिति । निगम बोध रहि राज ॥
 बर शशिवृत्ता जित्तगौ । धाम मु दिल्ली साज ॥१६६॥

॥ दूहा ॥

सारिन सालै पंस बर । सारि पंस बर भोग ॥
 सुबर सूर सामंत लै । करि दिल्ली प्रति जोग ॥१६७॥
 जै जै जस लद्धौ सुबर । बैर नृपति सुरतान ॥
 सुबर बैर बर बड्ढ्यौ । सुबर जित्त चाहुआन ॥१६८॥

॥ कवित्त ॥

भई जीति चाहुआन । अरिय भंजे अभंग भर ॥
 जै जै सूर बपान । देव नंपै सुमन्न बर ॥
 लै शशिवृत्ता राज । अप दिल्लीय संपत्तौ ॥
 अति तोरन आनंद । चित्त रतौ मन मत्तौ ॥
 अरि अवनिकोन मंडैमनहु । वग दाग अरि पंडइय ॥
 कवि चंद दंद दारुन कयहि । इक अडंड कारि डंडइय ॥१६९॥

कौमास-करनाटी प्रसंग

॥ कवित्त ॥

दिल्लीवै चहुआन । तपै अति तेज पग बर ॥
चंपि देस सब सीम । गंजि अरि मिलय धनुद्धर ॥
रयन कुमार अति तेज । रोहि हय पिट्ट विसंमं ॥
साथ राव चामंड । करै कलि कित्ति असंमं ॥
मेवास वास गंजै द्रुगम । नेह नेह बड्डै अनत ॥
मातुलह नेह भानेज पर । भागनेय मातुल सुरत ॥१॥
सयन इक्क संवसहि । इक्क आसन आश्रम्महि ॥
बीरा नद बिहार । भार जल राह सुरम्महि ॥
भागनेय मातुलह । जानि अति प्रीति सु उम्मर ॥
चित्ति चंदपुंडीर । कही प्रति राज हित भर ॥
चावंड रयन सिंघह सु घर । अप्प नेह बंध्यौ असम ॥
जानौ सु कत्य कारनह कलि । कलै धम्म धरनिय विसम ॥२॥
राज काज दाहिम्म । रहै दरबार अप्प बर ॥
अषेटक दिल्लिय । नरेस षेलै कमंध डर ॥
देस भार मंत्रीस । राव उद्धार सु धारे ॥
न को सीम चंपवै । हद्ध तपै सु करारै ॥
लोपौ नलीह लज्जा सयल । स्वामि धम्म रष्वै सुरुष ॥
कत नीति रीति बड्डै बिसह । बंछै लोक असोक सुष ॥३॥
राज चित्त कैमास । चित्त कैमास दासि गय ॥
नीर चित्त वर कमल । कमल चित्त बर भान गय ॥
भंवर चित्त भमरी सु । भंवर रत्तौ सु कुसुम रस ॥
ब्रम्ह लोय रत्तयौ । लोय रत्तौ सु अधम रस ॥
उतमंग ईस धरि गंग कौ । गंग उलटि फिर उदधि मिलि ॥४॥

॥ दूहा ॥

नंदी देस बनिक सुअ । बेसब नंजन वृत्ता ॥
बीन जान रस बन सुघर । राजन रषिय हित ॥५॥

॥कवित्त॥

समुष समुष ग्रह राज । महल साला सुरुव रंग ॥
 तहं सु रोहि कयमास । सजन आवरिय अप्प अंग ॥
 ऊँच महल करनाटि । देषि डंबर घन अंमर ॥
 बैठी गवष ससषि । सुमन मंती अरु संमर ॥
 समदिट्टि उट्टिदाहिम्म दुअ । जग्गि मार उम्मार चित ॥
 अंकूरि द्रष्ट अंतर उरिय । प्रीति परट्टिय कालकत ॥६॥
 नव जोवन शृंगार करि । निकरि गवषह पास ॥
 देषि उम्फकि बर सुंदरी । काम द्रष्टि कयमास ॥७॥
 क्रन्नाटिय कैमास । प्रिष्ठ देखत मन लग्गो ॥
 कलमलि चित्त सुहित्त । मयन पूरन जु रि जग्गो ॥
 गयो ग्रेह दाहिम्म । तलप अलपं मन किन्नौ ॥
 बोलिअप्प सो दासि । काम कारन हित दिन्नौ ॥
 लैमंत्रराजअप्प सरिस । जौ हम आन चित्त हर ॥
 सम चली दासि कैमास दिसि । जंषिय भेव सनेह बर ॥८॥

॥ दूहा ॥

निसि भव्ह कहव कहल । आषेटक प्रथिराज ।
 दाहिम्मौ दहि काम रत । काल रैनै कै काज ॥९॥

॥ कवित्त ॥

मध्य महल कैमास । दासि सम अप्प संपत्तौ ॥
 ग्रेह निकट पामारि । काम कामना न मत्तौ ॥
 घन सुगंध सुर भास । जानि वित इच्छिनि चितिय ॥
 आषेटक दिल्लेस । कहा सुर वास सु भत्तिय ॥
 निसि स्याम त्रिलजि त्रीया वसन । ढ्यौ अप्प सिद्धिय सुमन ॥
 इण्यौ सु द्वार इच्छिनि तडित नर । सुपित्त कोइ काम रत ॥१०॥
 सनमुष साला सुभट । सकल विश्राम नींद भर ॥
 जाम देव बलिभद्र । बरन चहुआन संघहर ॥
 तोंवर राय पहार । सिघ रनभय पावारं ॥
 लंगी लंगरराव । सूर सा अल्ह कुआरं ॥

आजानबाह गुज्जर कनक । सोलंकी सारंग बर ॥
 सामलौ सूर आरज कमँध । बाम जु इष विसग भर ॥११॥
 सुनिय सु नूपुर सद त्रिप । सषी स चितिय चित्त
 मन्निय कारन सिद्ध मनि । त्रप गति दुक्कित नित्त ॥१२॥

चान्द्रायण

छतिय हथ्थ धरतं नयनन चाहुयौ ।
 दासिय दषिषन हथ्थ सु बंचि दिषाययौ ॥
 जिय बाना बलबान रोसं रस दाहयौ ॥
 मानहु नाग पतित्त अप्प जगावयौ ॥१३॥

दूहा

बंचि बीर कग्गद चरह । तरकि तोन कर सज्ज ॥
 निर तिन कह दीनों त्रपति । सब सामंतन लज्ज ॥१४॥
 आयौ त्रप इच्छिनि महल । राज रोस चित्त मानि ॥
 अगनि दम्भु कैमांस कै । बीर बरन्निय पानि ॥१५॥
 सुंदरि जाइ दिषाइ करि । दासी दुहुँ दाहिम्म ॥
 बर मंत्री प्रथिराज कहि । दइ दुवाह वर कम्म ॥१६॥
 ना दानव ना देवगति । प्रभु मानुष वर चिन्ह ॥
 सु रस पवारि गवारि कह । प्रौढ़ मुगध मति किन्ह ॥१७॥
 रमनि पिषिरमनिय विलसि । रजनि भयानक नाह ॥
 चित्र दिषात सु चित्रंनी । मोन विलगिय बाह ॥१८॥
 नीच बान नीचह जनिय । विलसन कित्ति अभग ॥
 सुनहु सरूप सु मुत्ति कर । दासि चरावति कग्ग ॥१९॥
 करकुँवंड लीनौ तमिक । अरुचि दान विधि जोय ॥
 चरिय कग्ग तरवर सबै । हंसनि हंसन होइ ॥२०॥
 निसि अद्धी सुभमै नहीं । बर कैमासय काज ॥
 तडित करिग अंगुलि धरम । बान भरिग प्रथिराज ॥२१॥
 बान लग्ग कैमास उर । सो ओपम कवि पाइ ॥
 मनो हृदय कैमास कै । हथ्थै बुभिम्य लाइ ॥२२॥

॥ कवित्त ॥

भरिग बान चहुआन । जानि दुरदेव नाग नर ॥
 विट्ट मुट्टि रस डुलिग । चुक्कि निकरिग इक्क सर ॥
 १४

दुत्ति आनि दिय हथ्य । पुट्टि पामार पचार्यौ ॥
 बानि वृत्त तुटि कंत । सुनत धर धरनि अपार्यौ ॥
 इयकष सब सरसै गुनति । पुनित कह्यौ कविचंद तत ॥
 यों पर्यौ कैमास आवासे तें जानि निसानन छित्रपति ॥२३॥
 जिनमंत्री कैमास ग्रेह जुगिनि पुर आनी ।
 जिन मंत्री कैमास बंध बंध्यौ पंगानी ।
 जिन मंत्री कैमास जियन बंध्यौ षट बारं ।
 सो मत्त घट्ठ कैमासकी दासि काज संदेह हुआ ।
 दुप्पहर चाह दस दिसि फिरै कोइ छत्री प्रब्वहन हुआ ॥२४॥

॥ दूहा ॥

षनि गह्यौ कैमास तहं । दासी सभ करि भंग ॥
 पंच तत्त सरसै सुपै । प्रात प्रगट्टै रंग ॥२५॥
 जो तक पंगति उप्पज्यौ । बैनन दिपि कवि चंद ।
 साम प्रागट बर कंधनह । बर प्रमाद मुष इंद ॥२६॥
 धषनि गह्यौ नृप सम धनह । सो दासी सुर पात ॥
 दिब धारनै जलद्विते । लाली कहिग सु प्रात ॥२७॥
 षनि गह्यौ तिहि गब षनह । तजिगौषति गइ दासि ॥
 षनि गह्यौ कैमास बर । कित दै दासी भासि ॥२८॥
 सबै सूर सामंत जुरि । बिना एक कैमास ॥
 तस जानौ बरदाइ पन । मंत्रि जोग नन पास ॥२९॥

॥ अरिह ॥

प्रथम सूर पुच्छै चहुआनय । है कयमास कहौ कहूँ जानय ॥
 तरनि छिपंत संभ सिर नायौ । प्रात देव हम महल न पायौ ॥३०॥

॥ दूहा ॥

उदय अस्त तौ नयन दिठि । जल उज्जल ससि कास ॥
 मोहि चंद है विजय मन । कहहि कहाँ कैमास ॥३१॥
 जो छंडै सेसह धरनि । हर छंडै विष कंद ॥
 रवि छंडै तप ताप कर । बर छंडै कविचंद ॥३२॥
 हठ लगौ चहुआन नृप । अंगुलि मुष्प फुनिंद ॥
 तिहुँपुर हुआ अति संवरै । कहै बनै कविचंद ॥३३॥

जौ पुच्छै कविचंद सों । तौ ढंकी न उधारि ॥
अब कित्ती उपर चंपौ । सिंचन जानि गमारि ॥३४॥

॥ कवित्त ॥

एक बान पहुमी । नरेस कैमासह मुक्यौ ॥
उर उप्पर थरहर्यौ । बीर कषंतर चुक्यौ ॥
वियौ बान संधान । हन्यौ सोमेसर नंदन ॥
गाढ़ौ करि निग्रह्यौ । षनिव गड्यौ संभरि धन ॥
थल छोरि न जाइ अभागरौ । गाह्यौ गुन गहि अगारौ ॥
इम जंपै चंद बरदिया । कहा निघट्टै इय प्रलौ ॥३५॥

॥ दूहा ॥

सुनि त्रपत्ति कवि के बयन । अनन वीय अवरेष ।
कविय वचन सम्हौ भयौ । सूर कमोदनि देष ॥३६॥

॥ कवित्त ॥

राजन मझ संपरिय । पट्ट दरबार परठिठय ॥
बहुरे सब सामंत । मंत भगिय सिर लठिय ॥
रह्यौ चंद बरदाइ । विमुष पग डगन सरक्य्यौ ॥
ग्रभभ तेज वर भट्ट । रोस जल षिन षिन सुक्य्यौ ॥
रत्तरी कंत जागंत रै । भई घरंघर बत्तरी ॥
दाहिम्म दोस लग्यौ षरौ । मिटै न कलि सों उत्तरी ॥३७॥

॥ चौपाई ॥

इह कहि गेह चंद संपन्नौ । बर कैमास आसु भलपन्नौ ॥
मित्रद्रोह भट उर सपन्नौ । दाहिम वरन बरन संपन्नौ ॥३८॥

कनवज्ज समय

॥ चौपाई ॥

बैठो राजन सभा विराजं । सामंत सूर समूहति साजं ॥
विस्तरि राग कला क्रत भेदं । हरषित ऋदय असम सर षेदं ॥ १ ॥

॥ दूहा ॥

तत्त समै राजिद बर । अपि सु षबरि अछत्त ॥
जंगम एक सु आय कहि । कमधज पुर पति बत्त ॥ २ ॥
सत्त हेम है राज इक । दिय पातुर प्रति दान ॥
नृत्ति विगति अबलोकि गुन । दर्ई सीष थह मानि ॥ ३ ॥
पुनि जंगम प्रति उच्चरिय । कमधज्जन की कथ्थ ॥
बहुरि भिन्न करि उच्चरिय । सुनि सामंत सु नथ्थ ॥ ४ ॥

॥ चौपाई ॥

राज जग्य सज्ज्यौ कमधज्जं । देस देस हुंकारत सज्जं ॥
मिलि इक कोटि सूर भर हासं । नृप अंदेस देस रचि तासं ॥ ५ ॥
थपि दर द्वारपाल चहुआनं । लकुटिय कनक हथ्थ परिमानं ॥
आय पंग तट इष्व समाजं । आनि अप्प चहुआन सु लाजं ॥ ६ ॥
इह सु कथा पहिली सुनि राजन । आय कही सो फीफुनि साजन ॥
लग्यौ राज श्रोतान रजानं । बुझ्भी बहुरि सु जंगम जानं ॥ ७ ॥

॥ कवित्त ॥

आवलि पंग नरेस । देस मंडन सुबेस बर ॥
बरन कज्ज चौसर । विचार संजोग दीन कर ॥
देवनाथ कवि अगग । बरनि नृप देस जाति गुन ॥
फुनि अप्पै संजोग । कनक विग्रह सु द्वार उन ॥
चहुआन राव सोमेस सुअ । प्रथीराज सुनि नाम बर ॥
गंधर्व वचन विच्चारि उर । धरि चौसर प्रथिराज गर ॥ ८ ॥

॥ दूहा ॥

देषि फेरि कहि नाथ पति । फुनि मुक्कलि कविराज ॥
बहुरि जाहु पंगानि अग । विचरै नृपति समाज ॥ ९ ॥

॥ कवित्त ॥

बहुरि नाम गुन जाति । देस पित प्रपित बिरद बर ॥
लै लै नाम पराम । देवजानी स देव कर ॥
फुनि चहुआन सु पास । जाय ठढे भय जामं ॥
कछु कवि रदिय राज । कछुक जंषे गुन तामं ॥
नृप लज्ज पंग ग्रह भट्ट बर । तुच्छ संषे सु उच्चर्यौ ॥
संजोग समभूमे उर वरह । कंठ प्रथु चौसर धर्यौ ॥१०॥

॥ दूहा ॥

दुसर राज इह देषि सुनि । तिय सु नाथ उर जाम ॥
सपत हथ्य सुर जा धरिय । प्रचरि नरेसनि ताम ॥११॥

॥ कवित्त ॥

फुनि नरेस अदेस । नाथ फिरि आय मभूम दर ॥
आदि वंस रचि नाम । चवत विक्रम क्रम बर ॥
दई पानि कवि जानि । होत काहू कर मंडं ॥
भूत भविष्यत बत्त भवि जानी उर चंडं ॥
उतकंठ लोकि प्रतिमा प्रतषि । दिषि देव देवाधि सचि ॥
बरनी संजोग चहुआन बर । पहुप दाम ग्रीवा सु रचि ॥१२॥

॥ दूहा ॥

कोप कलमल पंग पहु । समय बिरंचि विचारि ॥
रोस सोस उर धारि तब । क्रम मति भई न चारि ॥१३॥
उठिठ राज अंदरह दर । कियौ प्रवेस अपान ॥
विमुष निमुष दिष्यौ नपति । देव क्रत्य परमान ॥१४॥

॥ कवित्त ॥

दइल काल सुनि पंग । जग्य विगर्ग्यौ दच्छ पति ॥
दुपद राय पंचाल । जग्य विगर्ग्यौ इष्ट रति ॥
दइय काल दुजराज । जग्य विगर्ग्यौ सु जानं ॥
नघुष राइ राज सू । गत्त जानी परमानं ॥
श्रुति बर पुरान श्रोतास बल । विधि विचार मंडिय सकल ॥
त्रय काल काल सामंत कहि । दइय काल माने अकल ॥१५॥

॥ दूहा ॥

आदि कथा संजोग की । पहिलें सुनी नरेस ॥
अब इह जंगम आय कहि । विधि मिलवन संदेस ॥१६॥

॥ कवित्त ॥

रचि अवास रा पंग । गंग दंगह उतंग तट ॥
दासि सहस सुंदरिय प्रसंग । कल ग्यान भाव पट ॥
वृत उचार चहुआन । धरतकर करत अप्प पर ॥
पंच धेन पूजंत । बचन मन क्रम्म गवरिहर ॥
सुनि पुनि नरेस संदेह दिद । सोफी फुनि जंगल कहिय ॥
आरत्ति चरित चहुआन मन । दहय भेद चित्तह गहिय ॥१७॥

॥ दूहा ॥

पहिल ग्यान जंगम कहिय । दुतिय सो सोफी आनि ।
तब प्रथिराज नरिंद ने । दैव काल पहिचान ॥१८॥

॥ पद्धरी ॥

लग्यौ सु राज श्रोतान राग । संजोग वृत संभरि समाग ॥
अति असम बान बेधे सरिर । नह धीर हसं नह भाव धीर ॥१९॥

॥ दूहा ॥

लरिग बान अनुराग उर । मनमथ प्रेरि वसंति ॥
सहै नृपति अण्णै न कहुं । बेदे रिदय असंत ॥२०॥

॥ कवित्त ॥

दंग सुरंग पलास । जंग जीते बसंत तपु ॥
मदन मानि मन मोद । लीन छेदे प्रछेद बपु ॥
देस नरेस अहेस । देस आदेस काम कर ॥
नीर तीर नाराच । पंग बेधे अबेध पर ॥
कलमलत चित्त चहुआन तब । उर उपजै संजोग वृत ॥
बरदाय बोलि तिहि काल कबि । मन अनंत मति उधृति ॥२१॥

॥ दूहा ॥

सुक वरनन संजोग गुन । उर लग्गे छुटि बान ॥
षिन पिन सल्लै वार पर । न लहै बेद विनान ॥२२॥

भय श्रोतान नारिंद मन । पुच्छै फिरि कविरज्ज ॥
दिष्वावै दलपंगुरौ । धर ग्रीषम कनवज्ज ॥२३॥

॥ कवित्त ॥

दीसै वह विध चरिय । सुअन नर दुअन भनिज्जै ॥
बल कलियै अप्पान । कित्ति अप्पनी सुनिज्जै ॥
होँडिज्जै तिहि काज । दुष्प सुष्पह भोगिज्जै ॥
तुच्छ आव संसार । चित मनोरथ पोषिज्जै ॥
दिष्पियै देस कनवज्ज वर । कही राज कवि चंद कहि ॥
मुक्कही सूर छल संग्रहै । तौ पंग दरसन तत्त लहि ॥२४॥

॥ दूहा ॥

पुच्छि गयौ कविचंद को । इँछिनि महल नरिंद ॥
सुंदरि दिसि कनवज्ज कौ । चलै कहै धर इंद ॥२५॥
इन रिति सुन चहुवान वर । चलन कहै जिन जीय ॥
हों जानू पहिलै चलै । प्रान प्रयान कि पीय ॥२६॥
प्रान जाव दूनों चलै । आन अटकै घंट ॥
निकसन कों भगरौ पर्यौ । रुक्यौ गदगद कंठ ॥२७॥

॥ साटक ॥

स्यामंगं कलधूत नूत सिपरं, मधुरे मधू बेष्टिता ॥
वाते सीत सुगंध मंद सरसा, आलोल संचेष्टिता ॥
कंठी कंठ कुलाहले मुकलया, कामस्य उद्दीपने ॥
रत्ते रत्त वसंत मत्त सरसा, संजोग भोगायते ॥२८॥

॥ कवित्त ॥

मवरि अंब फुल्लिग । कदंब रयनी दिव दीसं ॥
भवर भाव भुल्लै । भ्रमंत मकरंदव सीसं ॥
वहत बात उज्जलति । मौर अति विरह अगनि किय ॥
कुहकुहंत कल कंठ । पत्र राषस रति अगिय ॥
पय लगिग प्रान पति वीनवों । नाह नेह मुक्क चित धरहु ॥
दिन दिन अवद्धि जुब्बन घटय । कंत वसंत न गम करहु ॥२९॥
धुम्र चलिय बन पवन । भ्रमत मकरंद कंवल कलि ॥
भय सुगंध तह जाइ । करत गुंजार अलिय मिलि ॥

बल हीना डगमगहि । भाग आवै भोगी जन ॥
 उर धर लगै समूह । कंषि भौ सीत भयत नन ॥
 लत परी ललित सब पटुप रति । तन सनेह जल पबित क्रिय ॥
 निक्करै भ्रंग अंजुज हरुअ । सीत सुगंध सुमंद लिय ॥३०॥

॥ साटक ॥

लैबंधं सुर थट्ट डंकित मधू, उन्मत्त भ्रंगी धुनी ॥
 कंद्रप्पे सु मनो वसंत रमनं, प्राप्तो धनं पावनं ॥
 कामं तेग मनं धनुष्य सजनं, भीतं वियोगी मुनी ॥
 विरहिण्या तन ताप पत्त सरसा, संजोगिनी सोभनं ॥३१॥

॥ कुंडलिया ॥

इहिरिति मुक्कि न बाल प्रिय । सुष भारी मन लुटिट् ॥
 कामिनि कंत समीप बिन । हुई षंड उर फुठिठ ॥
 हुई षंड उर फुटिट् । रसन कुह कुह आरोहै ॥
 चलन कहै जो पीय । गात वर भगो सोहै ॥
 नयन उमगि कन बीय । सोभ ओपम पाई जिहि ॥
 मनो षंजन बिय बाल । गहिय नंषत सुत्तिय इहि ॥३२॥

॥ दूहा ॥

इहिरिति रषिय इंछिनिय । भय ग्रीषम रितु चारु ॥
 काम रूप करि गय नृपति । पुंडीरनी दुआर ॥३३॥
 सुनि सुंदरि पटु पंग की । दिसि चालन कौ मज्ज ॥
 बर उत्तम धर दिषियै । पिष्यन भर कनवज्ज ॥३४॥
 नृप ग्रीषम ग्रिह सुष्यनर । ग्रेह मुक्कि नन राज ॥
 गोमगांम छादिय अमर । पंथ न सुभूमे आज ॥३५॥

॥ कवित्त ॥

दीरघ दिन निस हीन । छीन जलधर वैसनर ॥
 चक्रवाक चित मुदित । उदित रवि थकित पंथ नर ॥
 चलत पवन पायक । समान परसत सु ताप मन ॥
 सुकत सरोवर मचत । कीच तलफंत मीन तन ॥
 दीसंत दिगम्बर सम सुरत । तरु लतान गय पत्त भरि ॥
 अक्कुलं दीह संपति विपति । कंत गमन ग्रीषम न करि ॥३६॥

॥ साटक ॥

दीहा दिघघसदंगकोप अनिला, आवर्त मित्ता करं ॥
रेनं सेन दिसान थान मिलनं, गोमग आडंबरं ॥
नीरे नीर अपीन छीन छपया, तपया तरुण्या तनं ॥
मलया चंदन चंद मंद किरनं, ग्रीष्म च आषेवनं ॥३७॥

॥ कवित्त ॥

पवन त्रिविध गति मुक्कि । सेन भुअ पत्ति जूथ चलि ॥
विरह जाम बर कदन । मदन में मंत पील । हलि ॥
पथिक बधू सं भरै । आस आयन चंदाननि ॥
जो चालै चहुआन तौ । मरै फुटि उर व्रननि ॥
मन भुअन आन दैतो फिरै । प्रिय आगम गज्जै मयन ॥
कंता न मुक्कि वर कित्ति गर । कहूँ सुनो सोनिय बयन ॥३८॥
षिन तरुनी तन तपै । वहै नित वाव रयन दिन ॥
दिसि च्यारों परजलै । नहिं कहों सीत अरध षिन ॥
जल जलंत पीवंत । रुहिर निसि वास निघट्टै ॥
कठिन पंथ काया । कलेस दिन रयनि सघट्टै ॥
त्रिय लहै तत्त अषर कहै । गुनिय न प्रब्व न मंडियै ॥
सुनि कंत सुमति संपति विपति । ग्रीष्म ग्रेह न छंडियै ॥३९॥

॥ गीतामालाची ॥

त्रिय ताप अंगति दंग दवरति दवरि छव रित भूषनं ॥
कुरु मेह पेहति ग्रेह लुंपिति स्वेद सखित अंगनं ॥
नर रहित अनहित पंथ पंगति पंगयौ जित गोधनं ॥
रवि रत्त मत्तह अभ्भ उद्दिक कोप कर्कस मोषनं ॥४०॥
जल बुद्धि उठ्ठि समूह बल्लिय मनो सावन आवनं ॥
हिडोल लोलति बाल सुष सुर ग्राम सुर गावनं ॥
कुसमंग चीर गंभीर गंधित मुंद बुंद सुहावनं ॥
ढलकंत बेनिय तठ्ठ ऐनिय चंद्र सैनिय आननं ॥४१॥
ताटक चंचल लजित अंचल मधुर मेषल रावनं ॥
ख रंग नूपुर हंस दो सुर कंज ज्यौ पुर पावनं ॥
नष द्रप्प द्रप्पन देषि अप्पन कोपि कंषि सु नावनं ॥
दमकंद दामिनि दसन कामिनि जूथ जामिनि जाननं ॥४२॥

॥ दूहा ॥

मान रूप मानिन वचन । रहि प्रीषम वर नेह ॥
 पावस आगम धर अगम । गय इंद्रावति मेह ॥४३॥
 पीय वदन सो प्रिय परषि । हरष न भय सुनि गौन ॥
 आँसू मिसि असु उपटै । उत्तर देय सलोन ॥४४॥

॥ साटक ॥

अब्दे बहल मत्त मत्त विसया, दामिन्य दामायते ॥
 दादूरं दर मोर सोर सरिसा, पष्पी चीहायते ॥
 शृंगारीय वसुंधरा मलिलता, लीला मभुद्रायते ॥
 जामिन्या सम वासुरो विसरता, पावस्स पंथानते ॥४५॥

॥ कवित्त ॥

मग सज्जल सुभूमैन । दिसा धुंधरी सघन करि ॥
 रति पटुवी कि चरित्त । लता तरुवीटि सुमन भरि ॥
 आलिगत धर अभ्भ । मान मानिन ललचावत ॥
 बर भद्रव कद्रव मचंत । कद्रव. विरुभावत ॥
 चतुरंग सेन वै गढ दहन । घन सज्जिय त्रप चढिन तिन ॥
 भरतार संग बंझै त्रिया । बिन क्रतार भ्रतार बिन ॥४६॥
 घन गरजै घरहरै । पलक निसरेनि निघट्टै ॥
 सजल सरोवर पिण्पि । हियौ तत छिन घन फट्टै ॥
 जल बहल बरषंत । पेम पल्हरै निरंतर ॥
 कोकिल सुर उच्चरै । अंग पहरंत पंच सर ॥
 दादुरह मोर दामिनि दसय । अरि चवथ चातक रटय ॥
 पावस प्रवेस वालम न चलि । विरह अगनि तनतप घटय ॥४७॥
 घुमडि घोर घन गरजि । करत आडंबर अंमर ॥
 पूरत जलधर धसत । धार पथ थकित दिगंबर ॥
 भूभकित द्विग सिसु अग । समान दमकत दामिनि द्रसि ॥
 बिहरत चात्रग चुवत । पीय दुपंत सम निसि ॥
 प्रीषम विरह दुम लता तन । परिरंभन क्रत सेन हरि ॥
 सज्जंत काम निसि पंचसर । पावस पिय न प्रवासकरि ॥४८॥

॥ चंद्रायना ॥

विजय विहसि द्विगपाल प्रायननि पंच किय ॥
 विरहनि विस गढ़ दहन मधव धनु अग्र लिय ॥

गरजि गहर जल भरित हरित छिति छत्र किय ॥
मनहु दिसान निसानति आनि अनंग दिय ॥४६॥

॥ गीतामालाची ॥

द्विग भरित धूमिल जुरति भूमिल कुमुद त्रिम्मल सोभिलं ॥
द्रुम अंग वल्लिय सीस हल्लिय कुरलि कंठह कोकिलं ।
कुसुमंज कुंज सरीर सुभर सलिल दुम्भर सद्यं ॥
नद रोर दहर मोर नदुर बनसि बहर बद्यं ॥५०॥
भम भमकि विज्जल काम किज्जल श्रवति सज्जल कद्यं ॥
पप्पीह चीहति जीह जंजिर मोर मंजरि मंद्यं ॥
जगमगति भिगन निसि सुरंभन भय अभय निसि हद्यं ॥
मिलि हंस हंसि सुवास सुंदरि उरसि आनन निद्वयं ॥५१॥
उट सास आस सुवास वासुर छलित कलि वपु सद्यं ॥
संयोग भोग संयोग गामिनि विलसिराजन भद्यं ॥५२॥

॥ साटक ॥

जे विज्जु भूमल फुटिट तुटिट तिमिरं, पुन अंधनं दुस्सहं ॥
बुंद घोर तरं सहंत असहं, वरषा रसं संभरं ॥
विरहीनं दिन दुष्ट दारुन भरं, भोगो सरं सोभनं ॥
मा मुक्के पिय गोरियं च अबलं, प्रीतं तया तुच्छया ॥५३॥

॥ दूहा ॥

सुनि श्रावन बरिषा सघन । सुष निवास त्रिप कीय ॥
बर पूरन पावस कियौ । राज पयान सु दीय ॥५४॥
हंसावति सुंदरि सुग्रह । गवौ प्रीय प्रथिराज ॥
धर उत्तिम कनकजल दिसि । चलन कहत नृप आज ॥५५॥
दिषिष वदन पिय पोमिनी । फुनि जंपै फिरि बाल ॥
सरद रबन्नौ चंद निसि । कित लभै छुटि काल ॥५६॥

॥ साटक ॥

पित्ते पुत्त सनेह गेह गुपता, जुगता न दिव्यादने ॥
राजा छत्रनि साज राज छितिया, निंदायि नीवासने ॥

कुसुमेषं तन चंद त्रिम्मल कला, दीपाय वरदायने ॥
मा मुक्के प्रिय बाल नाल समया, सरदाय दर दायने ॥५७॥

॥ दूहा ॥

आयौ सरद स इंद्र रिति । चित पिय पिया संजोग ॥
दिन दिन मन केली चढ़े । रस जु लाज अलि भोग ॥५८॥

॥ कवित्त ॥

पिषि रयनि त्रिम्मलिय । फूल फूलंत अमर धर ॥
श्रवन सबद नहिं सुभै । हंस कुरलंत मान सर ॥
कवल कद्रव विगसंत । तिनह हिमकर परजारै ॥
तुमहि चलत परदेस । नहीं कोइ सरन उबारै ॥
निग्रहन रत्त भरपंच सर । अरि अनंग अंगै वहै ॥
जौ कंत गवन सरदै कहै । तौ विरहिनि सिष ह्वै दहै ॥५९॥
द्रप्पन सम आकास । श्रवत जल अमृत हिमकर ॥
उज्जल जल सलिता सु । सिद्धि सुंदर सरोज सर ॥
प्रफुलित ललित लतानि । करत गुंजारव भंमर ॥
उदति सित्त निसि नूर । अंगि अति उमगि अंग बर ॥
तलफंत प्रान निसि भवन तन । देषत दुति रिति मुष जरद ॥
नन करहु गवन नन भवन तजि । कंत दुसह दारुन सरद । ६०॥

॥ माधुर्य ॥

लहु वरन षट विय सत्ता, चामर बीय तीय पयोहरे ॥
माधुर्य छंदय चंद जंपय, नाग बाग समोहरे ॥
अति सरद सुभगति राज राजति सुमति काम उमहयं ॥
ग्रह दीप दीपति जूप जूपति भूपति भूप भूपति सहयं ॥६१॥
नव नलिनि अलि मिलि अलिन अलि मिलि अलिनि अलिब्रत मंडियं ॥
चक चकी चकित चकोर चषित चच्छ छंडित चंदयं ॥
दुज अलस अलसनि कुसुम अच्छित कुसुम मुदित मुदयं ॥
भव भवन उच्छव तरु असोकहि देव दिव्य निनहयं ॥६२॥
नौरता मंत्रहि न्रपति राजत वीर भंभरि बगयं ॥
महि महिल लच्छिर सुभ्रित अच्छिर सकति पाठ सुदुगयं ॥
अट्ठार भारह पुषित अन्नित अधर अमृत भामिनी ॥
रस तीय राजन लहय सोजन सरद दीपक जामिनी ॥६३॥

॥ कवित्त ॥

नव नलिनी अलि मिलहि । अलिन अलिमिलि वृत मंडै
तनु त्रम्मल पह चंद । चष चक्कोरति छंडे ॥
दुज अलसित वर निगम । कुसुम अच्छित मुद्रावलि ॥
पित्र नेह ग्रेह रचें । बाल छुट्टे अलकावलि ॥
करि स्नान धूत बसतर रचें । कंज वदन चित्रंग चरि ॥
आनूप जूप अंजन रचै । बिना कंत तिय गुन सुगरि ॥६४॥
चंद रयनि त्रिम्मली । सरिस आकास अभ्यासित ॥
पिया बदन सो चंद । दोइ कुच चिकुर प्रगासित ॥
षंजन नयन अलोल । कीर नासा त्रम्मल मुति ॥
उज्जल वस्त्र अनूप । पुहप भाजन रजता भति ॥
नव गात त्रिमल सुदरि सरल । नवल नेह नित नित भलौ ॥
चित चतुर रीति बुझ्भै त्रपति । सरद दरद करि मति चलौ ॥६५॥

॥ दूहा ॥

हिम आगम वित्त सरद । गवन चित्ता त्रप इंद ॥
पुछन कुरंभी महल गय । सरद ग्रेह वर चंद ॥६६॥

॥ साटक ॥

छिन्न बासुर सीत दिध निसया; सीत जनेत बने ॥
सेज सज्जर बानया बनितया, आनंग आलिगने ॥
यो बाला तरुनी वियोग पतनं, नलिनी दहन्ते हिमं ॥
मा मुक्के हिमवंत मन्त गमने, प्रमदा निरालम्बनं ॥६७॥

॥ रोला ॥

कुच वर जंघ नितंब निसा बद्धत धन बद्धौ ॥
लंक छीन उर छीन छीन दि सीत सुचद्धौ ॥
गिरकंदर तप जुगति जागि जोगीसर मनं ॥
ते लभे कविचंद वाम कामी सर धनं ॥६८॥

॥ कवित्त ॥

देह धरें दो गति । भोग जोगह तिन सेवा ॥
कै वन कै वनिता । अगनित तप कै कुच लेवा ॥

गिरिकंदर जल पीन । पियन अधरारस भारी ॥
 जोगिनीद मद उमद । कै छगन वसन सवारी ॥
 अनुराग बीत कै राग मन । बचन तीय गिर भरन रति ॥
 संसार विकट इन विधि तिरय । इही विधी सुर असुर अति ॥६७॥
 रोमावलि वन जुथ्य । बीच कुच कूट मार गज ॥
 हिरदै उजल विसाल । चित्त आराधि मंडि सज ॥
 विरह करन क्रीलइ । सिद्ध कामिनी डरपै ॥
 तो चलंत चहुआन । दीन छंडे पै रूपै ॥
 हिमवंत कंत मुक्कैन त्रिय । पिया पन्न पोमिनी परधि ॥
 ग्रहि कंठ कंठ ऊठन अवनि । चलत तोहि लगिवाय रूप ॥७०॥
 न चलि कंत सुभचित । धनी बहुवित प्रगासौ ॥
 गह गहि ऐसी प्रेम । सौज आनंद उहासी ॥
 दीरघ निसि दिन तुच्छ । सीत संतावै अंगा ॥
 अधर दसन घरहरै । प्रात परजरै अनंगा ॥
 जा ऐनि रैन हर हर जपत । चक्क सह चक्की कियौ ॥
 हिमवंत कंत सुग्रह ग्रहति । हहकरंत फुट्टै हियौ ॥७१॥

॥ त्रोटक ॥

गुरु पंच सुभै दस मत्तपयो । श्रिय नाग हर्यौ हरबाहनयो ॥
 इति छंद विछंद विलास लहै । तत त्रोटक छंद सुचद कहै ॥७२॥
 दिव दुर्ग निसा दिन तुच्छ रवै । जरि सीत बन बनवारि जवै ॥
 चक चक्कि चकी जिम चित्त भवै । नितवांम प्रिया मुष मोरिठवै ॥७३॥
 बिरही जन रंजन हारि भियं । घनसार मृगंमद पुंज कियं ॥
 पहुपंकति पुंजति कन्त जियं । परिरंभन रंभन रे रतियं ॥७४॥
 नव कुंडल मंडल क्रन्न रमै । कच अभ्रपटी जनु बीज भ्रमै ॥
 कुसमावलि तुटिट लवग लगं । बरनं रचि छुट्टति पंति बगं ॥७५॥
 श्रम बुंदति मुक्ति भरं उरनं । भलती जनु गिम्ह सिवं सरनं ॥
 कटि मंडल घंटी रमन्नि रवै । सुरमंजु मंजीर अमीय श्रवै ॥७६॥
 रति ओज मनोज तरंग भरी । हिमवंत महा रित राज करी ॥७७॥

॥ दूहा ॥

संगम सुष सुत्तौ नृपति । ग्रिह विन एक न होइ ॥
 सुनि चहुआन नरिंद बर । सीत न मुक्कै तोइ ॥७८॥

हिमवित्यौ आगम शिशिर । चलन चाइ चहुआन ॥
सुनि पिय आगम शिशिर कौ । क्यों मुक्कै ग्रिह थान ॥५६॥

॥ साटक ॥

रोमाली वन नीर निद्ध चरयो गिरिदंग नारायने ॥
पठवय पीन कुचानि जानि मलया, फुंकार भुंकारए ॥
सिसिरे सर्वरि वारुनी च विरहा माहद मुठवारए ॥
मां कंते त्रिगबद्ध मध्य गमने, कि दैव उच्चारए ॥५७॥

॥ दूहा ॥

अरिय सघन जीतन दिसा । चलन कहत चहुआन ॥
रतिपति चल होइ पिथ्य गय । ग्रह हमीर ग्रिह जानि ॥५८॥

॥ कवित्त ॥

आगम फाग अवंत । कंत सुनि मित्त सनेही ॥
सीत अंत तप तुच्छ । होइ आनंद सब ग्रेही ॥
नर नारी दिन रैन । मैंन मदमाते बुल्लै ॥
सकुच न हिय छिन एक । बचन मनमानै बुल्लै ॥
सनौ कंत सुभ चित करि । रयनि गवन किम कीजइय ॥
कहि नारि पीय बिन कामनी । रिति ससिहर किम जीजइय ॥५९॥

॥ हनूफाल ॥

गुर गरुअ चामर नंद । लहु बरन विच विच इंद ॥
विवहार पय पय बंद । इति हनूमानय छंद ॥६०॥
रिति ससिर सरवरि सोर । परि पवन पत्त भकोर ॥
पन त्रिगुन तुल्ल तमोर । घन अगर गंध निचोर ॥६१॥
भुअ भोज व्यंजन भोर । लव अमर तिष्ठ कठोर ॥
रस मधुर मिष्टित थोर । रति रसन रमनति जोर ॥६२॥
कल कलस त्रित्त किलीर । वय स्याम गुन अति गोर ॥
परि पेम पेम सजोर । अवलोक लोचन ओर ॥६३॥
इति ससिर सुष विलसंत । रिति राइ आय वसंत ॥
षटु रिनु षट रमनीय । रषि चंद वरनन कीय ॥६४॥

॥ कवित्त ॥

कुंज कुंज प्रति मधुप । पुंज गुंजत वैरनि धुनि ॥
 ललित कंठ कोकिल । कलाप कोलाहल सुनि सुनि ॥
 राजत वन मंडित । पराग सौरभ सुगंधिन ॥
 विकसे किसुक विहि । कदंब आनंद विविध धुनि ॥
 परिरंभ लता तरवरह सम । भए समह वर अनग तिथि ॥
 विच्छुरन छिनक संपत्ति पति । कंत असंत बसंत रिति ॥८८॥

॥ दूहा ॥

षट रिति वारह मास गय । फिरि आयौ रु वसंत ॥
 सो रिति चंद बताउ मुहि । तिया न भावै कंत ॥८९॥
 जौ नलिनी नीरहि तजै । सेस तजै सुरतंत ॥
 जौ सुवास मधुकर तजै । तौ तिय तजै सु कंत ॥९०॥
 रोस भरै उर कामिनी । होइ मलिन सिर अंग ॥
 उहि रिति त्रिया न भावई । सुनि चुहान चतुरंग ॥९१॥

॥ चौपाई ॥

षट्ट सु वरनी विथ षट मासं । रषे वर चहु आन विलासं ॥
 ज्यौ भवरी भवरं कुसुमंगा । त्यों प्रथिराज कियौ सुष अंगा ॥९२॥

॥ दूहा ॥

बर वसंत अंगें जियति । सेन सजी बहु भार ॥
 दिसि कनवज वर चढ़न को । चितवति संभरिवार ॥९३॥
 कै जानै कविचंदई । कै प्रयान प्रथिराज ॥
 सित सामंत सु संमुहै । पंगराय ग्रह काज ॥९४॥

॥ दूहा ॥

ग्यारह से एकानवै । चैत तीज रविवार ॥
 कनवज देषन कारनै । चलयौ सु संभरिवार ॥९५॥

॥ कवित्त ॥

ग्यारह से असवार । लष लीने मधि लेलैं ॥
 इसे सूर सामंत । एक अरि दल बल भषैं ॥

तनु तुरंग बर वज्र । वज्र ठेलै वज्रान्न ॥
 बर भारथ सम सूर । देव दानव मानव नन ॥
 नरजीवनाम भंजन श्रिय । रुद्र भेस दरसन नपति ॥
 मेढ्यौ सु यह भर सम्भई । दिपति दीप दिवलोक पति ॥६६॥
 कनकजह जयचंद । चलयौ दिल्लीपति पिषन ॥
 चंद बरदिय तथ्य । सथ्य सामंत सूर धन ॥
 चाहुआन कूरंभ । गौर गाजी बडगुज्जर ॥
 जादव रा रघुवंस । पार पुंडीरति पण्णर ॥
 इत्तने सहित भूपति छद्यौ । उड़ी रेन छीनी नभौ ॥
 इक लष लष बर लेषिए । चले सथ्य रजपूत सौ ॥६७॥

॥ दूहा ॥

तट कालिंदी तहं विमल । करि मुकाम नृप राज ॥
 सथ्य सयन सामंत भर । सूर जु आये साज ॥६८॥

॥ दूहा ॥

रति माधव मोरे सु तरु । पुहप पत्र बन बेलि ॥
 राज कबी करतह चले । सम सामंतन केलि ॥६९॥

॥ दूहा ॥

इन सगुन दिल्लिय नपति । संपत्तौ भूसाम ॥
 कोस तीस दुअ अगारौ । कियौ मुकाम सु ताम ॥१००॥
 सहि राज रनबीर तहं । किय भोजन सु उताम ॥
 सब आहारे अन्न रस । चढ्या जाम निसि जाम ॥१०१॥

॥ दूहा ॥

पहु फट्टिय घट्टिय तिमिर । तमचूरिय कर भान ॥
 पटुमिय पाय प्रहारनह । उदो होत असमान ॥१०२॥
 रत्तंबर दीसै सुरबि । किरन परषिय लेत ॥
 कलस पंग नहिं होय यह । विय रबि बंध्यौ नेत ॥१०३॥
 रबि तंमुह संमुह उठ्यौ । इह है मगग समुक्कि ॥
 भूति भट्ट पुष्वह चलिय । कहि उत्तर कनकज ॥१०४॥
 बंचन फूलिय अर्क बन । रतनह किरनि प्रसार ॥
 सुधि कलस जयचंद घर । संभरि संभरिवार ॥१०५॥

गंगा तट साधन सकल । करहि जु भाँति अनेक ॥
नट नाटिक संभरि धनी । बर बिख्यात छवि केक ॥१०६॥

॥ कवित्त ॥

अंबुज सुत उमया बिलोकि । वेद पढ़त पलि बीरज ॥
सहस बहत्तरि कुंअर । उपजि भीजंत गंग रज ॥
आभूषण अंबर सुगंध । कवच आयुध रथ संतर ॥
रविमंडल के पास । रहत चौकी सु निरंतर ॥
चहुवांन चमूं तिन समर जत । सु कविचंद ओपम कथिय ॥
सामंत सूर परिगह सकल । उतरि तट भागीरथिय । १०

॥ दूहा ॥

रहसि केलि गंगह उदक । सम नरिंद किय केलि ॥
चिरन त्रिभंगी छंद पढ़ि । चंद सु पिंगल मेलि ॥१०७॥

॥ त्रिभंगी ॥

हरि हरि गंगे तरल तरंगे अघ कित भंगे त्रित चंगे ॥
हर सिर परसंगे जटनि बिलंगे विहरति दंगे जल जंगे ॥
गुन गंधर्व छंदे जै जै वंदे कित अघ कंदे मुप चंदे ॥
मति उच गति मंदे दरसत नंदे पढ़ि वर छंदे गत दंदे ॥१०८॥

॥ दूहा ॥

कूच करिग भावी श्रवन । बर वर चलि सहरत्त ॥
प्रात भयौ कनवज्ज फिरि । सुनि निसान धुनि पत्त ॥११०॥
हर सिद्धी परनाम करि । राधि समंत सु साज ॥
कनवज दिष्यन राज ग्रह । चलयौ चंद वर राज ॥१११॥
भवर टोल भंकार वर । सुमन राइ फल लिद्ध ॥
कूर दिष्ट मन रह वढी । ससि तारक भ्रित रिद्ध ॥११२॥

॥ पद्धरी ॥

बर मग्न बग्न चिहु कोद दिषिष । विस्तार पंच जोजन्न लषिष ॥
कछ मग्न भोमि चिहु मग्न दिस्सि । नारिग सुमन दारिम विगस्सि ॥११३॥
प्रतिव्यंभ अंभ भलकत सरूप । उप्पम्म तास बरनत अनूप ॥
नव विद्ध गति सह जल प्रवेस । मुसकंत भुंड दिषी सुदेस ॥११४॥

प्रतिव्यंभ भलकि चंपक प्रसून । उप्पंम देषि कविचंद दून ॥
दीपक्क माल मनमथ्य कीन । हरभयति दिषि इह लोक दीन ॥
हलहलत लता दमकंत वाय । मनु बध्वौ सपतसुर भंग पाइ ॥
चल्लै सुगंध वर सीत वत्त । जानियै सब्ब हथ्थीन जित्त ॥११६॥

॥ भुजंगी ॥

तहां प्रात प्रातं विंबं अंब मौरै । सुरं कंठ कलियंठ रस प्रस्स भोरे ॥
फली फूल बेली तरुं चट्ठि सौहै । तिनं ओपमा दैन कविचंद मोहै ॥
रबी तेज देषी ससी बाल भागी । मनो तारिका उड्डि तर सब्ब लागी ॥
कहों जूहि जंभीर गंभीर वासी । तभी तप्पनी सेव सीसंम सासी ॥११८॥
प्रसै मोर मकरंद उडि बाग में ही । मनो विरहिनी दिघ्व उस्सास लेही ॥
कितें एक बीजोर फल भार लुट्टै । मनो जीवनं पीउ पीयूष फुट्टै ॥११९॥
कहूं सेवसत्ती फुलै ते प्रकारं । किधों दिषियं प्रगट मकरंद तारं ॥
कहूं सोभही थट्ट गुल्लाल फूलं । चणं भोर मकरंद सहफूल भूलं ॥१२०॥
वरं बोर मरि फूल फूली सुरगी । छके भोर भौरं मनं होड पंगी ॥
कहूं कहली सेसुरंगं जु पंती । किधों मंतमथ्यं किबीचै धमंती ॥१२१॥
वरी एक चहुआन तिन थान राही । असंसार संसार संसार काही ॥
तरं पिंड आकास फुल्लै निनारै । वरन्नं वरन्नं अनेकं सवारै ॥१२२॥
सबै कबिबराजं उपम्मा न पंगी । मनो नौ ग्रहं वार रस आय मंगी ॥
कवी जे जुवानं मनं ओप जानै । कवी जेम वत्तं रसं सो बषानै ॥१२३॥
न लालं न पिंगी पजूरं अमंगी । नरं उंच त्रिषंत सो सीस पंगी ॥१२४॥

॥ दूहा ॥

विलम सगुन चलयौ नृपति । नेन दरसि सो सथ्थ ॥
वर दीसी हट नैर कौ । मिलन पसारत हथ्थ ॥१२५॥
नगर प्रवेसनि देषि नृप । जूप साल जेठाइ ॥
ता वृन्नन रस उप्पज्यौ । कहत चंद वरदाइ ॥१२६॥

॥ दूहा ॥

अमग हट्ट पट्टन नयर । रत्न मुत्ति मनिहार ॥
हाटक पट धन धात सह । तुछ तुछ दिष सवार ॥१२७॥

॥ मोतीदाम ॥

अमगति हट्टति पट्टन मंभ । मनो द्रग देवल फूलिय संभ ॥
जु नषहि मोरि तमोरि सु ठार । उलिचत कीच किपीक उगार ॥१२८॥

मितै पद पद सु वेदल चंप । सु सीत समीर मनो हिम कंप ॥
 जु बेलि सेवंतिय गुंथहि जाइ । दियै द्रब दासि सु लेहि ढहाइ ॥१२६॥
 जराव कनकक जरंज कसंत । मनो भयो बासुर जामिन अंत ॥
 कसिककसि हेम सु काढत तार । उगंत कि हंसह क्रन्न प्रकार ॥१३०॥

॥ दूहा ॥

हय गय दल सुंदरि सैहर । जौ बरनों बहुबार ॥
 इह चरित्र कहं लगि कहूँ । चलि पदुपंग दुआर ॥१३१॥
 चलत अगग दिष्यौ नृपति । हरि सिद्धी सु प्रसाद ॥
 चंद नम्मि अस्तुत करिय । हरिय अघघ अपराध ॥१३२॥
 कौतूहल दिष्यै सकल । अकल अपूरब बट्ट ॥
 पानधार छर छगरह । राजग्रही बर भट्ट ॥१३३॥

॥ कवित्त ॥

गज घंटन हय षेह । विविध पसुजन समाज इव ॥
 घन निसान घुम्मरत । प्रबल परिजन समध्यनव ॥
 विविध बज्ज बज्जत सु । चंद भर भीर उमत्तिय ॥
 इक्क लत्त आवत सु । इक्क नरपत्ति समग्थिय ॥
 पुंभीय अबनि सुम्भय महल । जनु डुल्लित उम्भिय करन ॥
 दरबार राज कमधज्ज कौ । जग मंडन मम्भह धरनि ॥१३४॥

॥ सुरलिल ॥

पुच्छत चंद गयो दरवारह । जहाँ हेजम रघुवंस कुमारह ॥
 जिहि हरि सिद्धि पास वर पायौ । सु कविचंद दिल्लिय तैं आयौ ॥१३५॥

॥ सुरलिल ॥

रुकि कविद हेजम बुल्लिय हसि । कोन थान बर चलिथ कोन दिस ॥
 को त्रप सब देव का नाम । किहि दिसि चित कस्यौ परिनाम ॥१३६॥
 हो हेजम रघुवंश कुमार । त्रिप चहुआन प्रथीअवतार
 फिर ढिल्ली कविथान नरिंद । मो बर नाम कहै कवि चंद ॥१३७॥

॥ दूहा ॥

नृप कवि हेजम मद्धि दर । रषि गयो त्रप पास ॥
 भट्ट संपतौ राज पै । वैंने चंद बिलास ॥१३७॥

सीस नायि बल्ली वयन । औसर पंग रजेस ॥
कवि जौ जुगिनि - पुर कहै । संपत्ती द्बारेस ॥१३६॥

॥ दूहा ॥

हक्कार्यौ हेजम्म कवि । निकट बोलि नृप ईस ॥
सरसैं बर संभारि करि । कवि दीनी असीस ॥१४०॥

॥ कवित्त ॥

जिम ग्रह पित ग्रहपति । जिम सु उड़पति तारायन ॥
मधि नाइक जिम लाल । जिम सु सुरपत नाराइन ॥
जिम विषयन संग मयन । सकल गुण संग सील जिम ॥
वरन मध्य जिमि उगति । चित्त इंद्रिय जालह तिम ॥
अनि अनि नरेस भर भीर सर । दारिम नृप मंदिर मरिय ॥
दिख पंग पानि उन्नित करिय । सुकविचन्द आसिष्य दिय ॥१४१॥

॥ दूहा ॥

पंग पर्यप्यौ कवि कमल । अमर सु आदर कीन ॥
पुष नरेस परसंन रिट्टि । सब जंपयौ प्रवीन ॥१४२॥
मुह दारिद्र अरु तुच्छ तन । जंगल राब सु हद ॥
बन उजार पसु तन चरन । क्यों दूबरौ बरद ॥१४३॥

॥ कवित्त ॥

चढ़ि तुरंग चहुआन । आन फेरीत परद्वर ॥
तास जुद्ध मंडयौ । जास जनयौ सबर बर ॥
केइक तकि गहि पात । केइ गहि डार मुर तरु ॥
केइत दंत तुछ त्रिन्न । गए दस दिसनि भाजि डर ॥
भुअ लोकत दिन अचिरिजं भयौ । मान सबर बर मरदिया ॥
प्रथिराज पलन पट्टौ जु घर । सु यों दुब्वरौ बरदिया ॥१४४॥
हंस न्याय दुब्वरौ । मुत्ति लम्भै न चुनंतह ॥
सिंघ न्याय दुब्वरौ । करी चंपे न कंठ कह ॥
मृगा न्याय दुब्वरौ । नाद बंधियै सु बंधन ॥
छैल छक्क दुब्वरौ । त्रिया दुब्वरी मीत मन ॥
आसाढ़ गाढ़ बंधन धुरा । एकहि गहि हहरदिया ॥
जंगर जुरारि उज्जर घर न । क्यों दुब्वरौ बरदिया ॥१४५॥

पुरै न लग्गी आरि । भारि लघौ न पिठ्ठ पर ॥
 गज्जवार गंभार । गही गठ्ठी न नथ्य कर ॥
 भ्रम्यौ न कूप भावरी । कबंधुक सव सेन रुतौ ॥
 पंच धारि ललकारि । रथ्य सथ्या जह जुतौ ॥
 आसाढ़ मास बरपा समै । कंध न कहों हरदिया ॥
 कमधज्ज राव इम उच्चरै । सु क्यौ दुब्वरौ बरदिया ॥१४६॥

फुनि जंपै कविचंद । सुनौ जैचंद राज बर ॥
 पुरै आरि किम सहै । भार किम सहै पिठ्ठपर ॥
 नथ्य हथ्य किम सहै । कूप भावरि किम मंडै ॥
 है गै सुर बर सुधर । स्वामि रथ भारथ तंडै ॥
 बरपा समान चहुआन कै । शरि उर बारह हरदिया ॥
 प्रथिराज पलनि पट्टौ सु पर । सुइम दुब्वरौ बरदिया ॥१४७॥

प्रथन नगर नागौर । बंधि साहाब चरिग तिन ॥
 सोभंत्ते भर भीम । सीम सोधीत सकल बन ॥
 मेवाती मुगल महीप । सब्ब पत्रजु षट्ठा ॥
 ठढ्ढा कर ढिल्लिया । सारस संमूर न लढ्ढा ॥
 सामंत नाथ हथ्या सु कहि । लरिकैं मान मरदिया ॥
 प्रथिराज पलन पट्टौ सु पर । यौ दुब्वरौ बरदिया ॥१४८॥

सुनत पंग कवि बयन । नयन श्रुति वदन रत्त वर ॥
 भुवन बंक रद अधर । चंपि उर उससि सास भर ॥
 कोप कलंमलि तेज । सुनत विक्रम अरि क्रम्मह ।
 सगुन विचार कमंध । दिष्पि दिह चंद सु पिम्मह ॥
 आदर सुभट्ट राजिद किय । अंग एंडाइ बिसतारि कर ॥
 नन मिलत मोहि संभरि धनिय । कहौ बत्ता मुष विरद वर ॥१४९॥

जिहि बरद चढि कै । गंग सिर धरिय गवरि हर ॥
 सहस मुष्प संपेपि । हार किन्नौ भुजंग गर ॥
 तिहि भुजंग फन जोर । मोलि रूष्पौ वसुमत्तिय ॥
 वसुमत्ती उप्परै । मेरगिरि सिंधु सपत्तिय ॥
 ब्रह्मंड मंड मंडिय सकल । धवल कंध करता पुरस ॥
 गरुअत बिरद पहुपंग दिय । कपा करिय भट्टह सरिस ॥१५१॥

॥ दूहा ॥

आदर किय नृप तास कौ । कह्यौ चंद कवि आउ ॥
मिले मोहि द्विष्टिय धनी । सु वत कहिग समभाउ ॥१५१॥
उनि मातुल मुहि तात कहि । नित नित प्रेम बढंत ॥
जिमि जिमि सेवस अदरिय । तिम तिम दान चढंत ॥१५२॥
कितक सूर संभरि धनी । कितक देस दल बंधि ॥
कितक हथ रन अगगरी । हसि नृप ब्रह्म्यौ चंद ॥१५३॥

॥ कवित्त ॥

कितक सूर संभरि नरेस । अंदेस कहत करि ॥
कितक देस बल बंधि । राव रावत छत्रधर ॥
कितक कोस मंगल मदंध । तोषार भार भर ॥
कितक गहि करिवार । कलह बिहारि बीर भर ॥
कित इक मौज विदरन बहत । अतिपर आगम जानियै ॥
उगौ न अरक तित्तह लगै । तिमिर तितें बल मानियै ॥१५४॥

॥ दूहा ॥

विहसत कवि चुल्ल्यौ बयन । इह लच्छन छिति है न ॥
सूअ सु मूरति लच्छनह । को दिषवों पहु नैन ॥१५५॥
मुकट बंध सब भूप है । सब लच्छन संजुत ॥
कौन बरन उनहार किहि । कहि चहुआन सु उत्त ॥१५६॥

॥ कवित्त ॥

वत्तीसह लच्छनह । बरस छत्तीस मास छह ॥
इस दुज्जन संग्रहत । राह जिस चंद सूर ग्रह ॥
एक छुटहि महिदान । एक छुट्टि दंड भर ॥
एक गहहि गिर कंद । एक अनुसरहि चरन परि ॥
चहुआन चतुर चावदिसहि । हिंदवान सब हथ जिहि ॥
इम जपै चंद वरदिया । प्रथीराज उनहारि इहि ॥१५७॥
इसौ राज प्रथीराज । जिसौ गोकुल महि कन्हह ॥
इसौ राज प्रथीराज । जिसौ पथर अहि वन्तह ॥
इसौ राज प्रथीराज । जिसौ अहंकारिय रावन ॥
इसौ राज प्रथीराज । राम रावन संतावन ॥

बरस तीस छह अगारौ । लच्छिन सब संजुत गनि ॥
 इम जंपै चंद बरहिया । प्रथीराज उनहारि इनि ॥१५८॥
 दिषिष नयन कमधज्ज । नरेस अंदेस वृद्ध वर ॥
 दंग दहन जीरन जरंत । परचंत अंत पर ॥
 श्रुति अरुन मुष अरुन । नेन आरत्त पत्त सम ॥
 पानि मीडि दवि अधर । दंत दब्बंत तेज तम ॥
 कविचंद बहुत बुल्लहु बयन । छित्ति अछित्ति षत्री कवन ॥
 चलदलसमानरसना चपल । विफल बाद मंडौ मवन ॥१५९॥

॥ दूहा ॥

देषि थवाइत थिर नयन । करि कनवज्ज नरिद ॥
 नयन नयन अंकुरि परिय । इक थह दोइ मयंद ॥१६०॥

॥ कवित्त ॥

दिषिष नयन रा पंग । दंग चहुआन महा भर ॥
 अंकुरि नयन विसाल । भाल भारंत रंच उर ॥
 इक्क थार कंठीर । पल न आकज्ज करत तमि ॥
 बर बारुनी समग । मत्त मातंग, रोस जमि ॥
 कमधज्जराज फिरि चंद कहु । कहत बत्त संभरधनिय ॥
 बर बर कवित्त कवि उच्चरिय । अबसुकित्ति कथी घनिय ॥१६१॥
 अति गंभीर पहु पंग । मन सु दब्बै द्विग लज्जइ ॥
 कवन काज छगगरह । पानि ग्राही भट कज्जइ ॥
 कित्त काज करि बेंन । बानि बंदन बरदाइय ॥
 श्रवन राग हम तुमै । दिष्ट गोचर तत लाइय ॥
 संभरे जंम देषै सुभट । अंत निमत पुज्जै मिलत ॥
 सोमेस पुत्त तुम हित्त करि । क्यौं मुभ्भहि नाहीं मिलत ॥१६२॥

॥ दूहा ॥

मत मंतौ लहु मंत कहि । नीतें नीति बढंत ॥
 जिम जिम सैसव सो दुरै । तिम तिम मदन चढंत ॥१६३॥

॥ दूहा ॥

सत सुवत्त कविचंद मुष । तष पुच्छिय इह बत्त ॥
 हों पुच्छो चाहूँ सुमति । सो जंपौ कवि तत्त ॥१६४॥

जे त्रिय पुरिष रस परस बिन । उठिगराइ सु निसान ॥
 धवलग्रह संपन्न कहि । भट्टहिं अप्पन पान ॥१६५॥
 महल अदिट्ट चिय दिट्ट सुअ । क्यों ब्रन्नै बर कब्बि ॥
 सरसैं बुधि ब्रन्नन कर्यौ । मुष दिष्से नन रब्बि ॥१६६॥
 कल्लुक सयन नयनह करिय । कुल्ल किय बयन बषान ॥
 कल्लु इकलछिन विचार किय । अति गंभीर सु जानि ॥१६७॥

॥ कवित्त ॥

आय निकट रापंग । अंग आरथन बेद बर ॥
 अति सुगंध तंमोर । रंग जुत धरय जुथ्य पर ॥
 दिष्पि त्रिपति प्रथिराज । दासि आरोहि सीस पट ॥
 मनहु काम रति निरषि । सकुचि गुर पंच मद्धि घटु ॥
 कमधज्ज राज संकुल सभा । अकुल सुभर दरसंत दिस ॥
 उस्ससे अंग उभरि अरषि । परसपर सु अवलोकि सिस ॥१६८॥

॥ चौपाई ॥

चहुआनह दासी सिर कंषिय । पुर रठ्ठौर रही दिसि नंषिय ॥
 बिगरत केस पुरुष नहिं अंकिय । प्रथीराज देषत सिर ढंकिय ॥१६९॥

॥ अरिल्ल ॥

ढंकित केस लषो भय भूपह । दिन दिन दिस्स कहां राई मह ॥
 कविवर सथ्य प्रथीनृप आयौ । सो लच्छिन्न बर दासि बतायौ ॥१७०॥

॥ कवित्त ॥

अप्प अप्प भट अटक । षटकि पट दासि मंडि सिर ॥
 इक्क चवै कत बढन । एक षल नथ्य जानि थिर ॥
 इक्क कहै प्रथिराज । इक्क जंपय षत्रास बर ॥
 दिष्प दरस रयसिघ । कहत दीवान अज्ज भर ॥
 कठिठया विकट केहरिकहर । जहर भार अंगय मनह ॥
 संप्रहौ आय रिपु दुष्ट ग्रह । समय सद्ध रा पंग कह ॥१७१॥

॥ वृहा ॥

मै चकि भूप अनूप सह । पुरुष जु कहि प्रथिराज ॥
 सुमति भट्ट सथ्यह अछै । जिहि करंत तिय लाज ॥१७२॥

॥ अरिहृत् ॥

करि बल कलह स मंत्री मार्यौ । नहि चहुआनसरन बिचार्यौ ॥
 सैन सुबर कहि कवि समुभाई । अब तू कलह करन इहां आई ॥१७३॥
 सभभिदासि सिर बर तिन ढंक्यौ । कर पल्लव तिन द्रग बर अंक्यौ ॥
 कव रस सबै सभा कमधज्जो । भैवकि भूप सिंगिनी सज्जी ॥१७४॥

॥ कवित्त ॥

बर अद्भुत कमधज्ज । हास चहुआन उपग्नौ ॥
 करुना दिसि संभरी । चंद बर रुद्र दिपन्नौ ॥
 बीभल वीर कुमार । वीर बर सुभट विराजै ॥
 गोप बाल भंषतह । द्विगन सिंगार सु राजै ॥
 संभयौ संतरस दिषि बर । लोहालंगरि बीर कौ ॥
 मंगाइ पान पहुपंग बर । भयनवरसनवसीर कौ ॥१७५॥

॥ दृष्टा ॥

अपि मान सनमान करि । नहि रण्यौ कवि गोय ॥
 जु कलु इच्छ करि मंगिहौ । प्रात समप्पों सोय ॥१७६॥
 हक्कार्यौ रावन नृपति । के के मुक्कि सुबास ॥
 पच्छि दिस्सि जैचंद पुर । तिहि रण्यौति अवास ॥१७७॥

॥ कवित्त ॥

तव राजन जैचंद । बोलि सोमित्र प्रधानह ॥
 अरु प्रोहित श्रीकंठ । मुकंद परिहार सुजानह ॥
 दियौ राइ आएस । जाहु सो कवियन थानह ॥
 विविध अन्न व्यंजनह । सरस रसरंग रसानह ॥
 तंमोरकुसुम केसरि अग्र । कट्ट कपूर सुगंध सह ॥
 आदर अनंत उपचार बर । करि सु प्रसन्नह कविय कह ॥१७८॥

॥ दृष्टा ॥

अगि मोकलि रावन नृपति । हक्कार्यौ कबिराज ॥
 भट्ट हट्ट मोकलि सुबर । कंक विसाहन काज ॥१७९॥

॥ कवित्त ॥

गयौ रावन मेल्लहान । चंद बरदिया समष्पन ॥
 देषि सिंघासन सद्यो । पास पारस्स इंद्र जनु ॥

कवि आदर बहु कियौ । देषि कनवज्ज मुकट मनि ॥
इह दिल्लिय सुर दत्त । बियौ नहि गनै तुम्ह गनि ॥
थिरु रहै थवा इत वज्र कर । छंडि सिकारहि छिन कुरहि ॥
जिहि असिय लष पलानि यहि । पान देहि दिढ ह्दय गहि ॥१८०॥

॥ कवित्त ॥

गहि कर पान सु राज । फिर्यौ निज पंग ग्रेह बर ॥
सोमंत्रिक परधान । बोल उच्चरिय क्रोध भर ॥
गहौ राज संभरि नरेस । सामंत अंत रिन ॥
मिटै बाल उर आस । आस जीवन सु मिटै तिन ॥
बोलिय सुमित्र कमधज्ज बर । छगगर भट्ट न पृथु गहन ॥
भृत भ्रात तात सामंत सुत । छलन काज पट्टिय पहन ॥१८१॥
कहि सब कनवज राइ । भजि प्रथिराज जाइ जिन ॥
असिय लष हय दलह । पत्ररि किजै सु पिन्नपिन ॥
हसिय सब सामंत । रोस प्रथिराज उहासै ॥
मिलिय सेन रघुवंस । चंद तब भट्ट प्रगासै ॥
इह दैत्य रूप जुध मंगिहै । भाज नीक परतह बहै ॥
कनवज्ज नाथ मनचित्त इह । जुध अनेक बन संग्रहै ॥१८२॥

॥ दूहा ॥

सकल सूर सामंत सम । बर बुल्यौ प्रथिराज ॥
जौ रुक्कौ पिन पेत मै । देषौ नगर विराज ॥१८३॥
चल्यौ नयर दिषन करन । तजिसामंत सुलच्छि ॥
गौ दिषन दिषन करन । चित्त मनोरथ बंछि ॥१८४॥
कुंभ चित्त चहुआन कौ । चीकट बुंद न अम्भ ॥
जल भय पंगह ना भिदै । ज्यौ जल चीकट कुंभ ॥१८५॥
इते सेन चढ़ि पंग बर । है गै दिसा निसान ॥
दछिन नैर नरिंद करि । गंग सु पत्तौ ध्यान ॥१८६॥

॥ कवित्त ॥

राज गुरु दुज कन्ह । कन्ह मोकलि सु लेन नृप ॥
स्वामि मलिह सह सध्य । मंत्र कारज मंत्र अप ॥

लै आवौ प्रथिराज । पंग है विड्डुर सेन ॥
 पषष वैन पथ आज । भयौ भर अंतर केन ॥
 यों करिग देव दच्छिन सुदुज । दिशि सामंत षटंग बर ॥
 संजोग दासि वृंदह नृपति । ठठुकि रह्यौ तणिथान नर ॥१८७॥

॥ दूहा ॥

मनहु बंध अनभूति धर । है तिन जानत थट्ट ॥
 बचन स्वामि भंग न करहि । सह देषहि नृप बट्ट ॥१८८॥
 अवलोकति तन स्वामि मन । मौ सामंतनि सुष ॥
 हंसहि सूर सामंत मुख । कायर मानहि दुष ॥१८९॥
 धीरत धरि ढिल्लेस बर । बहु दंती उभ रोभ ॥
 नृपति नयन तन अंकुरे । मनहु मह गज सोभ ॥१९०॥

॥ कुंडलिया ॥

देषि सुभर नृप नेन । आनि भौ आनंद चंद ॥
 अरि गंजे रूप त्रिप । बीर हक्के ग्रह दंद ॥
 बीर हक्के ग्रह दंद । मुकति लुट्टे कर रस्सी ॥
 आज सामि रन दैहि । बरै अच्छरि कुल लस्सी ॥
 काम तेज संभरी । देव कंदल जुध पिष्वे ॥
 गुरू गल्ह उद्धरौ । दुट्टि धारा रवि दिष्वे ॥१९१॥

॥ दूहा ॥

हरषवंत नृप भ्रत्त हुअ । मन मभूह जुध चाव ॥
 मिलत हथ कंकन लण्यौ । कह्यौ कन्ह इह काव ॥१९२॥
 गगन रेन रवि मुंदि लिय । धर भर छंडि फुनिंद ॥
 इह अपुब्ब धीरत्त तुहि । कंकन हथ नरिंद ॥१९३॥
 हथह कंकन सिर तिलक । अच्छित लगे लिलार ।
 कंठ माल तुअ कंठ नहि । कहि त्रप कवन विचार ॥१९४॥

॥ चौपाई ॥

सुनि सुनि बचन भूमि सिर नायौ । कपन दान ज्यौ बंजि दुरायौ ॥
 पंच पंच श्रब लीन क चितर । छंडित बहि दियौ तब उत्तर ॥१९५॥
 बरिय बाल सुत पंगह राय । वह व्रत भंग मोहि वृत जाइ ॥
 तिहि मुंधहि अब जुद्ध सुहाई । अथि अवासह देउ बताई ॥१९६॥

तिहि तजि चित्त कियौ तुम पासं । छंडिय कन्ह रुदंत अवासं ॥
 सौ सुभट्ट महि एक भट होइ । तौ नृप धनहि न मुक्कै कोइ ॥१६७॥
 जौ अरि थाट कोरि दल साज । तौ दिल्लिय तषत दैहि प्रथिराज ॥
 इतनौ नृपति पुच्छियै तोहि । परनि मुक्कि सुंदरि इह होइ ॥१६८॥

॥ श्लोक ॥

जज्ञकालेषु धर्मेषु । कामकालेषु शोभिता ॥
 सर्वत्र बल्लभा बाला । संग्रामे नन गेहिनी ॥१६९॥

॥ चौपाई ॥

हम सौ रजपूत रु सुंदरि एक । मुक्कि जांहि ग्रह बंधहि तेक ॥
 जौ अरियन थट कोरि दल साजहि । तौ दिल्लिय तषत देहि प्रथिराजहि ॥१७०॥

॥ कवित्त ॥

महि मंडन महिलान । जोग मंडन सुष मंडन ॥
 दुष बंटन जम वसन । नेह पूषनि मन पंडन ॥
 कामवंत सोभाय । पूर चित समर विमत्तन ॥
 मय मुष दिष्यत मोह । लीन भौ अनुरत रत्तन ॥
 संसार सुबरनी सरम रुष । करहि सरन अनमुष रुष ॥
 अरि धरनि मुक्कि धारन नृपति । चलहि कित्त जुग एक मुष ॥२०१॥

॥ दूहा ॥

जगि काल धृग काल कौ । सब्र काल सोभित्त ॥
 पूरन सब्र सोरथ्य सब्र । मोकिल ना मोहित ॥२०२॥
 भर बंकै अच्छरि वरन । रस बंकै दिसि बाल ॥
 दुहु बंकै पारथ करन । चढिद सूरत्तन साल ॥२०३॥
 चलि चलि सूरत सथ्यहुअ । रन निसंक मन भौन ॥
 सह अचार मुष मंगलह । मनहुँ करहि फिरि गौन ॥२०४॥
 पति अंतर विछुरन विपति । नृपति सनेह संजोग ॥
 सुनत भयौ मुष कौन विध । दैव जिवावन जोग ॥२०५॥

॥ मुरिखल ॥

पानि परस अरु दिट्ठ विलगिय । सा सुंदरि कामागिन जगिय ॥
 षिन तलपह अजपह मन कीनों । ज्यों बर बारि गये तन मीनौ ॥२०६॥

अंगन अंग सु चंदन लावहि । अरु राजन लाजन ससुभाषहि ॥
 दै चंचल अंचल द्विग मंदहि । विरहायन दाहम रवि उदहि ॥२०७॥
 फिरि फिरि बाल गवषनि अषिय । तासिष देंन बेंन बर सषिय ॥
 विन उत्तर सु मोन मन रषिय । मन बच क्रम प्रीतम रस कषिय ॥२०८॥

॥ कवित्त ॥

बाली बिजन फिरन । चंद चारी कित्रम रख ॥
 के धनसार सुधारि । चंद चंदन सोमति लख ॥
 बहु उपाय बल करत । बाल चेतै न चित्र मय ॥
 है उच्चार उचार । सखी बुल्लयति हयति हय ॥
 श्रवनें सुनाइ जंपै सु अलि । नाम मंत्र प्रथिराज बर ॥
 आवस निवत्त अगाद भय । तं निबलह द्विग छिनक कर ॥२०९॥

॥ दूहा ॥

तन तज्जै संजोगि पिय । गहि रषी फिरि बाल ॥
 जानि नछत्रिन परि गिरी । चंद सरदति काल ॥२१०॥

॥ अरिस्त ॥

बहुत जतन संजोगि समाए । सोम कमल दिनयर दरसाए ॥
 उभाकि भंकि दिष्यो प्रन पत्तिय । पति दिष्यत मन महि अलि रत्तिय ॥२११॥
 व्याह नाथ संजोगि सुलच्छन । जिहि तुम कर साह्यौ बर दच्छिन ॥
 सा तुअ तात भए दल तत्ती । सरन तोहि सुदरि संपत्तौ ॥२१२॥

॥ दूहा ॥

ता मुख मुंदिन मोद किय । अलियन जंपहु आलि ॥
 दधेऊ पर लवन रस । म्रतक न दिउजै गारि ॥२१३॥
 अंध न द्रुपन दिषिहै । गुंग न जंपहि गल्ह ॥
 अश्रुत नर गान न लहै । अवल न करै सकल ॥२१४॥
 मैं निषेद किन्नौ जु कथ । दुज अरु दुजिय प्रमान ॥
 टरै न गंधव गंधबिय । विधि कीमीध प्रमान ॥२१५॥

॥ श्लोक ॥

गुरजनं मनो नास्ति । तात आशा विवर्जितं ॥
 तस्य कार्यं विनयसि । यावत् चंद्रदिवाकरी ॥२१६॥

॥ दूहा ॥

इह कहि सिर धुनि सविनि सों । दिशि संजोगिय राज ॥
जिहि प्रिय जन अंगुलि करै । तिहि प्रिय जन किहि काज ॥२१७॥
इह चिंतित बसी सु सुनि । क्रोध उजाल सरि अंब ॥
रही जु लिषिये चित्र में । ज्यों सरद प्रतिव्यंब ॥२१८॥

॥ कुंवलिया ॥

धुनत गवळन सिर लष्यौ । अंबुज मुष ससि अंब ॥
अनिल तेज भलहल कपै । सरद इंद्र प्रतिव्यंब ॥
सरद इंद्र प्रतिव्यंब । चिति चतुरानन आनन ॥
निरधि राज प्रथिराज । माज सुंदरि अपकानन ॥
हय सत भट्ट सु भूप । मग भोहैं न गनंतन ॥
मानि विसन्वा बीस । सीस धुनि धुनि न धुनंतह ॥२१९॥

॥ चौपाई ॥

भंकत त्रप दृषी बर बुल्लै । गंग निकट प्रतिव्यंब सो हल्लै ॥
चिहलै पर्यौ चंद तरपीनौ । कै अग तिस्र देषि मन मीनौ ॥२२०॥
मुच्छि बाल संजोगि उठाई । देवर तर दिसि दिसि पट्ठाई ॥
कै श्रोतान सूर सुनि भूठे । कै कातर अबहीं त्रिप दीठे ॥२२१॥

॥ दूहा ॥

ए सामंत जु सत्त कहि । पंग पुति घटि मंत ॥
एक लष्य भर लषियै । जै कढ्ढै गज दंत ॥२२२॥

॥ गाथा ॥

सवन सरा लति विविहा । जिह्वा रटयोति प्रान प्रानेसं ॥
नयन प्रवाहति विवहा । अह बांमा कंत कथ्यायं ॥२२३॥

॥ आयी ॥

कहु लीभा सो चंद लासौ । मनमथ्यं पटुपांजलि ॥
अस्त मान निसा दिवसे । धुनयं सीस जो मम ॥२२४॥

॥ दूहा ॥

किम हय पुद्वहि आरौ । घटि दल संगह राज ॥
भीर परत जो लजि कल्यौ । तब मो आबै लाज ॥२२५॥

तब हंसि जंप्प्यौ नृप बयन । गहर न करियै अब्ब ॥
सब्ब पंग दल संहरो । सुंदरि लाज न तब्ब ॥२२६॥

॥ दूहा ॥

चवै चंद पुंडीर इम । कह बल कथ्यहु पुब्ब ॥
पंग पंग पंग नरिंद कौ । जग्य विध्वंस्यौ सब्ब ॥२२७॥
सुनत बाल छंड्यौ सु हठ । बर चढ्ढी द्विग बंक ॥
किधौ बाल मन मोहिनी । कै बिय उदित मयंक ॥२२८॥
बाले बल सामंत कलि । देखि सूर सम चित ॥
इन जु हीन बल जंपियै । धिकत बुद्धि इन वृत्त ॥२२९॥

॥ दूहा ॥

परनि राव दिल्ली मुषहि । ग्रहि लीनी कर वांम ॥
सम संजोगि नृप सोभियत । मनहु बने रति कांम ॥२३०॥

॥ चंद्रायना ॥

सुंदरि सोचि समुभिक्त गह गह कंठ भरि ॥
तबहि पानि प्रथिराज सुषंचिय बाह करि ॥
दिय हय पुट्ठहि भोर सु सब्ब सु लच्छनिय ॥
करत तुरंग सुरंग सु पुच्छनि वच्छनिय ॥२३१॥

॥ कवित्त ॥

हय संजोगि आरुहिय । पुठ्ठि लग्गी सु वांम नृप ॥
पति राका पूरन प्रमांन । अरक बैठे सुसूर बिप ॥
काम रिक्तु रहि चढी । काम रति दंपति राजं ॥
कै विदुम हिम संग । वियन ओपम छपि माजं ॥
सामंत सूर पारस नृपति । मधि सु राज राजंत बर ॥
ग्रह सत्त भान ससि बिटिकै । दिपत तेज प्रथमी सु पुर ॥२३२॥

॥ आथो ॥

एकथ्योय संजोई । एकथ्यौ होइ समर नियोसौ ॥
अनि लेय यथा पदमं । अंदोलए राज रिदएवं ॥२३३॥

॥ दूहा ॥

मन अंदोलित चंद मुष । दिषि सामंत सरुष ॥
अंदोलित प्रथिराज हुआ । सिर कटिट्य सुष दुष ॥२३४॥

वय सु लगिग एकत करह । कक्कर लगिगय लाज ॥
वय जुगिगिनि पुर चलि कहै । लाज कहै भिरि राज ॥२३५॥

॥ चौपाई ॥

वै सुषं सब संजोगि बतावै । राज मरन दिसि पंथ चलावै ॥
दोई चित्त चढ़ी बर राजं । वै बिलास मरनं कहि लाजं ॥२३६॥

॥ दूहा ॥

मिष्टानं बर पान भय । नव भामिनि रस कोक ॥
अमर राइ इच्छति सबै । लाज सुष पर लोक ॥२३७॥

॥ चौपाई ॥

मो तजि मति चोहान सुजाई । ज्यों जलविंदु सब कित्ति समाई ॥
तौ तिय पन वय तज्जि दिषाई । तिन जिय जाहुये लज्जन जाइ ॥२३८॥

॥ दूहा ॥

सुनत वचन लज्जिय वयह । उत्तर दीय न लज्ज ॥
वै विलास उत्तर दियौ । अज्जु लज्ज हम कज्जं ॥२३९॥
वै मुष कौपि प्रमान से । मुक्किय जुगति जुगति ॥
ए हलका दंतीन के । धाए उज्जल कंति ॥२४०॥
वै तन कुरषि निरषयौ । लाज सु आदर दीन ॥
कलि नारद नीरह कवि । प्रकट करहु हम कीन ॥२४१॥
कहत भट्ट दल विषम है । तुहि दल तुच्छ नरिंद ॥
परनि पुत्ति जैचंद की । करहि जाइ ग्रह नंद ॥२४२॥
भुक्ति राज उत्तर दियौ । सो सथ सत्त सुभट्ट ॥
हूँ चहुआन जु संभरी । भुज ठिल्लौ गज थट्ट ॥२४३॥
चल्यौ भट्ट संमुह तहां । जहं दल पंग अरेस ॥
जो इछै नृप तुम्ह मन । टट्टौ षेत नरेस ॥२४४॥
परनि राइ ढिल्लिय सु मुष । रुष किन्नौ मन आस ॥
कहो चंद नृप पंग दल । जुद्ध जुरै जम दास ॥२४५॥
चढ़िग सूर सामंत सह । त्रिप धम्मह कुल लाज ॥
सुहर समुह दिषहि नयन । त्रिय जु बरिग प्रथिराज ॥२४६॥
गयौ चंद नृप बयन सुनि । जहं दल पंग नरिंद ॥
अरि आतुर अरिग्रहन कौ । मनो राहु अरु चंद ॥२४७॥

॥ श्लोक ॥

कस्य भूपस्य सेनायां । कस्य बाजित्र बाजनं ॥
कस्य राज रिपू अरितं । कस्य संन्नाह पष्परं ॥२४८॥

॥ दूहा ॥

छलि आओ चहुआन नप । भट्ट सथ्य प्रथिराज ॥
तिहि पर गय हय पष्परहि । तिहि पर बज्जत बाज ॥२४९॥

॥ गाथा ॥

सा याहि दिल्लि नाथो । सा यंतु जग्य विध्वंसनौ ॥
परनेवा पंगपुत्री । जुद्ध मांगंत भूषनं ॥२५०॥

॥ दूहा ॥

सुनि श्रवननि चहुआन को । भयो निसानन घाव ॥
जनु भद्व रवि अस्त मनि । चंपिय बहल बांघ ॥२५१॥

॥ कवित्त ॥

वजत धरद्वर सीस । धार धरनीय सेस कहि ॥
कुंडलेस कुंडलिय । कहय पन्न गति अरुल रहि ॥
अहि अहि कहि अहि नाम । संकभौ सीस सेस वर ॥
गहिन परै तिहि नाग । चित्त विभ्रम चित्रक पर ॥
कपेस नाम कंपत भयौ । बहुत नाम तहिन लहिय ॥
जिनजिन उपाय रषिय इला । पंग पयानह तिहि कहिय ॥२५२॥

॥ कवित्त ॥

तब सु कन्ह चहुआन । गहिय करवान रोस भरि ॥
असिय लष्य त्रिन गनिय । हनत हय गय पय निंदरि ॥
करत कुंभस्थल घाव । चाव ववगुन धरि धीरह ॥
तुबक तीर तरवार । लगत संकयौ न सरीरह ॥
कहि चंद पराक्रम कन्ह कौ । दिय दहाय गेंवर समर ॥
उछरैत छिछ श्रोनि त सिरह । मनहु लाल फरहरि चमर ॥२५३॥

॥ दूहा ॥

अद्ध अवन्निय चंद किय । तारस मारु भिन्न ॥
पलचर रुधिचर अस चर । करिय रवन्निय रिन्न ॥२५४॥

॥ कवित्त ॥

चावहिसि रषि सूर । मद्धि रष्यौ प्रथिराजं ॥
ज्यौ सरद काल रस सोच । मद्धि ससि जुत्त विराजं ॥
ज्यौ जल मद्धित जोत । तपति बड़वानल सोहं ॥
ज्यौ कल मद्धे जमन । रूप मधि रत्तौ मोहं ॥
इम मद्धि राज रष्यौ सुभर । नग्न सकल निंदौ सु बर ॥
सब मुष्प पंगरुक्क्यौ सु बर । सो उप्पम जण्यौ सु गिर ॥२५५॥

॥ चंद्रायना ॥

पह चारु रुचि इंद इंदीवर उदयौ ॥
नव बिहार नवनेह नवज्जल रुदयौ ॥
भूषन सुभ्र समीपनि मंडित मंड तन ॥
मिलि म्रदु मंगल कीन मनोरथ सब्व मन ॥२५६॥

॥ श्लोक ॥

जितं नलिनीं तितं नीरं । जितं नलिनी जलं तितं ॥
जतो गृह ततो गृहिणी । जत्र गृहिणी ततो गृहं ॥२५७॥

॥ दूहा ॥

मिलि मिलि बर सामंत सह । नप रष्वन विचचार ॥
चलै राज निज तरुनि सम । इहै सुमत्तह सार ॥२५८॥

॥ कवित्त ॥

पंचति रष्यहि पास । पंच धरणी धन रष्यहि ॥
पंच पृच्छ अनुसरहि । पंच तत्तै जिय लष्यहि ॥
पंच भीत वंचियै । पंच आदर अमनाइत ॥
पंच पंच धर तीन । करुनि मंडिय बासन जति ॥
चहुआन राइ सोमेस सुअ । इमग तेग बढ्ढै सुकिर्ति ॥
अनुसरिय लाज राजन रवन । सुनौ राज राजन पति ॥२५९॥
सुनौ सूर सामंत । सूर मंगल सुपत्ति तन ॥
लाज बधू सो पत्ति । राज सोपत्ति सूर धन ॥
कवि बानी सोपत्ति । जोग सोपत्ति ध्यान तम ॥
मित्रापति सोपत्ति । पत्ति बंधे सो आत्म ॥

हम पत्ति पत्ति त्रप जो चलै । तो पति हम पुजै रली ॥
 सा ध्रम जु पेंज सामंत भर । रुक्के पंगह मेजली ॥२६०॥
 सूर मरन मंगली । स्याल मंगल घर आयै ॥
 वाय मेघ मंगली । धरनि मंगल घर जल पायै ॥
 क्रियन लोभ मंगली । दान मंगल कछु दिन्नै ॥
 सत मंगल साहसी । मँगन मंगल कछु लिन्नै ॥
 मंगली बार है मरन की । जो पति सथह तन षंडियै ॥
 चढि षेत राइ पहु पंग सों । मरन सनंमुप मंडियै ॥२६१॥
 सुनौ सूर सामंत । जियन अहि डढ्ढ काल पुर ॥
 अध्रम अकितौ मुष । सा मनौ ग्रह दंड दुर ॥
 मोह मंद बर जगत । भए विधि चित्र चिताही ॥
 अचित होइ जिहि जीत । पुअ जित देषि पिषाही ॥
 नन मोह छोह दुष सुष तन । तौ जर जीवन हथ्य भुत ॥
 पहु पंग जंग मुक्कै नहीं । जौ जग जीवहि एक सत ॥२३२॥
 अरे अमंत सामंत । मोहि भजंत लाज जल ॥
 काम अगि प्रज्जरै । लोभ अधीन बाइ बल ॥
 निस दिन चढ़े प्रमान । दुहू कन्ना परि सुभभी ॥
 इह लग्गी कल पंक । कच्व जिहि जिहिवर बुभभी ॥
 को राव रंक सेवक कवन । कवन त्रपति को चिक्करै ॥
 ढिल्लीव दिसा ढिल्लिव नृपति । पंग फौज धर उप्परै ॥२६१॥
 नह मन्निय मति राज । सब्ब सामंत सहित्त ॥
 बरजि ताम कविचंद । मन्न भन राजन बत्त ॥
 बहुरि दिन्न सामंत । गिरद रण्यौ फिरि राजन ॥
 फिरि भ्रत्य अप थान । बिट लिन्ने ते जाजन ॥
 बुल्यौ ताम जादव जुरनि । अद्धो कन्ह सुनि नाह नर ॥
 त्रिप व्याह राह चितौ सुचित । घर सु तरुनि तरुनिय सु घर ॥२२५॥
 सुनिय बत्त राजन । कन्ह मन रीस अप्प चित ॥
 पय लग्यौ नर नाह । धन्नि जंपी सु धन्नि हित ॥
 बलिय बास • न अनन्य । फिरत रोपिय सब संगिय ॥
 बंध वारि विथारि । उद्ध चितान विलगिय ॥
 जंपयौ राज जहौ नमिय । प्रथिम रज इह व्याह रह ॥

खनिय सु प्रेह प्रथमाह यह । करहु सयन त्रिप सुष्प सह ॥२६५॥

॥ दूहा ॥

संजोगिय नयननि निरधि । सफल जनम त्रिप मानि ॥
काम कसाये लोयननि । हन्यौ मदन सर तानि ॥२६६॥
सुधि भूली संग्राम की । भूलि अप्पनिय देह ॥
जोन भयो बसि पंग दल । सो भयो वाम सनेह ॥२६७॥
नयन चरन कर मुष उरज । विकसत कमल अकार ॥
कनक वेलि जनु कामिनी । लचकनि बारन भार ॥२६८॥
रवनि रवन मन राज भय । भयौ नैन मन पंग ॥
सूरन सों संग्राम तजि । मँड्यौ प्रथम रस जंग ॥२६९॥
तत्र सुराज रवनिय निरधि । हसि आलिगन विठ्ठ ॥
रचिय काम सयनह सुबर । दिय अग्या भर उट्ठ ॥२७०॥

॥ कवित्त ॥

विनह भान पायान । इदं कमधज्ज जुद्ध दुअ ॥
सहो न बोलि संपुलै । विरद पागार बअ भुअ ॥
सुकल षोलि कल्हार । भुक्ति कल्यौ भाराहर ॥
विनह अरुन उद्योत । अरुन उग्यौ धाराहर ॥
पहु विन पुकार पहु उप्परिग । सु ग्रह पहक फट्टी फहन ॥
उहिग सुतन अरि वर किरन । मिलिय चक्र चक्की गहन ॥२८१॥

॥ वृद्धनाराच ॥

हयगगयं नरभरं रथं रथंति जुह्यौ ॥
मनों नारिंद देव देव भल्लरी सु बह्यौ ॥
किनंकही तुरंग तुंग जूह गज्ज चिक्करं ॥
जु लोह छकि नषि भोमि पेत मुक्कि निक्करं ॥२७२॥
बजंत घाय सहकं ननह नह मुहरं ॥
गरबिष देषि अगि ज्यौं बिदोष मअ जोदुरं ॥
उठंत दिष्ट सूर की करूर अंषि राजई ॥
मनों कि सौकि बीय दिष्ट बंकुरीति साजई ॥२७३॥
उभै सयअ क्रम्म यंक को न भूमि छंडयं ॥

जु मभिभ कंक भजि कोन सार अंग पंडयं ॥
 बरंत रंभ रंभ भंति सार के दुभारयं ॥
 जुधं जुधं बजंत सूर धार धीर पारयं ॥२७४॥
 तुटंत श्रोने सीस द्रोण नंचि रीस हक्कयौ ॥
 रचंत भोम बिद्र कार बीर बीर भक्कयौ ॥
 परंत के उठंत फेरि मच्छ ज्यौ तरफई ॥
 रनं विधान धीर बीर बीर बीर जंपई ॥२७५॥

॥ दूहा ॥

रुंड मुंड षल पंड भुअ । मचि योगिनि बेताल ॥
 चिल्हनि भष जंबुक गहकि । हर गुंथी गल माल ॥२७६॥
 लै चिल्ही भ्रमिय सु भर । है हर सिद्धी रूप ॥
 बीर सीस चुंगल चंपै । गय ग्रधन्न अनूप ॥२७७॥
 आनंदी पंषी सकल । चिल्हानी पुछि कंत ॥
 कहि कहि गल्ह सु रंग बर । सुष दुष जीवन जंत ॥२७८॥
 चिल्हानी बुलि पत्ति सों । ऊमंती बरजंत ॥
 बड़ गुरजन बत्ती सुनी । सो दिट्ठी दिषि कंत ॥२७९॥

॥ कवित्त ॥

केहरि रा कंठेरि । स्वामि सिंगिनि गर घत्तिय ॥
 वरुन पास निय नंद । लोकपालह पति पत्तिय ॥
 हसि हलक्कि हक्कारि । पंग पुत्तिय जानन पन ॥
 तात अग्य संबरिय । राज राजन आनी धन ॥
 चहुआन रथ्य सथ्यह चढ़िय । नंषि बथ्य कमधज्ज बर ॥
 अब देषि बाल लालन सु पर । सुतन हाल विचचै सुबर ॥२८०॥

॥ दूहा ॥

गुन कटिटय रमनिय सु वर । डसनह पंग कुंआरि ॥
 असि बर भर प्रथिराजहनि । सूर हथ्य नर वारि ॥२८१॥
 देषि संजोगिय पिय सु बल । श्रम जल बूढ़ बद्धन ॥
 रति पति अहित पवित्र मुष । जालि प्रजालि मरन्न ॥२८२॥

॥ चंद्रायन ॥

घुरि निसान उगि भान कला कर मुहयौ ॥

श्रम सामंत नरिंद छिनक धर धुक्कयौ ॥
सविष प्रंग दल दिष्ट सरोस निहारयो ॥
अंचल अमृत संयोगि रेन मिस भार्यौ ॥२८३॥

॥ कवित्त ॥

समौ जानि कविचंद । कहै प्रथिराज राज मुनि ॥
आदि क्रम्म तें करें । तास को सकै गुनिक गुनि ॥
सेस जीह संग्रहै । पार गुन तोहि न पावै ॥
तैं जु करिय पहुपंग । मिलिय आरनि थर सावै ॥
नन कियौ न को करिहै न को । जै जै जै लखी तरुनि ॥
प्रिह जाइ अप्प आनंद करि । बढ़ै कित्ति सब लोग पुनि ॥२८४॥

॥ दूहा ॥

इह कहि सु कवि समीप गय । गहिय बग्न हैराज ॥
चल्यौ पंचि दिल्ली सु रह । सुभर सु मन्यौ काज ॥२८५॥
प्रलय जलह जल हर चलिय । बलि बंधन बलि बार ॥
रथ चक्कां हरि करि करिय । परि प्रब्रत पथधार ॥२८६॥
उदय तरुनि नटिठग तिभिर । सजि सामंत समूह ॥
बिप अगौ बहै सु इम । चलहु स्वामि करि कूह ॥२८७॥
चलन मानि चहुआन नृप । बज्जे पंग निसान ॥
मिमि जु इंद दुहुँ दल भयौ । विद्ध सहित बिन भान ॥२८८॥
हय गय करि अगें नृपति । पिभि चंपे प्रथिराज ॥
मो अगौ आजुहि रहै । टरिग दीह बिय साज ॥२८९॥

॥ कवित्त ॥

पट्टै पल छुटंत । कन्ह धाराहर बज्ज्यौ ॥
जनुकि मेघ मंडलिय । बीर बिज्जुलि गहि गज्ज्यौ ॥
हय मय नर तुटंत । बिरह तुटिदय तारायन ॥
तुटिदय फोहनि पंग । राय चोनिय भारायन ॥
हलहलिय नग नमिनि पुरत । नागिन सिर बुद्ध्यौ रुहिर ॥
आवहि न संग सिंगार मन । मननि सीस मुक्कौ सु धर ॥२९०॥

दिषि सेन पहुपंग । आस दिल्ली दिल्ली तन ॥
 चिति कन्ह चहुआन । पट्ठ छुट्यौ सुभ्यौ बन ॥
 निपथ अप्प है जनिय । पंग जपै जीवन गहु ॥
 सु पथ सूर सामंत । जीह जीयत सु बैन लहु ॥
 आवृत्त जात धंधो तिनं । सो धंधो जुरि भंज्यौ ॥
 बज्जियन जीव रुंध्यौ निपति । मुकति सथ्य है बज्ज्यौ ॥२६१॥

॥ पद्धरी ॥

कलहंत कन्ह कुपौ कराल । फरकंत मुंछ चष चढ़ि कपाल ।
 चिंती सु चित देवी प्रचंड । कह कहति कंक कर सूल मंड ॥२६२॥
 गुररंत सिंघ आसन अरोह । वामंग बाह षप्पर सु सोह ॥
 इहि भंति प्रसन सजि देव दंद । तहं पढ़त छंद अन्नेक चंद ॥२६३॥
 पोलंत नयन जिहि समर रंग । भारथ कथ्य भीषम प्रसंग ॥
 भज्जनह राय संकर पयान । पूनी न षग पंडल षयान ॥२६४॥

॥ कवित्त ॥

चाहुआन सुज्जान । भूमि सर सेज्या सूतौ ॥
 देषि बिअच्छरि बर । समूह बरनह सानूतौ ॥
 जनु परि त्रिय परहंस । हंस आलिंगन मुक्क्यौ ॥
 भर भारी कन्हह । हनंत अवसान न चुक्क्यौ ॥
 धर गिरत धरनि फुनि फुनि उठत । भारथ सम जिन बर कियौ ॥
 इम जंपै चंद बरहिया । कोस दसह भूपति गयौ ॥२६५॥
 जिम जिम तन जरजर्यौ । विहसि वर धायौ तिम तिम ॥
 जिम जिम अंत रुलंत । लष दल तिन गनि तिम तिम ॥
 जिम जिम करिवर परत । उठत जिम सीस सहित बर ॥
 जिम जिम रुधिर भरंत । सघन घन बरषत सद्धर ॥
 जिम जिम सु षग बज्ज्यौ उरह । तिम तिम सुर नर मुनि मन्यौ ॥
 जिम जिम सु चाव धरनी पर्यौ । तिम तिम संकर सिर धुन्यौ ॥२६६॥
 गह गह गह उच्चार । देव देवासुर भज्जिय ॥
 रह रह रह उच्चार । नाग नागिनि मन लज्जिय ॥
 बह बह बह उच्चार । सुरह असुरन धुनि सज्जिय ॥
 त्रह त्रह त्रह तासंत । तुटिट पायन पर तज्जिय ॥

मुह मुहह मुच्छ कर कन्ह तुअ । चमर छत्र पहु पंग लिय ॥
 सिर बंध कंध असिवर ढरिग । पहर एक पट्ठ न दिय ॥२६७॥
 पहर एक पर प्रहर । टोप असि बर बर बज्जिय ॥
 बपर पपर जिन सार । पार बट्ठेन तुटि तज्जिय ॥
 रोम रोम बर विद्ध । सिद्ध किन्नर लिन्निय बर ॥
 अस्त बस्त बज्जी । कपाट दद्धीच हीर हर ॥
 रुधि मंस हंस हरिबंस नर । दिव दिवंग भिटि अम्मिलित ॥
 कन्नर कबंध घटि तंति तिन । सुवर पंग दिष्पिय पिलत ॥२६८॥

॥ दूहा ॥

पुर सोरों गंगह उदक । जोग मग तिथ वित्त ॥
 अद्भुत रस असिवर भयौ । बंजन बरन कवित्त ॥२६९॥

॥ कवित्त ॥

बेद कोस हरसिंध । उभै त्रियत्त बड़ गुज्जर ॥
 काम वान हर नयन । निडर निड्डर भुमि सुभ्भर ॥
 छगन पट्ठ पलानि । कन्ह पंचिय द्रग पालह ॥
 अल्ह बाल द्वादसह । अचल विग्घा गनि कालह ॥
 शृंगार विभ्र सलषह सुकथ । लषन पहारति पंचचय ॥
 इत्तने सूर सथ भुभ्भ तह । सोरों पुर प्रथिराज अय ॥३००॥
 पर्यौ पेवि पाहार । राज कमधज्ज कोप किय ॥
 पहु सोरों प्रथिराज । निकट दिष्प्यो सुचिति हिय ॥
 गयौ राज जंगलिय । नाथ कनवज्ज मन्नि मन ॥
 जग्य जोंग विग्गार । लहिय जै पुनि हरिय तिन ॥
 आइयौ राइ महदेव तब । नाथ सीस बोल्थौ बयन ॥
 संग्रहों राज प्रथिराज को । सद्धों पहु जंगल सयन ॥३०१॥
 घरिय च्यारि दिन रह्यौ । घरिय दुअ वित्तक वित्तौ ॥
 नको जीय भय मुर्यौ । नको हार्यौ न को जित्तौ ॥
 पंच सहस सें पंच । लुत्थि पर लुत्थि अहुट्टिय ॥
 लिषे अंक बिन कंक । नको भुज्ज्यो बिन पुट्टिय ॥
 दो घरिय मोह मारुत बज्यौ । करन अंभ बरप्यो निमिष ॥
 तिरिगत्त राज तामस बुभ्यौ । दिषिय पंग संजोगि मुष ॥३०२॥

मुरभानो जैचंद चरन । चंयौ हम बर तर ॥
 उतरि सेन सब पर्यौ । राव कद्यौ हरवै कर ॥
 लेहु लेहु नृप करय । चवेन चहुआन बुलायौ ॥
 सूर बीर मंत्री प्रधान । मिलि कै समुभायौ ॥
 उत परे सथ्य इत को गनै । असुगुन भय राजन गिर्यौ ॥
 घर हुंत पलान्यौ अमत करि । सीस धुनत नरवै फिर्यौ ॥३०३॥

॥ कुंडलिया ॥

दिष्पि पंग संजोगि मुष । दुप किन्नौ दल सोग ॥
 जग्य जर्यौ राजन सघन । अवरन हुति संजोग ॥
 अवरन अहुति संजोगि । कित्ति अग्गी जल लग्गी ॥
 ज्यों पल पट आदर्यौ । लीय पुत्रिय छल मग्गी ॥
 मुप जीवन अरु लाज । मनहि संकलपि सिलष्पी ॥
 निबल एम संकलै । आस लग्गी मय दिष्पी ॥३०४॥

॥ दूहा ॥

चढ़ि चहुआन दिल्ली रुपह । उड़ी दुहूं दल पेह ॥
 छंडि आस चहुआन पहु । गयौ पंग फिरि गेह ॥३०५॥

॥ कबित्त ॥

समभायौ तिन राइ । पाय लगि बात कहिय जब ॥
 जिके सूर सामंत । करौ गोन्ह न कोई अब ॥
 फिर्यो त्रपति पटुपंग । सयन हुआ तह घर आयौ ॥
 रय दिल्ली सुरतान । जान आवतह न पायौ ॥
 आयौ सु सयन चहुआन को । ग्राम ग्राम मंडप छयौ ॥
 आयौ नरिद प्रथिराज जिति । भुअन तीन आनंद भयौ ॥३०६॥

॥ दूहा ॥

पुर कनवज्ज कमंध गय । अरि डर गंद्रिय अथ ॥
 कहै चंद प्रोहित्त प्रति । तुम दिल्ली पुर जथ ॥३०७॥
 नग अनेक विधि बिधि विचित्र । और गने कोइ गेउ ॥
 विजै करत विजपात निज । लिय सु वस्तु दिव देउ ॥३०८॥

॥ मुरिल्ल ॥

पुर दिल्ली आयौ प्रोहित्तह । मन्यौ मन चहुआन सुहित्तह ॥
 दिय थानक आसन उत्तमग्रह । बर प्रजंक भोजन भल भण्ह ॥३०९॥

दिल्लिय पति दिल्लिय संपतौ । फिरि पहुपंग राइ ग्रह जतौ ॥
जिम राजन संजोगि सु रतौ । सुह दुह करन चंद पहिमतौ ॥३१०॥

॥ कवित्त ॥

कनक कलस सिर धरहि । चवहिं मंगल अनेक त्रिय ॥
पाटंबर बहु द्रव्य । सज्जि सबसगुन राज लिय ॥
ढरहि चौर गज गाह । इक्क आरती उतारहि ॥
इक्क छोरि करि केस । रेन चरनन की भारहि ॥
इम जंपहि चंद बरहिया । मुकनाहल पुज्जंत भुअ ॥
घर आइ जित्ति दिल्लिय नपति । सक्कल लोक आनंद हुअ ॥३११॥

॥ दूहा ॥

गौ अंदर प्रथिराज जब । भंडि महरत व्याह ॥
आय प्रिथा कहि बंध सम । करहु सु मंगल राह ॥३१२॥

॥ कवित्त ॥

निरपत द्रग संजोगि । गयौ प्रथिराज मोह मन ॥
उदय सूर उठि राज । काज किन्नौ सु व्याह पन ॥
आप पंग प्रोहित । दीन सब बस्त संभारिय ॥
जे पठई जैचंद । व्याह संजोगि सु सारिय ॥
परवेस बिंद कारन नपति । आए बज्जन बज्ज घर ॥
पुषे सु प्रथ्य शृंगार करि । दीनौ बिधि बिधि दान भर ॥३१३॥

॥ चंद्रायना ॥

अगर धुम्म मुष गौषह उनयो मेघ जनु ॥
तहय मोर मल्हार निरत्तहि मत्त घन ॥
सारंग सारंग रंग पहुक्कहि पंषि रस ॥
विज्जुलि कोकिल सानि भूमक्कहि जासु मिसि ॥३१४॥
दादुर सादुर सोर नवपुर नारि घन ॥
मिलि सुरमधि मधुवृत्त माधुर मभिभ मन ॥
सालक पंच पचीस प्रजंकति दून दस ॥
तहां अथि परवीन सु बीनति दासि दस ॥३१५॥
के जुअ जुथ जवादि प्रमादहि मंद गति ॥
केवल अंचल बाय निरूपहि सरद रति ॥

केबर भाष पराकृत संक्रित देव सुर ॥
 केबर बीन बिराजित राजहि बार बर ॥३१६॥
 इन विधि विलसि बिलास असार सुसार किय ॥
 दै सुष जोग संजोगि प्रथी प्रथिराज प्रिय ॥
 ज्यों रति संगम मारन जानै रयन दिन ॥
 केतकि कुसुम लुभाय रह्यौ मनुं भ्रमर मन ॥३१७॥

॥ गाथा ॥

अंबा अंबाह पत्ती । कंतौ कंताय दिठ्ठ सा दिठ्ठौ ॥
 महिला मरम सु मिठ्ठौ । पतौ कंताइ इच्छि सिछांइ ॥३१८॥

॥ दूहा ॥

भजै न राज संजोगि सम । अति सुच्छम तन जानि ॥
 तब सु सषी पंगानि बर । रची बुद्धि अण्णान ॥३१९॥
 मधि अंगन नव दल सु तरु । पत्र मौर घन उट्टि ॥
 इक मंजर पर भ्रमर अमि । बास आस रस बिट्ट ॥३२०॥
 भार भ्रमर मंजरिन मिग । तुटत जानि उटि पयि ॥
 कछु अंतर राजन सुनहि । बोलि बयन दिपि अंघि ॥३२१॥
 रस घुट्टत लट्टत मयन । नन डुलि मंजरि याह ॥
 भार भगत कथह सुनी । अलियल मंजरि याह ॥३२२॥

॥ गाथा ॥

अप्पह आरुहि अंझ । मम डरई मद्ध देपि भीनंगं ॥
 पत्तली पग धारा । हय गय कुंभस्थलं हनई ॥३२३॥
 जे केहरि नन भीनं । तं गज मत्त जूथयं दलए ॥
 नव रमनी रमि राजं । एक पलं जम्म सुण्यांइ ॥३२४॥

॥ दूहा ॥

अलिय अलिय एकत मिलिय । रस सरवर संजोगि ॥
 सो कविचंद त्रय बरस रस । पुह प्रगटित रति भोग ॥३२५॥

बड़ी लड़ाई समय

॥ आर्या ॥

आषाढे मासे दुतियानं, राज सभा मंडिय महिलानं ।
सा इंछिनि दच्छिन पामारी, सील सुच पतिव्रत संचारी ॥१॥
मुक्की सा जदि पुत्ति पंगानी, न्याय बट्ट प्राया प्रीयानी ।
सिंघासन राजन सनमानी, कैलासी लच्छिय इह दानी ॥२॥
इक प्रोढह इक्कह मुगधानं, दुहु लच्छन बंधे बंधानं ।
इंछिनि प्रौढ पवित्र पुंआरी, मुगध संजोगिय पंग कुमारी ॥३॥
दुविधि प्रीति राजन प्रतिपारी, चतुरत्तन चिन्थौ बर नारी ।
म्है बरनी बरुनी बर संच्यौ, विनयं बल पंगज पति अंच्यौ ॥४॥
लिपि नेनं सु चिन्ह विनानं, बसि करि मोहि सुमुष्प सयानं ।
तिय परिमान तिया परि जानं, इहां अंदेस जु है कछु आनं ॥५॥
मैं विनया विनया बर संच्यौ, कन वज्जनि बसि करि कर पंच्यौ ।
बान पंच धरि काम विनानं, धर धर धुक्कि परी सहि आनं ॥६॥

॥ दूहा ॥

पित्र घात सों मन मिलै, और बैर मिट जाइ ।
सौति बैर अंतर जलनि, दिन प्रति ग्रीपम लाइ ॥७॥
मुष मिठ्ठी वित्तां करै, मन में देत सराप ।
बंटै प्रेम सु प्रीय कौ, अंतर दभमै आप ॥८॥

॥ अरिहल ॥

इंछिनि इंछिय अच्छनि रषपन, राजसंजोइय प्रेम परषपन ।
दुज दिय हथ प्रजंक संजोइय, निसि गति मोहि कथा सुनि तोइया ॥९॥
दिय पामारि पवित्र सुक, लिय संजोइय बंदि ।
पन प्रजंक टट्टन टरति, गति न कहै सुर सहि ॥१०॥

॥ चौपाई ॥

रचि शृङ्गार अनोपम रूपं, चातुरता गति मति आनूपं ।
मंगहि इष्ट सुकंमति गत्ती, विधि परजंक संजोगि संपत्ती ॥११॥

॥ कवित्त ॥

ससि रुन्नौ अग बह्यौ, कह्यौ सुक सप्त दीप तन ।
 तम सु देव पुलि पंग, जोति संदीप छिनहि छिन ।
 हुई लज्ज अचलीय, कलिय मुद्धं गति जानं ।
 छिम छिम तमह रतिपति, परसि पुहुपंजलि थानं ।
 त्रप तुष्टि काम कमलारमन, भवन द्रष्टि रुचि रमन मन ।
 जिम जिम सु भिनय बिलसिय प्रबल, तिम तिम सुक बुद्धिय प्रमन ॥१२॥
 देषि बदन रति रहस, वुंद कन स्वेद सुभ्र बर ।
 चंद किरन मनमध्य, हथ्य कुठ्ठे जडु डुक्कर ।
 सु कवि चंद बरदाय, कहिय उषम श्रुति चालह ।
 मना मयंक मनमध्य, चंद पूज्यौ मुत्ताहय ।
 कर किरनि रहसि रति रंग दुति, प्रफुलि कली कलि सुंदरिय ।
 सुक कहै सु किय इंछिनि सुनवि, पै पंगानिय सुंदरिय ॥१३॥

॥ कुंडलिया ॥

जा रस रसनन अनुदिनह, अधर दुराइ दुराइ ।
 सा रस दुज कन कन कर्यौ, सपिन सुनाइ सुनाइ ।
 सपिन सुनाइ सुनाइ, हियै सुचि सुचि लज मन्नह ।
 सुथल विथल थल कंभि, नेने नटकीय नहन्नह ।
 जियन मरन मिलि मेन, कह्यौ अद्भुत प्रिय रस ।
 ए रस अंतर भेद, प्रीय जानै त्रिय जौ रस ॥१४॥

॥ मुरिल्ल ॥

कल कल बानी सुक्क प्रगासै, वृद्ध बाल बे कौतिक भासै ।
 को को दीप दीह तो बालं, जंपी जेम तोहि तो कालं ॥१५॥

॥ दूहा ॥

राजन सुक पुच्छन विगति, भयो इंछिनि दुष राज ।
 हू माया रस भुल्लयौ, नहु पायौ गुन काज ॥१६॥

॥ गाथा ॥

जीवं वारित रंगं, आयासं नथिवै दुष देहं ।
 भाविय भाविय गतनं, किं कारनं दुष बालायं ॥१७॥

॥ दूहा ॥

जौ पुच्छै सुष दुष्प मो, तौ मो एह अंदेस ।
 देषि कहै बर बत्त मै, किहि गुन रचिय नरेस ॥१८॥
 सुनि बाला बर बेन मुहि, मंत्र भेद बहु भेस ।
 जौ बंछै इंछिनि महल, तौ मेदै अंदेस ॥१९॥

॥ कवित्त ॥

सुक पंजर करि हेम, माल मांतीन मंत्र जरि ।
 धन सुगंध निकुरास, देस संघ गुरिग हथ धरि ।
 दस हथ्थी इंछिनि रसाल, माल बिय साल उनंगी ।
 सेत रत्न बर सुमन, मुक्कि करि गंध सुरंगी ।
 नर भेष नारि कंचुकि सरस, हुइ दासी बर भजि मन ।
 क्रम चुकंति दुक्कति विक्रम, बयन दरसि सज्जल नयन ॥२०॥

॥ अरिह ॥

दस हथ्थी पंजर धर मुक्किय, दिसि संजांगि राज दिठि रुक्किय ।
 नन तुच्छी त्रपं पच्छिल रत्ती, ज्यों सर फुट्टै हंस प्रपत्ती ॥२१॥

॥ दूहा ॥

वक्र दिष्ट संजोग की, सुक कहि त्रपहि सुनाइ ।
 एक अचिज्ज इंछिनिय, मे ग्रह दिठ्ठी राइ ॥२२॥
 कहै सुक्क फुनि फुनि न लग, त्रिप सुनि कही न बत्त ।
 मंत्र भेद उप्पर करी, करत चित्त अनुरत्त ॥२३॥
 जो सुक त्रप कानंन ली, तब पुच्छयौ बर जोय ।
 जो कछु कह्यौ सु कंत सौ, कह्यौ कंत जो होय ॥२४॥

॥ पद्धरी ॥

मति मान रूप लच्छीय मान, जीवन सु पीव आनंद थान ।
 करवत्त दोष कपन वारि, बर कंक दिन्न बर सबं रारि ॥२५॥
 धुम्मर बदन्न दुष दमित पाइ, ज्यौ आनंद जाइ कुमलाइ पाइ ।
 मंडित्त मत्त तिहि चाहुआन, सुष रुठिठ्ठीय नत्र रुठिठ्ठ प्रान ॥२६॥

॥ दूहा ॥

जिन बिन नृप रहते न छिन, ते भट कटि कनवज्ज ।
 उर उप्पर रणपत रहै, चढै न चित हित रज्ज ॥२७॥

॥ कवित्त ॥

कटे कुटुंब मन मित्त, हित्तकारी काका भट ।
 कटे सूर सामंत, सजन दुञ्जन दहंन ठट ।
 कटे सुसर सारे सहेत, मातुलह पञ्चय फुनि ।
 कटे राज रजपूत, परम रंजन अवनी जन ।
 निसिदिन मुहाइनह नृपति कौ, उच्च सास छंडै गहै ।
 अंतरित अग्नि उद्देग अति, सगति सूलसालै सहै ॥२८॥

॥ दूहा ॥

तब सारे अंते उरह, कीनौ मनौ विचारि ।
 नृप अगै उच्चार किय, धरि मुप अग पंवारि ॥२९॥
 चरन लगि युग जोरि करि, क्यौ सुनहु महि इंद ।
 हमहि सिकार दिपाइये, मत्त मृगादि मयंद ॥३०॥

॥ दूहा ॥

क्यौ बराह बागुर रुकै । क्यौ बंधहि बर बानि ॥
 क्यौ छुट्टै छर डोरि कै । क्यौ जुट्टहि सक स्वान ॥३१॥
 विहसि बयन अलसित नयन । दिय इक उत्तर राय ॥
 गोठि करो गोरी सकल । तो आपेट पिलाइ ॥३२॥
 कहि परनाम प्रनाम करि । राजिय मानिय बात ॥
 सकल परच संजोगिता । साज सु जोवत प्रात ॥३३॥

॥ चौपाई ॥

भगरू साह साज सब लई । सो पहुँचाय नीरपथ दई ॥
 बारी सघन वारि बहु जहां । बैठि गोठ विस्तारी तहां ॥३४॥

॥ दूहा ॥

तिन रिति मन मृगया करिय । चढ़न कहत चहुआन ॥
 आगै आगै अंगनां । पानीपंथ मिलान ॥३५॥
 रानी पहुँची जानि कै । राजा चढ्यौ तुरंग ॥
 पायन पेलै वाइ ज्यों । धाय न जाय कुरंग ॥३६॥

॥ कवित्त ॥

पानीपंथह राय । आय पेलत आपेटक ॥
 फिरि पहार उज्जार । देषि बंधा आगे टक ॥

नै विहंड बन हंकि । सकि नव पंड मंड बर ॥
 मूर सूर बाधंत । बाज छाडंत छंडि बर ॥
 बेधहि बराह उच्छाह मन । तानि इक्क सर इक लहै ॥
 पावै न जान सावज अबर । ऐन सैन मेलै गहै ॥३७॥
 सोलंबी संतोष दास । नंदन नारायन ॥
 तुच्छ पटे पग दौरि । पवन बिन त्रिपति परायन ॥
 आसा लागि धावत । रहै दासा तन लीयै ॥
 रेन दीह जानेन । रहै हिय हुकुम जु कीयै ॥
 तिन कह्यौ आय प्रथिराज सहुं । सिंध एक भाल्यौ निकट ॥
 निठुर निसंक कंदर मँड्यौ । बीज तेज लोचन बिकट ॥

॥ गाथा ॥

यौ सुं त्रिपति श्रवन्नं । गवनं कीन लीन कोवंडं ॥
 कोमल पद संचारं । उच्चारं कोमलं भासं ॥३८॥

॥ दूहा ॥

कंदर अंदर धूम किय । सिंध भरम प्रथिराज ॥
 पुन्व पुरान नही मुन्यौ । अति गति होत अकाज ॥३९॥

॥ पद्धरी ॥

त्रिन पत्र कढ्ढ लागि उठी भार । गइ गुहा मंभ धसि धूम धार ॥
 चट पट सह सुनियै न कान । फुटिय सु भाल छुट्यौ औसान ॥४०॥
 सब जीय जंत भजि सैल तज्जि । धरराय भार पावक गरज्जि ॥
 चप श्रवा संति पारंत चीस । कलमलि मुनिंद मन भई रीस ॥४१॥
 कोमल सु कमल द्रग श्रवै नीर । रद चंपि अधर कंपत सरीर ॥
 जट जूट छूटि उरभंत पाय । म्रग चरम परम नण्यौरिसाय ॥४२॥
 तमि तोरि डारि दिय अच्छ माल । निकर्यौ रिषीस बेहाल हाल ॥
 गहि दर्भ हस्त वर नीर लीन । प्रथिराज राज कहु श्राप दीन ॥४३॥

॥ गाथा ॥

इहि रिषि कहि बरबैनं । तजि संसार श्रापियं रायं ॥
 मोद्विग जिहि दुख दीनं । तास तुम चच्छ कढ्ढाई ॥४४॥

॥ कवित्त ॥

तबहि चंद कवि दौरि । विप्र पद रह्यौ विप्र गहि ॥
 छमि स्वामी अपराध । साध मुनि फुनि उद्धार कहि ॥

तुम सु षंड ब्रह्मंड । षंड नव तुम तप चल्लहि ॥
 तुम ध्रमन जीमूत । बरपि जीवन प्रति पल्लहि ॥
 केहरि भरम हम धूम किय । पायक बसिइय देव हुअ ॥
 संकुचि नरिंद कंठे डरपि । थरपि हथ्य सिरसोम सुअ ॥४५॥
 चंद बदन्न मुनिंद । कहै तुम नाम ठाम कहु ॥
 तो मुप सबद रसाल । सुनत सुप होय हियै बहु ॥
 तबहि भट्ट भापंत । स्वामि मो नाम चंद कवि ॥
 वह नरिंद प्रथिराज । लज्ज भरि रह्यौ देव दवि ॥
 अब ह्वै कपाल प्रभु उच्चरहु । कलुक देउ बरदान फिरि ॥
 श्रपौ नरिंद फिरि उद्धरहु । जिहि पारंगत होहि तिरि ॥४६॥

॥ चौपाई ॥

हों बालक दुरवासा तनौ । सत्ति बात सब तोसौ भनौ ॥
 इह नप होहि दियौ बरदान । तेरे कर मरिहें सुलतान ॥४७॥
 यों कहि रिपि अंतर सकुचान । मुह अगै अप मुप कुम्हिलान ॥
 देपि दया उर भई मुनिंद । बाल्यौ रिजु दुज आउ नरिंद ॥४८॥

॥ दहा ॥

नप चहुआन रु चंद कवि । अरु गोरी सुलतान ॥
 इक्क महरत में मरै । इह हम दिय बरदान ॥४९॥
 आनंदौ प्रथिराज सुनि । निज मन करै विचार ॥
 देहन दनु देवन रहै । साह सहित म्रत सार ॥५०॥
 बिन बेरां डेरां गयौ । भूपति भयौ उदास ॥
 मरन हान सें मगई । सुनिय सकल रनिवास ॥५१॥
 डेरां लगै डरावना । रह्यौ कटक सब मौन ॥
 नर नारी नारी छतें । मनो प्रान किय गौन ॥५२॥
 चित्त चित्ति संयोगिता । कोन कियौ में पाप ॥
 भोग समें संयोग में । कंतह भयौ सराप ॥५३॥

॥ कबित्त ॥

कै में कट्टी जाय । गाय चरती हक्कारी ॥
 कै कांसौ पग छियौ । धूम में नागिनि मारी ॥

कै न्योति विप्र परहरयौ । कर्यो नन बैन सासु कौ ॥
 तेल लोन वर हेम । चोर घर धरयौ कासु को ॥
 कीनी न कानि कै जेठ की । कै बोलत जाव न दयौ ॥
 बुल्ल्यौ सराप रिषि कंत कौ । सती हारु कें हर लयौ ॥५४॥
 निसा एक माधव सु मास । ग्रीषम रिति आगम ॥
 निसा जाम पच्छलौ । सुपन राजा लहि जागम ॥
 सेत चीर छौनी । पवित्र आभ्रन अलंकिय ॥
 मुँकत बंध त्राटक । बंध बेनी अवलंकिय ॥
 निज बैरिधारि कज्जल नयन । हर हराह सद्दह करिय ॥
 मानिककराइ वंसह विपम । रषि रषि धरनी धरिय ॥५५॥

॥ साटक ॥

का तूं सुंदरि हुंधरा किमहिता इच्छा परा वांछिता ॥
 को वांछा बर राज कोवर रुची दाताग्य रूपानिवा ॥
 नं नं नं त्रप जान दानरुचयं रूपं नं विद्धी त्रयं ॥
 पड गंधार सुमार दुत्तर अरी सो मे वरं सुंदरं ॥५६॥

॥ दूहा ॥

इम वसुधा सुपनंत दिय । रजगति रजन विचार ॥
 विलसत दिन ग्रीषम अरध । सुधपिय पंग कुआरि ॥५७॥
 रषि रषि उच्चार बर । गति सिघल अतिरूप ॥
 सुपनंतर चहुआन सों । चलन कहत इल भूप ॥५८॥
 धरकि चित्त जोगिनि त्रपति । दिपि प्रभात दुति गान ॥
 भान किरन दिसि दिसि फटी । तम घटि तमचर गान ॥५९॥

॥ कवित्त ॥

जगि जलनि प्रथिराज । जगि संजोग सुपनि कहि ॥
 सो सपनंतर जंपि । पत्ति दिट्टि जु रत्ति महि ॥
 सेत वस्त्र उत्तंग । चित्त हरीन कुटिला गति ॥
 बैसम गुन गुर दुत्ति । दुत्ति उजलंत कुटीरति ॥
 ऊँचै बचन्न बर कठिनह । धन कुलटा गति चलन कहि ॥
 भवभवसि गति त्रिम्मान कहि । नन जानै भव गतिय बहि ॥६०॥
 सुनि सुकंत धरइंद । जोय दिद्यौ जुगिनि गति ॥
 पुत्त भित्त दारा न बंध । रोकन पितुरनि पति ॥

दिष्टमान रोकै प्रमान । चच्छि अछनि लच्छि कुछी ॥
 भोग बिना वैधि जगत । भ्रमवय जग त्रय तुछी ॥
 मायाति नट्ट संसारनिय । त्रिप नचचवि मुक्के जगत ॥
 जीवन्न प्राण प्रापति जबसु । तव लग इह भावी बिगति ॥६१॥

॥ सुरिल्ल ॥

हँसि आलिगन दै चहुआन । पिय मयूष दंपति रसपान ॥
 सुरत सुरत मंन बर मत्त । करहि सार संसार सुरत्त ॥६२॥

॥ कवित्त ॥

तब सु साहि गज्जनै । दूत दिल्लीय पठाए ॥
 जु कछु तंत कौ मंत । अंत कहि कहि समुभाए ॥
 लै आवहु जंगल नरेस । पव्वरि सब सुद्धिय ॥
 राज काज चहुआन । सकल सामंत सुबुद्धिय ॥
 फुरमान साहि सिर धरिलियौ । भेषक्रियौ सोफी तिनह ॥
 उभै पण्य क्रम पंथह चलै । कागर काइथ कर दिनह ॥६३॥

॥ दूहा ॥

चर वर वत्तनि सिद्ध किय । भुकि किय घाव निसान ॥
 सत्त सहस कगगर फटे । देस देस सुरतान ॥६४॥
 फुट्टिय वत्त प्रचार चर । घर घर दिल्लीय थान ॥
 चढ्यौ साहि चहुआन पर । चढि हय गय असमान ॥६५॥
 वढि आवत दिल्ली सहर । चढ्यौ साहि सुरतान ॥
 घर अंगन मंगन रुगिग । सुनत सूर अकुलान ॥६६॥
 ग्रह बंभन ग्रहवान नर । ग्रह छत्री छह वृत्त ॥
 भई बाति नर नारि मुप । सब लगौ सन सन्न ॥६७॥

॥ सुरिल्ल ॥

भै लगौ दिल्लीय पुर जामह । नगर सेठ पहि गय प्रजतामह ॥
 मिलिय सकल एकंत महाजन । किम बुभभै रतिवतौ राजन ॥६८॥

॥ दूहा ॥

सुने गहंमह विप्र दर । आयौ उट्टे ताह ॥
 तब दरपति सनमुप कहिय । आये श्रीपति साह ॥६९॥

प्रजा पलक सथ उम्मही । जे बड़ दिल्ली साह ॥
सो आये दरबार तुम । कोइ इक काज उगाह ॥७०॥
आए आतुर राज गुर । करिय विवह महमान ॥
आदर करि आसन्न दिय । संबोधे बर बानि ॥७१॥

॥ कवित्त ॥

सुनि अवाज सुरतान । पलक भजिय नद मंडल ॥
कर कुसाव भेहरा । दान अरु मान अपंडल ॥
मिलि परवान पुँडीर । सहर लुट्यौ द्रब साइय ॥
हनि सोदागिरि बानि । बनिज उन्नित पट पाइय ॥
अग्यान लुपै अग्या न्रपति । सत संपति संभर धनी ॥
गुरराजकाज अवसर अवसि । प्रज पुकार मंडिय धनी ॥७२॥
हम सु कज्ज प्रब पंच । पढ़ै पत्रा प्रभु रंजहि ॥
हम जु लच्छि आस रहि । चरन चंदन वसि बंदहि ॥
हम सुदेव जग्योपवीत । सोहै तन मंडन ॥
हम विरह बंदि न पढंत । पापह पर पंडन ॥
इह विकट भट्ट चंदहि चरित । कहै सुमानै न्रप नबल ॥
परतषि द्रुग पुच्छन चलौ । मंत्र घत्त सखह सबल ॥७३॥
धर बाहर पंडवन बुद्धि । बंधवन रुधि छुटिय ॥
धर बाहर वामन । छलित्त बल दोष सुथटिय ॥
धर बाहर जुरि जरासिंध । गुर राज जुद्ध किय ॥
धर बाहर सुर पत्ति । अस्ति दद्धीच मंगि लिय ॥
जिहि जियत धरनि धर और प्रभु । तिहि जननी जुवचन हरिय ॥
बंभन सुकज्ज इह अज्ज तुम । प्रज पुकार मंडी करिय ॥७४॥

॥ दूहा ॥

आदर चंद अनंत किय । ग्रह आवत गुरु राम ॥
सम सुत त्रियनि सुचरन परि । सिर फेरिग सब हाम ॥७५॥

॥ मुरिल्ल ॥

तब गुरराज राज कबि बुभमै । तुहि बरदाइ तीन पुर सुभमै ॥
अहि निसि देव सेव गुरु ठानिय । सो षट मास मिले बिन जानिय ॥७६॥

॥ दूहा ॥

हस्यौ चंद वर बिप्र सों । तुम जानहु बहु भंति ॥
जिहि कामिनि कलहौ कियौ । सो जामिनि बिलसंति ॥७७॥

• ॥ अजंगी ॥

मिले विप्र भट्ट अनूपम धाम । मनोहिंदवानं सबानं तकामं ॥
उभै सूर साईं मुअग्या विनानं । चढे एक चौडोल नर एक जानं ॥७८॥

॥ कबित्त ॥

दिष्पि दइय दरबार । पंग कुंअरि चर बारहि ॥
नारि भेष नर वस्त्र । सस्त्र लकरी कर भारहि ॥
मार मार उच्चार । बाल तरुनी सुगंध रस ॥
तुरिय नथि गज नथि । नथि रथ विरद बंदि जस ॥
बाजहि विसाल रत्न तूर रव । भवर भीर भामिनि भवन ॥
दिठि परतल रथ रपय परत । नकरि जीव अगह भवन ॥७९॥

॥ दूहा ॥

वर किंचिक पुव्वह व्रपति । सुनि कलरव कवि वानि ॥
धाय चंद दरसन कियौ । धम्म परिग्गह ठानि ॥८०॥
सुनि कवि वानि प्रमान धन । कहि इच्छनी सें जाइ ॥
जु कल्लु कहौ वरदाय वर । ज्यों हित दिसा पसाइ ॥८१॥
कगार अप्पह राज कर । सुप जंपह इह बत्त ॥
गौरी रत्तौ तुअ धरनि । तूं गोरी रस रत्त ॥८२॥
सुनि कगार फार्यो सुकर । धर रष्यै गुर भट्ट ॥
तरकि तोन सज्यौ व्रपति । जिम बदल्यौ रस नट्ट ॥८३॥
प्रिय अप्रिय दिष्पौ बदन । किय जिय व्रप भौ सथ ॥
हूँ पूछों वर बरह तुहि । कहि सम दौरति कथ ॥८४॥
अदभुत इक दिष्पौ व्रपति । रयनि गलित पिन प्रात ॥
सुरति एक सम्मुह रही । सा सुपनंतर बात ॥८५॥

॥ कबित्त ॥

सुनि उट्टिय संजोगि । बचन जै जै जंपत जस ॥
धनि सूरति चहुअन । राज सिंगार बीर रस ॥

हक्क मरन सुर नरौ । मरन सिध साधक मुक्कै ॥
 भरन रहै जग नाम । चित्त रषपत म्रत चुक्कै ॥
 अध अध करे अरियन दुअध । तूं उधतदि अरधंग हौं ॥
 सामंतन को सो मंत करि । राजस अप्प पधारिहौं ॥८६॥
 सुपनंतर पुच्छनह । राजगुर कविगुर बुल्लिय ॥
 सो सुपनंतर सुनधि । तेन सुप तिन प्रति पुल्लिय ॥
 सुबर हथ्य दै मथ्य । अभय पंजर पढि दिअौ ॥
 सहस कलस भरि पीर । अरधु रविससि को किअौ ॥
 दसवलि दिसान दसमहिप हनि । मित अनंत मित दान दिय ॥
 तिहि दिवस देव प्रथिराज दर । संभसुभर भर महल किय ॥८७॥

॥ दूहा ॥

आवस्यक भावी विगति । कहा महिप वध होइ ॥
 जो जतननि टारी टरै । नल पंडव सम कोइ ॥८८॥

॥ कबित्त ॥

करिय सुचित भर सब्ब । राज दिन्नेव द्रव्य भर ॥
 मंगि मदन शृंगार । गज्जवर पट्ट मह भर ॥
 रयन कुमर आभासि । दीन माला मुत्ताहल ॥
 असी बंधी निज पानि । बंदि कीनौ कोलाहल ॥
 आरोहि गज्ज कुम्मार निज । पच्छ बंध सा सिंधु किय ॥
 जोगिनिय बंदि चहुआन पट्ट । कत्य काज मन्नेव इय ॥८९॥

॥ कबित्त ॥

उठिठ महल प्रथिराज । मंगि आरोहन बाजिय ॥
 रावल प्रथम चढाय । चह्यौ चहुआनसुताजिय ॥
 करि अस्तुति सम सिंध । तुमहि बडुं बडुंइय ॥
 तुम जोगिद जग जित्त । कित्तितुम कहियन जाइय ॥
 परसंस करत अन्नेक परि । करि डेरा रावर समर ॥
 चढढनह बरनिसि सेप कहि । आयो बज्जन बजत घर ॥९०॥
 बाजि धरिय धरियार । साहि उत्तरिय सिंधुनद ॥
 विपम वाव उड़ि भ्रिग । सिंधुछुट्यौ कि सद मद ॥
 तमसि तमसि सामंत । राजराजस किय तामस ॥

घुमरि घुमरि नीसान । थान जगो मन पावस ॥
 निसि अद्ध अनेही प्रीय तिय । पिय पिय पिय पण्पीह तिय ॥
 पंपनिय फरकि अणिय अनपि । उदय अनंद सुबीर किय ॥६१॥

॥ मोतीदाम ॥

जयंजय सह बदै चहुंओर । करै जनु प्रात सिपंडिय सार ॥
 भनक्किय भेरिसु भभभर वह । रनक्किय बीर नफेरिय सह ॥६२॥
 हरक्किय भूभ सुराज रवह । भरक्किय नाग गयो सिरलह ॥
 तुरक्किय तुंग तुरंगन हीस । सरक्किय सण्पय सेसनि सीस ॥६३॥
 परक्किय पण्पर पण्पर तोन । ढलक्किय ढाल सुढिल्लिय प्रोन ॥
 हलक्किय हाल फवज्जिय सूर । धरक्किय धाम सु कातर कूर ॥६४॥
 कथं कथमान गुमान उमान । दुअंदस कोस मिलान मिलान ॥
 सु हिंदुअ मेछ बज्यौ रन तोल । गयौ दिव देव कवी दिय बोल ॥६५॥
 निमेषक भूमि अयासह अंग । चह्यौ जनु इंद्र धनुक्कह रंग ॥
 जयं जय सह करी तिहि बीर । कह्यौ तिनि राज रवन्नह पोर ॥६६॥

॥ कुंडलिया ॥

त्रप पयान पोमिनि परपि । घटि साहस घटि एक ॥
 सुकथ केलि पीयूष पिय । जतन करहि सपि केक ॥
 जतन करहि सपि केक । हाय करि जै जै जंपहि ॥
 दंत कष्ट कर मिडि । थरकि थरहर जिय कंपहि ॥
 इह प्रयान नृप करत । परी संजोगि धरा धपि ॥
 सषी करत सब जतन । चलत पयान तहां नृप ॥६७॥

॥ ओटक ॥

जतनं जतनं किय भंभलियं । दिषि दीपक भोंन भर्यौ सुहियं ॥
 भवनं भवनं भवनां गरियं । धर मुच्छि परी बुधि सागरियं ॥६८॥
 ससि सूर चयं रवि जोग ससी । विष ज्वाल असी सुमनं विगसी ॥
 द्रिग चंचल अंचल सोमुदयं । विरहा उर उर्ग प्रसी सुधियं ॥६९॥
 अहि घुट्टि लियं बयरं जुलियं । पह तुट्टि सुधा निधि की विधियं ॥
 वर बिंब बिलोकि सपी करियं । असु आसिक नासिक से भरियं ॥१००॥
 अह कट्टहि निठ्ठ निसान घटे । बिरही घटिका जनु अग्नि पट्टै ॥
 बिरही बरनेह अनंग कसं । भए जानि कि रोग त्रिदोस बसं ॥१०१॥

सुबढी विरही न घटे न घटं । सु चढी जनु बेलिय ब्रष बटं ॥
जल नेननि बूंद परै कुचयं । तिनकी उपमा नयनं सचयं ॥१०२॥
जुरठी हुति पुढव कमोद कली । तिहि तारक सोम बसीठ हली ॥
इहि सारन प्रानन मुक्कि पती । तिन मंडि रहे दुप देपि जती ॥१०३॥
चल चंदन चीरति सीर करै । लहरी बिप जानित प्रान हरै ॥
सपि सूंठिन मूढ रसे सुतनं । घन सारनि हारनि नारि थनं ॥१०४॥
नटि नारिय नारिय पानि गहै । तजि जाहिन अंक वियोग सहै ॥
पल ध्याननि आननि नेन चहै । अलि ओटन जोट वियोग सहै ॥१०५॥
घन घूमरि भूंमि समीप रहै । ठग टगग लगी चप कोन चहै ॥
षिन दापिन पीनह पीन भई । घरियार निहारत प्रात भई ॥१०६॥

॥ कुंडलिया ॥

घर घयार बज्जिग विपम । हलिंग हिंदु दल हाल ॥
दुतिय चंद पूनिम जिमै । बर वियोग बढि बाल ॥
बर वियोग बढि बाल । लाल प्रीतम कर छुट्टौ ॥
है कारन हा कंत । आस आसु जानि न फुट्टौ ॥
देपंत नैन सुभमै न दिसि । परिय भूमि संथार ॥
संजोगी जोगिन भई । जब बज्जिग घरियार ॥१०७॥

॥ कबित्त ॥

वही रत्ति पावस्स । वही मघवान धनुष्यं ॥
वही चपल चमकंत । वही बगपंत निरुष्यं ॥
वही घटा घन घोर । वही पण्पीह मोर सुर ॥
वही जमीं असमान । वही रविससि निसि वासुर ॥
वेई श्रवास जुगिन पुरह । वेई सहचरि मंडलिय ॥
संजोगि पयंपति कंत बिन । मुहि न कछू लगगत रलिय ॥१०८॥

॥ पद्धरी ॥

चढि चलयौ साह चहुआन सूर । धुंधरी विदिसि दिसि दिषिकरूर ॥
सुर धुनि निसान बज्जे सुरंग । नफ्फेरि रंग सिंधू उपंग ॥१०९॥
चतुरंग सेन सजि बर प्रमान । सिंधूरन ब्रह्म चढि चाहुआन ॥
षोलि किपाट बर मुगति रूप । सोमेस पूत अवधूत भूप ॥११०॥

॥ कवित्त ॥

चढ़त राज चहुआन । छींक अगनेव देव दिसि ॥
 मिल कुंजर बिन दंत । अश्व अपलानि चितवसि ॥
 सूत्र मंत तुट्यौ । राज दिट्ट सु विचारय ॥
 गौर कुंभ उप्परै । स्याम कुंभहअद्वारिय ॥
 तजि मोष रस्स संधी त्रिपा । आवै कित गवनन छत्री ॥
 असु नीम जोग पंचमि दिवस । चढ्यौ राज निस तुछ षत्री ॥१११॥

॥ दूहा ॥

इह चरित्र पिषिय चरन । वह चरित्र नह राय ॥
 सो चरित्र सुरतान सों । सिध उलंघिय धाय ॥११२॥
 जाय जलह पथ उत्तर्यौ । दिल्ली वै चहुआन ॥
 सूरन अति आनंद हुआ । सहि संजोगी हान ॥११३॥

॥ कवित्त ॥

सुभर उतरि सतनंज । चंद पट्टौ कंगूरह ॥
 लै आयौ जालंध । राइ हाहलि हंमीरह ॥

को रविद को जिद । कोन तापस को छाया ॥
 को साहब को राज । कवन सुकवि कह गाया ॥
 इह परम हंस संसार हित । तूं माया तूं मोह मत ॥
 जानौ न बाम दच्छिन करन । हौं साईं संसार रत ॥११७॥

एह परत्तर दीह । चंद जान्यौ चहुआन ॥
 जिन भुजानि धर भार । भोमतीय अधरं भानं ॥
 हसम हय गगय देस । दीह घट्टै बल घट्टै ॥
 धन्न मरन, तिन जानि । महल सिर सारे पट्टै ॥
 आवृत्त बात जोगिनि पुरह । भव भवस्य इह त्रिमयौ ॥
 कविचंद्र रुक्मिक बंच्यौ जियन । ग्रिह गोरी हाहुलि गयौ ॥११८॥

॥ कुंडलिया ॥

रोकि कविदहि अप्प मिलि । सो सुरतान अबुभक्त ॥
 सुनत राज पृथिराज कै । हवि लागी उर मभक्त ॥
 हवि लागी उर मभक्त । संभ आई गुर गल्हां ॥
 भट्ट बसीठह रोकि । अप्प है वै दिसि हल्लां ॥
 दस हजार हैवरनि । लष पयदल श्रम वृन्दा ॥
 मिल्यौ जाइ सुलितान । रोकि देवलें कविदा ॥११९॥

॥ कबित्त ॥

सजि आयौ सुरतान । जूह सेना अति आतुर ॥
 तुरिय लष दह शुभर । दंति दस सहस मंत वर ॥
 पुर संतुल सा निकट । आय दलबल संपत्तौ ॥
 सज्यौ देपि दिल्लीस । नाम गोरी अनुरत्तौ ॥
 पुछ्यौ सुमंत तातार पां । पुरासांन साहाब सदि ॥
 टट्टौ सुसजि जंगल सुपह । रचौ बंध अप्पान रदि ॥१२०॥

॥ दूहा ॥

साक सु विक्रम रुद्र सौ । अट्ट अग्र पंचास ॥
 सनिवासर संक्रांतिकक । श्रावन अद्धौ मास ॥१२१॥
 सावन मावसि सूर सुअ । उभय घटी उदयत्त ॥
 प्रथम रोस दोउ दीन दल । मिलन सुभर रन रत्त ॥१२२॥
 दरसे दल बदल विषम । रागरु लाग निसांन ॥
 मिले पुढ पच्छिमह तें । चाहुआन सुलतान ॥१२३॥
 सारन धीरी सारुहै । धीर न धरी प्रमान ॥
 चाहुआन गोरी सरिस । गोरी रा चहुआन ॥१२४॥

॥ भुजंगी ॥

मिले चाय चौहान सुलतान पगंग । मनो वारुनी छक्किवे बारु लगंग ॥
 उठे हथ हक्कं कहं कूइकालं । जुटे जोध जोद्धं तुटै ताल तालं ॥१२५॥
 भए सेल भेलं हुहुं मार मारं । बढीसंग लगगी वृजी धार धारं ॥
 सुभट्टं सुथट्टं सुरीसं समेकं । भई सेलमेलं अनी एक एकं ॥१२६॥
 परं घाइ अध्वाइ केकेन सुद्धं । कटै अद्ध अद्धं कमद्धं कमद्धं ॥
 परै सूर सभक्तं उत्तंगं सुधारं । भ्रमै व्योम विस्मान आरंभ हारं ॥१२७॥
 छुटे बान चहुआन आवद्ध राजं । लगे मेछ अंगं मनो वञ्च बाजं ॥
 फुटै संगि संनाह के अंग अंगं । उठै श्रोन छिछें जरै जानि दंगं ॥१२८॥
 हते राज प्रथिराज सामंत सेतं । भए मेछ अद्धे मनो राह केतं ॥
 बह्यो वीर नन्दी सुसूली अनन्दी । नचै भूत भैरु बकें जानि बंदी ॥१२९॥
 भिरें जुद्ध जानीय जुथ्यानि जुथ्यं । ग्रहै गिद्धि सेवाल लुथ्यानि लुथ्यं ॥
 चुवै श्रोन सट्टी किलक्कंत घुटै । ग्रह मेछ लागें जुरै सूर छुट्टै ॥१३०॥

॥ कबित्त ॥

एक बान कम्मान । साहि चहुआन कोप गहि ॥
 पां ततार लहु बंध । कट्टे सुरंग बहि ॥
 आड़न नपि नरिंद । बार कट्टिय कट्टारिय ॥
 दिन पलट्यौ चहुआन । हथ छुट्टै नह तारिय ॥
 भावी बिगति भजन घडन । दइ दुवाह इह निम्मयौ ॥
 पृथिराज गहन सुरतान कै । मुप जंपन वर सुभयौ ॥१३१॥
 मरत बार दुरजोध । पानि संग्रहि रोरह वर ॥
 नल मुक्कै भट नट्ट । गोपि ग्राहत तन पंडर ॥
 मलह सिंह कछि म्रदंग । गूजर राव अंगन ॥
 सूर राह संग्रहन । दान छुट्टंत सो पुनि घन ॥
 राजेस सूर संभरि धनी । अरि वसि परि मंत्रन सुगुर ॥
 सामंत सूर सबै परे । रह्यौ एक रूपे पहर ॥१३२॥

॥ मोतीदाम ॥

करी मति घेरन हथिय गंस । सुत रावन ज्यौं चतुरानन पंसि ॥१३३॥
 परी चिहुं कोदह घेर नरिंद । कटे कर दंत ज्यौं भिल्लिय कंद ॥
 सुसंग्रहि संकट सूर निसंधि । लियौ नप गोरिय साहि सुरंधि ॥१३४॥
 गजंभर ढाल बैठाय नरेस । चलयौ गुरि गोरिय गज्जन देस ॥१३५॥

॥ दूहा ॥

ग्रहे राज गज्जन चल्थौ । तब रन रत्ता सूर ॥
अड्डे आवध वज्जि भ्रत । संघारिग भर सूर ॥१३६॥

॥ कबित्त ॥

न मिटै लिपित लिलाट । लिष्यौ ब्रह्मासिर अष्पर ॥
असुर गह्यौ प्रथिराज । सुनत संजोगि परिय धर ॥
चंद्र सूर ग्रह रिष्व । इंद्र सुर नर असुराइन ॥
सिध साधक मुनि राइ । मंत तंतिय तारायन ॥
को सकै अवर आरंभ करि । जो विधिना विधि गति भन्यौ ॥
निम्मान बात जुग जुग लगै । नह दिट्टौ मिटन सुन्यौ ॥१३७॥

॥ दूहा ॥

बहु बिलाप सब मिलि करहि । नहि सुधि बुद्धि गियान ॥
प्रीय बचन अप्रीय सुनि । गये संजोगिय रान ॥१३८॥
प्राण जात नह पल लग्यौ । सुन संदेस विराग ॥
सुनत बचन प्रियजन कु कल । धन्नि त्रिया तो भाग ॥१३९॥

॥ कबित्त ॥

गहि चहुआन नरिंद । साह गज्जनै सपत्तौ ॥
थान रषि दिल्ली प्रमान । साहि पीरोज प्रमतौ ॥
उत उत्तंग बाजित्र । नह सहनाय सुभेरिय ॥
जीति लियो चहुआन । दोउ दिष्वत दल फेरिय ॥
सुरतान गह्यौ चहुआन बर । कवि छुट्टौ जालंध ते ॥
संपन्न सूर पत्तह दिली । भौ कवि रत्त सुअं मतै ॥१४०॥

॥ कुंडलिया ॥

चर आए ढिल्लिय नयर । दसमि सुदिन अंगार ॥
बुद्धवार एकादसी । चली बरन खगदार ॥
चली बरन खगदार । सूर सामंत तीय वर ॥
सब परिगह प्रथिराज । भयौ मंगल मंगल भर ॥
षट मुरतिय चहुआन । अगि आलिग अंगवर ॥
दुष्व बंधि संजोगि । जोग संयोग कहै चर ॥१४१॥

॥ कवित्त ॥

निरपि निधन संजोगि । प्रिथी सज्जिय सु सामि सथ ॥
 हक्कि हंस तत्तारि । बीर अवरिय प्रेम पथ ॥
 साजि सकल शृंगार । हार मंडिय मुगतामनि ॥
 रजि भूपन हय रोहि । जलज अच्छित उछारति ॥
 हैहया सद् जंपत जगन । हरि हर सुर उच्चार वर ॥
 सह गमन सिध रावर चले । तजि महि फूल श्रीफल सुकर ॥१४२॥
 सहस पंच सह गवनि । अवर सामंत सूर भर ॥
 चलिय मिलिय मन संधि । सकल निज नाह साह वर ॥
 भूपन सबनि विराजि । साजि सिंगार सैल तन ॥
 मन अंनंत उद्धरिय । करिय हरि हरि जु दान दिय ॥
 जहाँ जुथान सुनि प्रिय गवन । न करि विरम मन धरिय धुअ ॥
 धनि धन्य सद् आयास हुअ । लपि कौतिग अनभूत भुअ ॥१४३॥
 चंदन मंदिर दार । रचिय वर दिध लघुदर ॥
 विवह कुसुम वर रोहि । सोहि पट बसन सुरह वर ॥
 जिय जंवू नद दान । रथ हय गय मुगतामनि ॥
 बिण्ण बेद उच्चरहि । धेन सुरबर आयासनि ॥
 किय लोक लोक अंजुलि कुसुम । सजि विमान सुर सिर फिरहि ॥
 संक्रमिय अप्प साहागवनि । मंभि गवन हव्विहि हरहि ॥१४४॥
 गहि चहुआन नरिद । गयौ गज्जनै साहि घर ॥
 दिहिय हय गय द्रव्य । ताहि तन इह सुअपिधर ॥
 बरस अद्ध तस अद्ध । मुद्ध कीनौ नयन बिन ॥
 जम्म जम्म जुग अवरु । जाय प्रथिराज इक्क षिन ॥
 कह करै न्त्रपति समुझै मनह । अप उपाव सो बहु करय ॥
 विधिना विचित्र निरम्यौ पटल । निमपन इक लिषित टरय ॥१४५॥
 तव सुसाहि गज्जनय । ग्रहियं जंगल पति तानह ॥
 हथ समपि हुजाब । सुविधि रण्यौ बल मानह ॥
 मैडिय कोट महल । अपि दिसि दषिन धामह ॥
 तहां रपिय प्रथिराज । सुबल रषक रुहमामह ॥
 बिप्रह सुरषि पारस्स दस । बेनिय दत्त दबे सुमुष ॥
 नन करय राज आहार कलु । कहिय तेज हुज्जाब रुष ॥१४६॥

बिरदाबलि बिरदाइ । पाय अंदू कर ढीले ॥
 तामस बुभवन काज । बोलि मधु वचन रसीले ॥
 गढ गिलोल गज बाग । लागि सककै न डरहि उर ॥
 नीठ नीठ रण्यौ । आनि उभौ जल उपर ॥
 नरबदा तट कज्जली सुवन । जूथ हस्तिनि संभरिय ॥
 पीय न उदक कबिचंद कहि । मद सिंधुर जिम बलभरिय ॥१४७॥
 तव चितिय हुज्जाव । गयौ अप्पन गोरिय प्रति ॥
 किय सलाम तिय वार । धरिय अंगुरि धनिय नति ॥
 कीय अरज कर जोरि । सुनहु साहाय मन्नि धुअ ॥
 बिन अहार चहुआन । पषप सारद्ध तीन हुअ ॥
 कसमलिय चित्त संभलिसुचिर । अप्पअमुपति चहुआन गय ॥
 आरुह्यौ बिकट रस त्रिपति बर । दिट्टौ दिट्ट करु मय ॥१४८॥
 चमकि चित्त साहाब । सुनय चहुआन सु अथ्यह ॥
 बोलि हुजाब सुआब । सेप कालन समथ्यह ॥
 तुम कढ्ढहु चहुआन । नयन दिठ बंक्रन छंडय ॥
 जौ बंधन बंधियौ । तौइ संमुप द्रिग मंडय ॥
 सिर धारि बोल कानै फिरिय । सहसमीर मिलि अप्प वृग ॥
 भ्रम पारितेन चहुआन गहि । बंधिय राजन कढिद द्रिग ॥१४९॥

॥ भुजंगी ॥

पर्यौ बंधन गज्जनै मेछ हथ्यं । बिचारै करी अप्प करतूति पिथ्यं ॥
 हन्यौ दासि के हेतु कैमास वान । गजं पून चामंडबेरी भरानं ॥१५०॥
 बंधे कन्ह काका चपं पट्ट गाढ़े । विना दोस पुंडीर से भ्रत काढ़े ॥
 बरज्जंत चंदं चलयौ हूं कनौजं । तहां सूर सामंत कटि घट्टि फौजं ॥१५१॥
 लियें राज, लोकं रमतं सिकारं । भ्रमं केहरी कंदरा रिष्य जारं ॥
 रह्यौ गैर महलं लियै राजलोकं । कटे सूर सामंत कीयौ न सोकं ॥१५२॥
 भुलानौ सरुपं भयौ काम अंधं । निसा बासरं चित्त जानी न संढं ॥
 दरब्बार मेटी अदब्बं बड़ाई । छरी ऊपरी सीस हम्मीर राई ॥१५३॥
 करन्नं पुजारं प्रथा पौरि आई । बरदाइ प्रोहित सें बिस्सराई ॥
 षडे आय साहाय काजं पुमानं । गयौ चूकि अवसान सनमुष्य जानं ॥१५४॥
 भई बुद्धि विपरीति इह होनहारं । छलं पारि सुबिहान चषपं बिकारं ॥
 पलट्यौ सुदीहं रही लगि तारी । भले राज गोविंद मन्वाप्रहारी ॥१५५॥

सहौ फूल की फूलनी नाहि नाथ । तुरत्तं तरायौ जु मालीन हाथं ॥
 नहीं सूर सामंत परिवार देसं । नहीं गज्ज बाजं भंडारं दिलेसं ॥१५६॥
 नहीं पंगजा प्रान तें अत्ति प्यारी । नहीं गोप महिला इतं चित्रसारी ॥
 नहीं चिग अगें सुनपे परदा । नहीं भोक हम्माम गरसी सरदा ॥१५७॥
 नहीं रेसमं के दुलीचे गिलम्मे । नहीं हिंगु बाटं सुवन्नं हिलम्मे ॥
 नहीं सीरपं रूप रंके उसीसा । नहीं पस्समी तक्किये पल्लिग पोसा ॥१५८॥
 नहीं गहियं सुथरी भूपि छोरा । नहीं मेन बतीन के दीप जोरा ॥
 नहीं डंमरी यौन आवै सुगंधा । नहीं चौसरं फूल बंधे अबंधा ॥१५९॥
 नहीं मृग नयनी चरन्नं तलासै । नहीं कूक कोका सबहं उलासै ॥
 नहीं पातुरं चातुरं न्रत्यकारी । नहीं ताल संगीत आलापचारी ॥१६०॥
 नहीं कथ्यकं सथ्य जंपै कहानी । पयं सककरं हूत लगै सुहानी ॥
 नहीं पासवानं पवांसं हजुरी । सबे मंडली मेछ लगै करुरी ॥१६१॥
 नहीं रूपकं राग रंगं उचारं । सुनों कन्न सावह वंगं पुकारं ॥
 नहीं चोम मौजं करूं लष्य दानं । नहीं भट्ट चंदं विरहं बपानं ॥१६२॥
 चपं मंजरी के रहे चौगिरहं । दवं दंग ज्यों लगि देही दरहं ॥
 कहा हाल रेनं कुमारं धरत्ती । कहों कोन सों कोन आनै निरत्ती ॥१६३॥
 निराधार आधार करतारतूं ही । बन्यौ संकटं आय मो जीव सौंही ॥
 कली कद मंगाय वृंदावनी को । संभालौ नहीं तौ कहा औधनी क्यों ॥१६४॥

बानबोध समय

॥ दूहा ॥

कवि आयौ दिल्ली पुरह । देख्यौ नयर विरूप ॥
बिन आभ्रन नर नारि सब । बिना तेज ग्रह भूप ॥१॥
इम कवि आयौ जात करि । गृह सुषिषि द्विग काज ॥
पुछ्यौ सुत्त सुतीय तिहि । कहा करै प्रथिराज ॥२॥
तब सुत्रिया उत्तर दियौ । बोलि सुहावने बैन ॥
गोरी दल नृप संग्रह्यौ । कियौ साह बिन नैन ॥३॥
सुनत श्रवन धरनिय परिग । हरि हरिं हरि मुप जंपि ॥
उद्यौ मनह विश्राम करि । भयौ वित्रिन मन कंपि ॥४॥
आदि अंत लागि वृत्त मन । वृन्नि गुनी गुन राज ॥
पुस्तक जल्हन हथ्य दै । चलि गज्जन न्त्रप काज ॥५॥

॥ पद्धरी ॥

सम चल्यौ भट्ट गज्जन सुराह । बन विषम सुषम उग्गाह गाह ॥
रह उंच नीच सम विषम थान । गह बरन सैल रन जल थलान ॥६॥
द्विग जोति लग्न मन सबद भीन । भुल्यौ सरीर जिन मग्न घीन ॥
रत्तौ सुजोग मग्नह सरूव । जगमगत जोति आयास भूव ॥७॥
गुंजरत दरिय सम्मीर सह । निभभरत भरत नद रोर नह ॥
बन बिकट रंध कीचक्क राह । सहहि सु ताम संमीर गाह ॥८॥

॥ दूहा ॥

इहि विधि पत्तौ गज्जनै । जहं गोरी सुरतान ॥
तपै मेछ इछ अप्पनी । मनो भान मध्यान ॥९॥

॥ कवित्त ॥

प्रथम मुक्कि दरबार । लज्ज संकर सुरतानी ॥
है गै नट नाटक्क । भ्रम दिषिय परमानी ॥
एक कहै इह भट्ट । इक कहै सिद्ध प्रमानं ॥
एक कहै ठग ठोठ । एक वेताल सुजानं ॥

इक कहै जोग पाण्ड इह । भ्रम लग्यौ रोकं न कवि ॥
 तब लगि चंद वरदाय बर । गयौ थान दरबार हवि ॥१०॥
 देषि चंद मन मंद । साहि आनंद उपन्नौ ॥
 निजरि अप्प सुविहान । बोलि आलम अप लिअौ ॥
 हथ्य अप्पि दस तकक । बत्त पुच्छी दुप सुष बर ॥
 बिधि विधान त्रिम्मयौ । करन उद्देस कविय बर ॥
 संग्राम स्वाम क्यौ मुक्यौ । क्यौ कविद्र भारथ्य तजि ॥
 किहिथान लोइ संभरि धनी । कहौ सुवत्त लज्जौ न लजि ॥११॥

॥ पद्धरी ॥

घरि अद्ध रह्यौ तिन बार तब्ब । सुरतान बोलि बर कहिग सव्व ॥
 हम जाहि चंद षेलनह दप्प । दोय गल्ह कल्हि करि चलहु तप्प ॥१२॥

॥ दूहा ॥

जु कल्लु त्रम्मयौ भट्ट बर । तुम जानौ बहु बुद्धि ॥
 सो न टरै विधुना सुहथ । महत न दुष्प अलुद्ध ॥१३॥

॥ पद्धरी ॥

बुल्यौ सुबीर सुविहान जान । हवसी सबोलि सुविहान पान ॥
 फिरि साहि ताहि फुरमान दीन । हम बहुत चंद महमान कीन ॥१४॥
 हुज्जाब चंद दोउ एक सथ्य । आए सुमेह पत्रीय तथ्य ॥
 बोल्यौ भीम हुज्जाब ताम । बे आम कन्धि रण्यौ सुमाम ॥१५॥
 सुनि भीम अत्ति आनंद अप्प । लग्यौ सुपाइ पत्री सुतप्प ॥
 हुज्जाब फिर्यौ कवि प्रेरि ताम । लै गयौ भीम कित मंनि काम ॥१६॥

॥ दूहा ॥

हरफ हहकरि गिल्लयौ । घर आयौ सु विहान ॥
 भषत चंद मन मंभ निसि । नीठ सु भयौ विहान ॥१७॥

॥ चौपाई ॥

तब सहाब बोल्यो हुज्जाबह । अहो भट्ट आनो सित्तावह ॥
 तब हुजाब आयौ कलि पासह । बोलि चल्यौ कवि अंदर तासह ॥१८॥

॥ पद्धरी ॥

बुल्लाई चंद हजूर साह । बूझै सुवत्त अप पातिसाह ॥
 बैराग जिंद कहौ जोग गित । जोगहि विरुद्ध हम मिलन मत्ति ॥१९॥

॥ दूहा ॥

हम अबुद्धि सुरतान इह । भट्ट भाप सुष काज ॥
 नव रस में रस अप्परस । इहै जोग सुष काज ॥२०॥
 जो कछु मंगहु भट्ट वर । करै बनै सुबिहान ॥
 भुम्मि लच्छि यौ चंद तुहि । नह अप्पौ चहुआन ॥२१॥
 नह मंगै कविचंद नृप । कहौन रसना छंडि ॥
 कथ्य पुब्ब आलम कहौ । छिनक श्रवन जो मंडि ॥२२॥
 बालपनै प्रथिराज सम । अति मित्रं तन कीन ॥
 जु कछु स्वाद मन में भयौ । इच्छारस मंगि लीन ॥२३॥
 पुब्ब पराक्रम राज किय । कछु जंपो तुछ ग्यान ॥
 अरु जु कछु तुछ जंपिहौ । सब जानौ सुबिहान ॥२४॥
 इक्क सुदिन प्रथिराज रस । मुष कढ्ढो तिहि वार ॥
 सिंगिनि सरवरं इच्छविन । सत्त हनन घरियार ॥२५॥
 वर सुनंत कपै हियौ । दिल न रहै सुरतान ॥
 सुद्धरोग भौ रोग मन । कढ्ढन कौ सुबिहान ॥२६॥
 ती आयो तुहि आस करि । तो पासं चहुआन ॥
 सो दरोग दिल लगि मुक्क । कढ्ढन को सुबिहान ॥२७॥
 में जान्यो अचरिज्ज मन । नृपति संच की लीह ॥
 तब लगि इहि विधिना लपी । आय संपत्ते दीह ॥२८॥
 मुनि सहाब गह गह हंस्यौ । बे बे भट्ट सुभट्ट ॥
 अपिहीन मति हीन भौ । कहा मंगै मति नट्ट ॥२९॥
 सब बिधि घटी नरिंद की । हम जाचक नह पीर ॥
 बचन परै सिर कट्टि दै । ते पित्री कुल धीर ॥३०॥
 तब चिंतिय साहाब मन । हंसि बुल्यौ सम चंद ॥
 जाय मंगि सम राज सौ । हम दिष्हि आनंद ॥३१॥
 तब गोरी हुज्जाब प्रति । कहै सुकवि लै जाहु ॥
 अरस परस विन दूरि तै । लै आसीस कहाउ ॥३२॥
 अग्या मन्नि हुजाब पहु । लै चल्लिय कविसथ्य ॥
 प्रथम राज पासह गयौ । तब रुक्क्यौ दह हथ्य ॥३३॥

॥ पद्धरी ॥

तब गयौ चंद नृप तथ्य थाह । जहां मित्र बयटो दिट्ट चाह ॥
दस हथ्य रषि दिनी असीस । सिर नयौ नहीं मन करिय रीस ॥३४॥

॥ दूहा ॥

चष्पहीन द्रुब्बल नृपति । दस बंभन रहै पास ॥
रोस अगनि तन प्रज्जरै । चिन्ता अतिहि उदास ॥३५॥

॥ कबित्त ॥

निमिल जीय वर सिध । दई तन दुष्ट भाव करि ॥
रोस अगनि प्रजरंत । जाय आकित अगि भर ॥
भौकित तत्त निकाम । वीर तन छीन सु पंजर ॥
अरि तित्तै चिंत्यौ सुकन्न । संभर्यौ चंद सुर ॥ •
घतसिंचि वीर पावकक भर । रीस रवत तन प्रज्जर्यौ ॥
कहि भट्ट वीर विरदावली । देत रज राज संभर्यौ ॥३६॥

॥ पद्धरी ॥

पहिचानि चंद सिर धुन्यौ राय । संगह सरन्न बुल्यौ जुवाय ॥३७॥

॥ दूहा ॥

सुनि कवित्त चलि चित्त किय । अदभुत भट्ट सरीर ॥
मोहि उलंघ्यौ जानि कै । चितत प्रबुधुन धीर ॥३८॥
नेह नीर रुकि कंठ कवि । नैन भलभल पानि ॥
बिन बोलत बोल्यौ नृपति । चंद चिति बर बानि ॥३९॥
दै दान जानि संभरि धनी । उहि गडुहि तुहि जलहि हवि ॥
दित अदित हंस दोउ उड़हि चलि । इह उपर कह करहि कवि ॥४०॥
बे अपिन हीनौ सु हों । तू चव अपि न चूक ॥
असुर बधों किम धिन सुरह । उर सुर बध्यौ उलूक ॥४१॥
आनंदे प्रथिराज जिय । बंध कियौ कवि सथ्य ॥
हनौ साहि घरियार सौ । उभै इष्प मिलि हथ्य ॥४२॥
कवि बुभभवि प्रथिराज कौ । गह्यौ धाय हुज्जाब ॥
सबै रीति किहि राज कूं । जुगति सुवथ्य जवाब ॥४३॥

॥ कबित्त ॥

तब सु चंद बरदाय । साहि अगो कर जोरे ॥
 कपन गंठि जिमि साहि । राज गंठि न अब छौरे ॥
 नट नकार नहि करहि । जांउ जिहि आस छंडि तब ॥
 अदभुत रस असमान । जाइ मुक्क्यौ न घनं अब ॥
 छंड्यौ सुलोभ जिय जंम कह । और अतिव अंतर रहै ॥
 फुरमान साहि सत्तहि बंधौ । बिन फुरमान न सर गहै ॥४४॥

॥ दूहा ॥

जो फुरमानत अप्प सुष । दै तिह बेर हमीर ॥
 घर घरियारन वज्जिहै । सर सौ सद गँभीर ॥४५॥

॥ कबित्त ॥

मंगि साहि घरियार । दिसित मंडे उत्तर दिसि ॥
 सौ क्रम नृपति घरीव । क्रम्म सत अद्ध साहि लिस ॥
 सिंधु, राग सहनाइ । पंच सदावर बहं ॥
 मेघ ग्रज्ज आकूत । बीर नीसानति नहं ॥
 प्रजापत्ति पां पुरसान पां । चाव दिसा त्रिप बिटियौ ॥
 चहुआन कलातंक जगतपै । किहि लण्यौ वर मिट्यौ ॥४६॥

॥ पद्धरी ॥

प्रथिराज आनि मधि रंगभोम । साहाब उंच गहकंत व्योम ॥
 घरियार घात बंधे समुप्प । पठई कमान साहाब पुप्प ॥४७॥

॥ कबित्त ॥

प्रथम राज कम्मान । आनि दिन्ही हुज्जाबं ॥
 गहिय राज चहुआन । तानि भंजी तर आबं ॥
 अवर आनि कम्मान । सोन बलराज समानं ॥
 इम भंजिय दइ पंच । अतिहि काठिन्य कमानं ॥
 उच्यौ पान मीरान इम । ह्यौ तात हम जेन रन ॥
 अचछै कमान हम ग्रह गरुअ । सोइ समप्यौ साहि इन ॥४८॥

॥ दूहा ॥

चवै चंद बरदाइ इम । सुनि मीरान सुरतान ॥
 दै कमान चौहान कौ । साहि दियै कछु दान ॥४९॥

॥ पद्धरी ॥

संगहे पान कम्मान राज । उम्भरे अंग अंतर बिराज ॥
 आलिंग बुंभि उर चंपि अप्प । बद्धेव तेज तामंस दप्प ॥५०॥
 कर धरे स धनु आनंद चित्त । बिछुर्यै मिल्यौ चिरकाल मित्त ॥
 कम्मान राज मिलि तेज ताय । अरि मंभि बिंढि मिलि मनु सहाय ॥५१॥
 उच्चर्यौ राज सम चंद ताम । मंगहु सु बान मम करि बिराम ॥
 बरदाय साहि अरदास कीन । न्रप देहु बान कौतिग चिन्ह ॥५२॥
 तब साहि ताम बच्च्यौ अभीर । निसुरत्ति देहु तरकस्स तीर ॥
 निसुरत्ति आनि दिय साहि हथ । तरकस्स तीर गोरी गुरथ ॥५३॥

॥ कवित्त ॥

ग्रहिय तीर गोरीस । कीन बिन इच्छ अप्प कर ॥
 काल अंत पल प्रेम । बुद्धि भगिय समोह भर ॥
 दिपि नंध्यौ दिल्लीस । धरिय सज्जै सु सीस कवि ॥
 कर दीनौ चहुआन । प्रान बद्ध्यौ सुईस तब ॥
 तामंसरज्ज तन ताम तन । घन बीरत्त उभार भर ॥
 सुरतान प्रान कारन प्रलय । जनु जम सज्ज्यौ दंड कर ॥५४॥
 भयौ एक फुरमान । बान जोगिनिपुर संध्यौ ॥
 सोइ सबद अरु बान । अग्र अविचल करि बंध्यौ ॥
 भयौ बियौ फुरमान । तानि रण्यौ श्रवनंतरि ॥
 तियौ भयौ अनभयौ । पर्यौ पतिसाहि धरंवरि ॥
 लै दसन रसन तालुअ सवन । सीस फट्टि दह दिसि गवन ॥
 सुरतान पर्यौ पां पुक्करै । भयौ चंद राजन मरन ॥५५॥
 मरन चंद बरदाइ । राज पुनि सुनिग साहि हनि ॥
 पुहपंजलि असमान । सीस छोड़ी सुदेव तनि ॥
 मेछ अवद्धित धरनि । धरनि सब तीय सोह सिग ॥
 तिनहि तिनह संजोति । जोति जोतिहि संपातिग ॥
 रासौ अलंभ नव रस सरस । चंद छंद किय अमिय सम ॥
 शृङ्गार बीर करुन विभछ । भय अद्भुत हसंत सम ॥५६॥

परिशिष्ट (क)
पृथ्वीराज रासो का परिचय

रासो काव्य की परंपरा

पृथ्वीराज रासो^१ के पीछे रासो-काव्यों की विशाल परंपरा है। इधर की खोजों में अपभ्रंश, गुजराती, डिगल तथा पिंगल भाषाओं के अनेक रास और रासो काव्यों का पता चला है। इनमें से कुछ तो पुस्तकाकार प्रकाशित हो चुके हैं और शेष का विस्तृत परिचय शोध-पत्रिकाओं ने कराया है। इस नवीन सामग्री के अध्ययन से 'रासो' शब्द के अर्थ संबंधी उन सभी अनुमानों का समाधान मिल जाता है जिन्हें यथेष्ट सामग्री के अभाव में पूर्ववर्ती पंडितों ने समय-समय पर प्रस्तुत किया था।^२ जैसा कि डा० दशरथ शर्मा ने ठोस प्रमाणों और युक्तियों के द्वारा दिखलाया है, 'रासो' मूलतः गान-युक्त नृत्य-विशेष से क्रमशः विकसित होते होते उपरूपक और फिर उपरूपक से वीर रस के पद्यात्मक प्रबंधों में परिणत हो गया।^३

गीत-नृत्य के लिये रास का प्रयोग श्रीमद्भागवत में तो हुआ ही है, आज भी उत्तर भारत में राधा-कृष्ण की गानमय लीलाओं का अभिनय करनेवाली रास-मंडलियाँ प्रचलित हैं। भागवत ने महारास में नृत्य के साथ गीत के संयोग का स्पष्ट उल्लेख किया है—

पादन्यासैर्भुजविधुतिभिः सास्मितैर्भ्रूविलासै—
भञ्ज्यन्मध्यैश्चलकुचपटैः कुण्डलैर्गण्डलोलैः ।

^१ प्राचीन प्रतियों में प्रायः 'प्रिथीराज रासउ' नाम मिलता है।

^२ फ्रांसीसी विद्वान गार्सा द तासी ने 'राजसूय', पं० रामचन्द्र शुक्ला ने 'रसायण' (हि० सा० ६०) और म० म० हरप्रसाद शास्त्री के अनुसार (प्रिलिमिनरी रिपोर्ट ऑन द आपरेशन इन सर्च ऑव बार्डिक क्रानिकिल्स पृ० २५-२६) पं० विंध्येश्वरी प्रसाद पाठक ने 'राज यज्ञ' तथा डा० काशीप्रसाद जायसवाल ने 'रहस्य' शब्द से 'रासो' को व्युत्पन्न बताया है। कविराज श्यामलदान जी भी 'रहस्य' के ही पक्ष में थे; इसकी साक्षी है उनकी पुस्तिका 'पृथ्वीराज रहस्य की नवीनता'।

^३ रासो के अर्थ का क्रमिक विकास : साहित्य सन्देश, जुलाई १९५१ ई०

स्विद्यन्मुख्यः कबररशनाग्रन्थयः कृष्णवध्वो

गायन्यस्तं तडित इव ता मेघचक्रे विरेजुः ॥ १०।३३।

और उसमें ध्रुपद आदि अनेक रागों का प्रयोग होता था इसकी पुष्टि आगे आनेवाले छंदों में 'तदेव ध्रुवमुन्निये' आदि से हो जाती है। १२ वीं सदी विक्रमीय के जैन ग्रंथ^१ 'लगुडरास' और 'तालारास' के प्रचलन की सूचना देते हैं—

लउडारसु जहि पुरिसु वि दितिउ वारियइ । छं० १६, चर्चरी

तालारासु वि दिति न रयणिहि

दिवसि वि लउडारसु सहूँ पुरिसिहि ॥ छं० ३६, उपदेशरसायन रास

इनसे पता चलता है कि ये गीतनृत्य शृंगार-रसपरक थे। इनमें अभिनेय गुण देखकर ही संभवतः तत्कालीन आचार्यों ने इन्हें 'पाठ्य नाटक' से भिन्न 'गेयनाट्य' की श्रेणी में सम्मिलित कर लिया था। हेमचन्द्र ने अपने काव्यानुशासन (८।४) में तथा वाग्भट ने भी अपने इसी नाम के ग्रंथ के पहले ही अध्याय में डोम्बिका, भाण, प्रस्थान, शिंगक, भाणिका, प्रेरण, रामाक्रीड, हल्लोसक, श्रीगदित, गोष्ठी, रागकाव्य आदि के साथ 'रासक' नामक गेयनाट्य का उल्लेख किया है। बहुत संभव है कि इन गेयनाट्यों का गीत भाग क्रमशः स्वतंत्र श्रव्य अथवा पाठ्य काव्य हो गया हो और फिर इनके चरितनायकों के अनुरूप इनमें युद्ध वर्णन का भी समावेश हुआ हो।^२

पं० नरोत्तमदास स्वामी के अनुसार 'रास' और 'रासो' का यह अंतर अंत तक बना रहा। वे 'रास' काव्यों को मूलतः प्रेम-काव्य मानते हैं तथा 'रासो' काव्यों को वीर-काव्य। 'रास' के उदाहरण के लिए 'संनेस रास' तथा 'बीसलदेव रास' का नाम लिया जा सकता है तो 'रासो' के लिए 'पृथ्वीराज रासो' या 'करहिया कौ रायसौ'। परंतु

^१ अपभ्रंश-काव्यत्रयी : गा० ओ० सी० संख्या ३७, संपादक श्री लालचन्द्र गांधी, १९२७ ई०

^२ काव्य रूप 'रासक' की विस्तृत चर्चा के लिए देखिए 'हिन्दी साहित्य का आदिकाल' पृ० ५६—६१। ✓

इसके अपवाद स्वरूप 'भरतेश्वर बाहुबलि रास' का नाम लिया जा सकता है जो 'रास' होते हुए भी वीरकाव्य है अथवा 'उपदेश रसायन रास' जो मुख्यतः नीति काव्य है। वस्तुतः यह विभाजन केवल सुविधा के लिए स्वीकृत प्रतीत होता है। 'रास' शब्द से मूलतः संबद्ध होते हुए भी पीछे रास और रासो नाम से विविध विषय, भाव तथा रस वाले काव्य लिखे गए जिन्हें जैन कवियों ने और रूप दिया तो चारण तथा भाटों ने और। इन 'रास' तथा 'रासो' ग्रंथों के अध्ययन का महत्त्व केवल 'रासो' शब्द की व्युत्पत्ति अथवा इतिहास जानने में ही सहायक नहीं है बल्कि 'पृथ्वीराज रासो' की अनेक कथानक रूढ़ियों, काव्य रूढ़ियों, रूप-विन्यास आदि संबंधी विशेषताओं के विश्लेषण में भी उपादेय हो सकता है।

राजस्थान में रासो या रास काव्यों की परंपरा डिंगल और पिगल दोनों में मध्ययुग के आरंभ से लेकर आधुनिक युग तक प्रचलित रही और इस दौरान में ही 'पृथ्वीराज रासो' में प्रक्षेप होता रहा है। अपभ्रंश के 'संनेस रास' और 'उपदेश रसायन रास' को छोड़कर परवर्ती काल के प्रायः सभी डिंगल-पिगल रास और रासो ग्रंथ चरित काव्य हैं, और ऐतिहासिकता के साथ अनैतिहासिकता का सम्मिश्रण थोड़ा-बहुत सब में है। ईसा की १२वीं से १५वीं शताब्दी के बीच लिखे हुए रास ग्रंथों में भरतेश्वर बाहुबलि रास, जम्बुस्वामि रास, रेवतंगिरि रास, कछूली रास, गांतम रास, दशार्णभद्र रास, वस्तुपाल-तेजपाल रास, श्रेणिक रास, पेथड़ रास, समरसिध रास के नाम विशेष उल्लेखनीय हैं। इनमें भाषा तथा काव्य की दृष्टि से भरतेश्वर बाहुबलि रास बहुत महत्त्वपूर्ण है। पं० मोतीलाल मेनारिया, श्री अगरचंद नाहटा, श्री नरोत्तमदास स्वामी तथा डा० दशरथ शर्मा के विवरणों से राजस्थानी के जिन रासो काव्यों का पता चला है उनमें से अधिकांश १७वीं शताब्दी तथा उसके बाद के हैं। जैसे माधौदास चारण कृत 'राम रासो' जिसमें राम कथा का वर्णन है सं० १६१० से १६६० के बीच रचा हुआ बताया जाता है; डूंगरसी कृत 'छत्रसाल रासो' मेनारिया जी के अनुसार सं० १७१० के आस पास का काव्य है; गिरिधर चारण कृत 'संगत सिध रासो', भी इसी के आस पास का कहा जाता है। जैन साधु दौलत विजय (गृहस्थाश्रम का नाम दलपति) कृत 'खुम्माण रासो'

की भी जो दो प्रतियाँ प्राप्त हैं उनमें से एक का लिपिकाल सं० १७३३ है और दूसरी का सं० १७५६ ।

पिंगल यानी पुरानी ब्रजभाषा के प्राप्त रासो काव्यों में विजैपाल रासो [रचनाकाल: मिश्रबंधु के अनुसार सं० १३५५, नाहटा जी के अनुसार १८वीं या १९वीं शताब्दी और मेनारिया जी के अनुसार सं० १६००] जान कवि कृत कायम रासौ (सं० १६६१), कुम्भकरण कृत रतन रासो (सं० १७३२), दयाल कृत राणा रासौ (सं० १६७५), जोध-राज कृत हम्मीर रासो (सं० १७८५), गुलाब कवि कृत करहिया कौ रायसौ (सं० १९वीं सदी) के नाम उल्लेखनीय हैं । इन चरित काव्यों से भिन्न पिंगल में ही जल्ह कवि कृत बुद्धि रासौ है (मेनारिया जी के अनुसार रचनाकाल सं० १६२५)^१ जो मुख्यतः प्रेमाख्यानक काव्य है । प्राकृतपिंगलम् के हम्मीर संबंधी छंद का यदि किसी 'हम्मीर रासो' के ही हैं तो उसे भी इसी परंपरा के अंतर्गत समझना चाहिए । 'रासो, नाम से मिलने वाले ये काव्य प्रायः बहुत छोटे-छोटे हैं, केवल कुछ एक की छंद संख्या एक हजार के आस पास है अन्यथा अधिकांश सौ के आस पास या उससे भी कम छंदों में समाप्त हो जाते हैं । काव्य-सौष्ठव की दृष्टि से इनमें से कोई ग्रंथ पृथ्वीराज रासो से तुलनीय नहीं हो सकता । इनका महत्त्व केवल पृथ्वीराज रासो के परिदृश्य को स्पष्ट करने में है ।

पृथ्वीराज रासो की प्रतियाँ तथा रूपान्तर^२

अब तक पृथ्वीराज रासो की जितनी हस्तलिखित प्रतियाँ प्राप्त हुई हैं, प्रायः वे चार प्रकार की हैं । इसीलिए विद्वानों ने आकार के अनुसार उनका वर्गीकरण बृहद्, मध्यम, लघु और लघुतम चार प्रकार

^१ राजस्थान में हिंदी के हस्तलिखित ग्रंथों की खोज (प्रथम भाग)
पृ० ७६-७७

^२ विशेष विवरण के लिए देखिए श्री अग्रचंद नाहटा लिखित 'पृथ्वी-राज रासो और उसकी हस्तलिखित प्रतियाँ' निबंध : 'राजस्थानी' सं० १ तथा नरोत्तमदास स्वामी लिखित 'पृथ्वीराज रासो' शीर्षक निबंध-राजस्थान भारती भाग १, अंक १ सन् १९४६ ई० ।

के रूपान्तरों में किया है। हस्तलिखित प्रतियों के विवरणों से पता चला है कि लघुतम रूपान्तर की दो, लघु रूपान्तर की पाँच, मध्यम रूपान्तर की ग्यारह तथा बृहद् रूपान्तर की तैंतीस प्रतियाँ उपलब्ध हैं। श्री नानूराम भट्ट और मुनि कान्तिसागर की प्रतियाँ किसी ने देखी नहीं है इसलिए कहना कठिन है कि वे किस रूपान्तर की हैं। वैसे तो ये प्रतियाँ उत्तर भारत के अनेक संग्रहालयों में बिखरी पड़ी हैं परंतु मोटे तौर से यह कहा जा सकता है कि बृहद् रूपान्तर की प्रतियाँ प्रधानतः उदयपुर में मिली हैं, मध्यम रूपान्तर की मुख्यतः जैन भांडारों में, लघु रूपान्तर की बीकानेर तथा शेखावटी (जयपुर) में और लघुतम की एक प्रति गुजरात के धारणोज गाँव से प्राप्त हुई है किन्तु दूसरी का विस्तृत विवरण अभी प्राप्त नहीं है^१। इससे इन विभिन्न रूपान्तरों की परंपरा पर प्रकाश पड़ता है। किस रूपान्तर में कितना प्रक्षेप हुआ, उस प्रक्षेप के कारण क्या हैं और इस तरह प्रामाणिक अंश और रूपान्तर का पता लगाने में लिपि-पद्धति की ये स्थानगत परंपरायें बड़ी सहायक हो सकती हैं।

इन हस्तलिखित प्रतियों को चार रूपान्तरों में विभाजित करने का ठोस आधार है। इन्हें रूपान्तर इसलिए कहा जाता है कि सभी प्रतियों के तुलनात्मक अध्ययन से कुछ ऐसे सामान्य प्रसंग मिलते हैं जो सब में लिपिबद्ध हैं और इस तरह एक क्रम दिखाई पड़ता है। लघुतम रूपान्तर के प्रायः सभी छंद तथा कथा-प्रसंग थोड़े से हेर फेर के साथ लघु रूपान्तर में मिल जाते हैं और इसी तरह लघु के मध्यम में तथा मध्यम के बृहद् में। मोटे हिसाब से विस्तार में बृहद् रूपान्तर मध्यम का तिगुना है तथा मध्यम रूपान्तर लघु का तिगुना और लघु लघुतम का तिगुना प्रतीत होता है। बीकानेर के विद्वानों का अनुमान है कि मूल रासो लघुतम रूपान्तर है और उसी में क्रमशः प्रक्षेप होता गया है किन्तु उदयपुर के राव साहन सिंह आदि बृहद् रूपान्तर को ही मूल रासो मानते हैं और शेष रूपान्तरों को उसका संक्षेप समझते हैं।

^१ यह प्रति मुनि जिन विजय जी के पास है तथा आरंभ में खंडित है। लेखक ने इसे नाहटा जी के संग्रहालय में देखा है।

की भी जो दो प्रतियाँ प्राप्त हैं उनमें से एक का लिपिकाल स० १७२२ ई. और दूसरी का सं० १७५६ ।

पिंगल यानी पुरानी ब्रजभाषा के प्राप्त रासो काव्यों में विजैपाल रासो [रचनाकाल: मिश्रबंधु के अनुसार सं० १३५५, नाहटा जी के अनुसार १८वीं या १९वीं शताब्दी और मेनारिया जी के अनुसार सं० १६००] जान कवि कृत कायम रासौ (सं० १६६१), कुम्भकरण कृत रत्न रासो (सं० १७३२), दयाल कृत राणा रासौ (सं० १६७५), जोध-राज कृत हम्मीर रासो (सं० १७८५), गुलाब कवि कृत करहिया कौ रायसौ (सं० १९वीं सदी) के नाम उल्लेखनीय हैं । इन चरित काव्यों से भिन्न पिंगल में ही जल्ह कवि कृत बुद्धि रासौ है (मेनारिया जी के अनुसार रचनाकाल सं० १६२५)^१ जो मुख्यतः प्रेमाख्यानक काव्य है । प्राकृतपिंगलम के हम्मीर संबंधी छंद का यदि किसी 'हम्मीर रासो' के ही हैं तो उसे भी इसी परंपरा के अंतर्गत समझना चाहिए । 'रासो, नाम से मिलने वाले ये काव्य प्रायः बहुत छोटे-छोटे हैं, केवल कुछ एक की छंद संख्या एक हजार के आस पास है अन्यथा अधिकांश सौ के आस पास या उससे भी कम छंदों में समाप्त हो जाते हैं । काव्य-सौष्ठव की दृष्टि से इनमें से कोई ग्रंथ पृथ्वीराज रासो से तुलनीय नहीं हो सकता । इनका महत्त्व केवल पृथ्वीराज रासो के परिदृश्य को स्पष्ट करने में हैं ।

पृथ्वीराज रासो की प्रतियाँ तथा रूपान्तर^२

अब तक पृथ्वीराज रासो की जितनी हस्तलिखित प्रतियाँ प्राप्त हुई हैं, प्रायः वे चार प्रकार की हैं । इसीलिए विद्वानों ने आकार के अनुसार उनका वर्गीकरण बृहद्, मध्यम, लघु और लघुतम चार प्रकार

^१ राजस्थान में हिंदी के हस्तलिखित ग्रंथों की खोज (प्रथम भाग) पृ० ७६-७७

^२ विशेष विवरण के लिए देखिए श्री अग्रचंद नाहटा लिखित 'पृथ्वी-राज रासो और उसकी हस्तलिखित प्रतियाँ' निबंध : 'राजस्थानी' सं० १ तथा नरोत्तमदास स्वामी लिखित 'पृथ्वीराज रासो' शीर्षक निबंध-राजस्थान भारती भाग १, अंक १ सन् १९४६ ई० ।

के रूपान्तरों में किया है। हस्तलिखित प्रतियों के विवरणों से पता चला है कि लघुतम रूपान्तर की दो, लघु रूपान्तर की पाँच, मध्यम रूपान्तर की ग्यारह तथा बृहद् रूपान्तर की तैंतीस प्रतियाँ उपलब्ध हैं। श्री नानूराम भट्ट और मुनि कान्तिसागर की प्रतियाँ किसी ने देखी नहीं है इसलिए कहना कठिन है कि वे किस रूपान्तर की हैं। वैसे तो ये प्रतियाँ उत्तर भारत के अनेक संग्रहालयों में बिखरी पड़ी हैं परंतु मोटे तौर से यह कहा जा सकता है कि बृहद् रूपान्तर की प्रतियाँ प्रधानतः उदयपुर में मिली हैं, मध्यम रूपान्तर की मुख्यतः जैन भांडारों में, लघु रूपान्तर की बीकानेर तथा शेखावटी (जयपुर) में और लघुतम की एक प्रति गुजरात के धारणोज गाँव से प्राप्त हुई है किन्तु दूसरी का विस्तृत विवरण अभी प्राप्त नहीं है^१। इससे इन विभिन्न रूपान्तरों की परंपरा पर प्रकाश पड़ता है। किस रूपान्तर में कितना प्रक्षेप हुआ, उस प्रक्षेप के कारण क्या हैं और इस तरह प्रामाणिक अंश और रूपान्तर का पता लगाने में लिपि-पद्धति की ये स्थानगत परंपरायें बड़ी सहायक हो सकती हैं।

इन हस्तलिखित प्रतियों को चार रूपान्तरों में विभाजित करने का ठोस आधार है। इन्हें रूपान्तर इसलिए कहा जाता है कि सभी प्रतियों के तुलनात्मक अध्ययन से कुछ ऐसे सामान्य प्रसंग मिलते हैं जो सब में लिपिबद्ध हैं और इस तरह एक क्रम दिखाई पड़ता है। लघुतम रूपान्तर के प्रायः सभी छंद तथा कथा-प्रसंग थोड़े से हेर फेर के साथ लघु रूपान्तर में मिल जाते हैं और इसी तरह लघु के मध्यम में तथा मध्यम के बृहद् में। मोटे हिसाब से विस्तार में बृहद् रूपान्तर मध्यम का तिगुना है तथा मध्यम रूपान्तर लघु का तिगुना और लघु लघुतम का तिगुना प्रतीत होता है। बीकानेर के विद्वानों का अनुमान है कि मूल रासो लघुतम रूपान्तर है और उसी में क्रमशः प्रक्षेप होता गया है किन्तु उदयपुर के राव मोहन सिंह आदि बृहद् रूपान्तर को ही मूल रासो मानते हैं और शेष रूपान्तरों का उसका संक्षेप समझते हैं।

^१ यह प्रति मुनि जिन विजय जी के पास है तथा आरंभ में खंडित है। लेखक ने इसे नाहटा जी के संग्रहालय में देखा है।

काशी नागरी प्रचारिणी सभा से पृथ्वीराज रासो का जो मुद्रित संस्करण निकला है वह बृहद् रूपान्तर की ही प्रतियों पर आधारित है और बंगाल की रायल एशियाटिक सोसाइटी से उसका जितना अंश प्रकाशित हुआ है वह भी बृहद् रूपान्तर के ही अनुकूल है। ना० प्र० सभा ने अपनी आधार-भूत प्रतियों का लिपिकाल सं० १६४० या १६४२ बताया है परंतु आगे चलकर पता चला कि उसे भ्रम से १६४० या ४२ पढ़ लिया गया था। नाहटा जी के अनुसार उसे सं० १७४० होना चाहिए लेकिन मेनारिया जी उस प्रति को सं० १८७८ की बतलाते हैं। सभा द्वारा मुद्रित प्रति में कुल ६८ प्रस्ताव हैं, परिशिष्ट रूप में छपा हुआ ६६ वाँ समय 'महोवा समय' बृहद् रूपान्तर की किसी प्राचीन प्रति में नहीं मिलता। बहुत संभव है, यह कोई स्वतंत्र ग्रंथ रहा हो। उदयपुर में इस बृहद् रूपान्तर की प्रामाणिक प्रति महाराणा अमर सिंह (द्वितीय) वाली वर्तमान है जिसका लिपिकाल माघ कृष्ण ६ सोमवार सं० १७६० वि० है।

रासो के लघुतम रूपान्तर की जो पूर्ण प्रति प्राप्त हुई है उसका लिपिकाल आषाढ़ शुक्ल पंचमी सं० १६६७ वि० है। इसकी पुष्पिका में दिन का उल्लेख नहीं है। यह प्रति यदि प्रामाणिक है तो निश्चय ही पृथ्वीराज रासो की प्राप्त प्रतियों में सबसे प्राचीन है। बीकानेर से श्री नरोत्तमदास स्वामी इसका संपादन करके शीघ्र ही प्रकाशित करवाने जा रहे हैं।

पृथ्वीराज रासो की प्रामाणिकता

जब से^१ बंगाल की रायल एशियाटिक सोसायटी ने पृथ्वीराज रासो का प्रकाशन [सन् १८८३ ई०] आरंभ किया, उसके थोड़े दिन बाद से ही उसकी प्रामाणिकता को लेकर विवाद आरंभ हो गया। डा० बूलर ने इस विवाद को आरंभ किया और उनकी मुख्य आपत्ति यही थी कि यह ग्रंथ अनैतिहासिक है। डा० बूलर इतिहास के विद्वान थे और उनके लिए किसी काव्य-ग्रंथ की ऐतिहासिक उपयोगिता ही सबसे बड़ी थी। पृथ्वीराज रासो उनकी यह आवश्यकता पूरी करता न दिखा, इसलिए उन्होंने उस अनावश्यक ग्रंथ का प्रकाशन बंद करवा दिया। काशी नागरी प्रचारिणी सभा ने उसका पूर्ण रूप प्रकाशित कर विचार करने के लिए सामग्री प्रस्तुत कर दी। कुछ तो इसके संपादकों ने इसकी

ऐतिहासिकता का पंखा पकड़ा और कुछ उस युग में ऐतिहासिक दृष्टि से ही साहित्य की सागरी के अध्ययन का जोर था, पृथ्वीराज रासो की ऐतिहासिक चीर फाड़ चल पड़ी। अनेक दशकों तक यही चर्चा रही। उसे अप्रामाणिक ही नहीं जाली तक कहा गया। इधर दस बारह वर्षों से जब पृथ्वीराज रासो के अन्य रूपान्तर हुए हैं तो रासो के प्रामाणिकता-संबंधी वाद-विवाद ने नया मोड़ लिया है। जब तक उसका एक रूप प्राप्त था, केवल उसी की घटनाओं की ऐतिहासिक सचाई परखी जाती थी, लेकिन इन नए रूपों अथवा रूपान्तरों ने यह सवाल उठा दिया है कि पृथ्वीराज रासो का कौन सा रूप प्रामाणिक है।

अस्तु पृथ्वीराज रासो की प्रामाणिकता की समस्या में प्रवेश करने से पूर्व यह स्पष्ट कर लेना चाहिए कि प्रामाणिकता के नाम पर हम चाहते क्या हैं ?

मोटे रूप में प्रामाणिकता के अंतर्गत निम्नलिखित प्रश्न उठते हैं—

१. पृथ्वीराज रासो का मूल रूप क्या है ?
२. मूल पृथ्वीराज रासो का रचनाकाल क्या है ?
३. क्या इसके मूल अंश का रचयिता चंदवरदायी है ?
४. क्या वह चंद वरदायी इतिहासप्रसिद्ध पृथ्वीराज चौहान का समकालीन है ?

पृथ्वीराज रासो का मूल रूप

चारों रूपान्तरों की प्राप्त प्रतियों के तुलनात्मक अध्ययन से जो प्रसंग सामान्य रूप से मिलते हैं वे इस प्रकार हैं:

- | | |
|-----------------------|-------------------|
| १. आदि पर्व | ६. कैमास वध |
| २. दिल्ली किल्ली कथा | ७. पट्टरितु वर्णन |
| ३. अनंगपाल दिल्ली दान | ८. कनवज कथा |
| ४. पंग यज्ञ विध्वंस | ९. बड़ी लड़ाई |
| ५. संयोगिता नेम आचरण | १०. बान बेध |

इन सामान्य कथा-प्रसंगों के वर्णन विस्तार को लेकर सभी रूपान्तरों में काफी अंतर है। बड़े रूपान्तरों में यही प्रसंग विस्तृत ढंग से अनेक छंदों में वर्णित हैं जब कि छोटे रूपान्तरों में अपेक्षाकृत वे अल्पविस्तर हैं। इस दृष्टि से लघुतम रूपान्तर में स्वभावतः ही ये

प्रसंग सर्वाधिक संक्षिप्त हैं। कथा प्रसंगों की दृष्टि से लघु और लघु-तम रूपान्तर में बड़ी समानता है। इन दोनों रूपान्तरों में प्रायः वर्णन-विस्तार संबंधी अंतर है। भाषा में भी विशेष असमानता नहीं है।

दूसरी ओर मध्यम और बृहद् रूपान्तरों ने जो विराट रूप ग्रहण कर लिया है वह अनेक नये इतिवृत्तों, कथाओं तथा प्रसंगों की सृष्टि द्वारा। बृहद् रूपान्तर के लगभग ५४ तथा मध्यम रूपान्तर के १६ खंडों की कथायें छोटे रूपान्तरों से अधिक हैं और ध्यान देने की बात यह है कि इनकी पुष्टि इतिहास से नहीं होती! इन प्रसंगों की वृद्धि भी मनोरंजक ढंग से हुई है। कहीं होली और दिवाली की कथा छेड़ दी गई हैं, तो कहीं विवाहों की संख्या बढ़ा दी गई है। जहाँ छोटे रूपान्तरों में पृथ्वीराज दो विवाह करता है, बृहद् तक जाते जाते पूरे तेरह व्याह कर डालता है। इसी तरह युद्धों की संख्या भी बढ़ाई गई है। छोटे रूपान्तरों तक राजा केवल ५ युद्ध करता है तो मध्यम रूपान्तर तक ४३ और बृहद् तक ५५ युद्धों का गौरव प्राप्त करता है। शाहाबुद्दीन गोरी को पकड़ने तथा हराने का लेकर भी प्रसंगों की उद्भावना हुई है। बारी बारी से हर सामंत को शाहाबुद्दीन गोरी के पकड़ने का अवसर दिया जाता है। ऐसे कल्पनाशील तथा प्रसंग-रचना-पटु जाति की मौखिक परंपरा में प्रवाहित काव्य के मूल रूप का पता लगाना कितना कठिन कार्य है, इसे सहज ही समझा जा सकता है।

ऊपर सभी रूपान्तरों में समान रूप से पाए जाने वाले जिन प्रसंगों की सूची दी गई है वह भी कहाँ तक मूल पृथ्वीराज रासो है, नहीं कहा जा सकता। यदि इतिहास-समर्थित घटनाओं के ही आधार पर 'मूल पृथ्वीराज रासो' का निर्णय करें तो एक कैमासवध को छोड़कर और कोई घटना मूल पृथ्वीराज रासो की नहीं हो सकती। यह 'कैमासवध' भी केवल 'पृथ्वीराज-विजय' में पृथ्वीराज के मंत्री कदंबवास के उल्लेख तथा 'पुरातन प्रबंध संग्रह' में प्राप्त कैमासवध-संबंधी छप्पयों से ही समर्थित है।

इसलिये लघुतम रूपान्तर को 'मूल पृथ्वीराज रासो' तो नहीं, लेकिन हस्तलिखित प्रतियों में प्राचीनतम रूप अवश्य कहा जा सकता है। इसकी पुष्टि पुष्पिका में दिए हुए लिपिकाल से तो होती ही है, भाषाशास्त्रीय दृष्टि से भी होती है। बड़े रूपान्तरों के प्रक्षिप्त कथा-प्रसंगों

की भाषा निश्चय ही परवर्ती है और इस तरह लघुतम रूपान्तर के पद-प्रयोग अपेक्षाकृत प्राचीन व्रजभाषा के प्रतीत होते हैं।

कुछ विद्वानों ने 'पुरातन प्रबंध संग्रह' के पृथ्वीराज संबंधी अपभ्रंश छप्पयों के आधार पर अनुमान किया है कि मूल पृथ्वीराज रासो अपभ्रंश काव्य था^१। इस मत के विरुद्ध यह भी तो कहा जा सकता है कि पुरातन प्रबंध संग्रह में मूल पृथ्वीराज रासो के छंदों का अपभ्रंश रूपान्तर सुरक्षित है। ठोस प्रमाणों के अभाव में इस मत को मानने में अनेक बाधाएँ हैं।

इस प्रकार यदि पृथ्वीराज रासो का रचयिता चंद पृथ्वीराज का समकालीन था तो प्राप्त प्रतियों में से कोई भी उसकी कृति नहीं है।

पृथ्वीराज रासो का रचनाकाल

ग्रंथ में रचनाकाल का उल्लेख न होने से उसके रचयिता के जीवन-काल के आधार पर ही उसका रचनाकाल निश्चित किया जा सकता है। अधिक से अधिक मौखिक परंपरा से आते हुए पृथ्वीराज रासो के लिपिकाल अथवा संग्रहकाल का ही निश्चय संभव है। सर्वप्रथम 'पृथ्वीराज रासो' का उल्लेख सं० १७०७ में दत्तपति मिश्र रचित 'जसवंत उद्योत' में मिलता है। सं० १६३५ में चौहान वंशी बूंदीनरेश सुरजन तथा उसके पुत्र भोज के आश्रित कवि चन्द्रशेखर रचित 'सुरजन चरित' नामक संस्कृत काव्य में जहाँ पृथ्वीराज के लिए पूरा सर्ग दिया गया है और पृथ्वीराज के साथ चंद का भी उल्लेख है परंतु चंद को रासोकार नहीं कहा गया है। उससे स्पष्ट है कि सं० १६३५ तक स्वयं पृथ्वीराज के वंशजों को भी पृथ्वीराज रासो का पता न था। श्री मोहन लाल विष्णु पंड्या ने गंगा भाट-रचित जिस 'चंद छंद वरनन को महिमा' ग्रंथ की प्रति का पता दिया है और उसके अनुसार सिद्ध करना चाहा है कि सं० १६२७ तक पृथ्वीराज 'रासो' का उल्लेख मिलता है, वह 'खोज रिपोर्ट' के ही अनुसार फुलस्केप कागज पर लिखी हुई बिल्कुल

^१ इस मत की विस्तृत जानकारी के लिए देखिये 'राजस्थान भारती' भाग १ अंक १ में डा० दशरथ शर्मा और मीनाराम रंगा का निबंध 'द ऑरिजिनल पृथ्वीराज रासो, ऐन अपभ्रंश वर्क'।

आधुनिक रचना है। इस प्रकार अकबर के शासन काल से पहले पृथ्वीराज रासो के अस्तित्व का पता नहीं चलता। जैसा कि श्री नरोत्तम दास स्वामी का अनुमान है, अकबर की अधीनता स्वीकार करने समय मेवाड़ के राजघराने ने अपना गौरव बढ़ाने के लिए पृथ्वीराज चौहान से अपना संबंध स्थापित किया और इसके लिए पृथ्वीराज की पृथा नामक बहिन की कल्पना की। अंत में उन्होंने इन सबको काव्य रूप देकर परंपरागत 'पृथ्वीराज रासो' में मिलाकर संपूर्ण काव्य को लिपिबद्ध रूप में संग्रह करवाया। रासो-संग्रह का यह क्रम अनेक पीढ़ियों तक चला जिसकी चरम परिणति अमर सिंह द्वितीय के राज्य काल (सं० १७५५-६७ वि०) में हुई।

पृथ्वीराज रासो का रचयिता चंद

सुदृढ़ अनुश्रुति के बावजूद अकबर के शासन काल से प्राचीन कोई ठोस प्रमाण नहीं मिलता जिसमें पृथ्वीराज रासो के रचयिता के रूप में चंद कवि का उल्लेख हो। पुरातन प्रबंध संग्रह (लिपिकाल सं० १५२८) के पृथ्वीराज प्रबंध से अवश्य ही चंद बलहिय कृत पृथ्वीराज संबंधी दो छंदों का पता चलता है^१ किन्तु इनके आधार पर यह कहना कठिन है कि ये किसी प्रबंध काव्य के अंश हैं। इन प्रबंधों के रचना-काल का भी ठीक-ठीक पता नहीं है परंतु सं० १२६० से १५२८ के बीच में ही कभी न कभी इनकी रचना हुई होगी। फिर भी इनसे इतना तो निश्चित है कि चंद बलहिय नामक एक कवि अवश्य था जिसने पृथ्वीराज के विषय में कुछ काव्य-रचना की थी। वह प्रबंध काव्य था या नहीं और प्रबंध काव्य में भी 'रासो' नाम से अभिहित किया गया था या नहीं इसके लिए कोई ठोस प्रमाण भले न हो परंतु चंद और उसकी पृथ्वीराज-विषयक काव्य-रचना असंदिग्ध है।

विद्वानों ने चंद के वास्तविक नाम को लेकर भी काफी उहापोह प्रकट किया है। कुछ लोगों ने उसके चन्द्रक और पृथ्वीभट्ट नामों की भी

^१ गं जाणउं चंद बलहियु किं नावे छुट्टइ इह फलह ॥१

जंपह चंद बलहियु मज्झु परमक्खर सुज्झइ ॥२

कल्पना की है। किन्तु जिन्होंने चंद बलहिय नाम को स्वीकार कर लिया है उन्होंने भी बलहिय को शुद्ध करके 'वरदायी' कर दिया है जिसका अर्थ उनके अनुसार, 'वर देने वाला' अथवा 'जिसे दुर्गा ने वर दिया हो' होता है। वस्तुतः वह 'बलीवर्द' का ही तद्भव रूप है जो 'नर वृषभ' की तरह आदरार्थे विरुद् की तरह जोड़ा जाता है। इसकी पुष्टि उस प्रसंग से भी होती है जिसमें जयचन्द चंद के 'बलह' विरुद् पर व्यंग करते हुए पूछता है—'क्यों दूबरो वरद ?'

चंद और पृथ्वीराज

पृथ्वीराज रासो के बृहद् और मध्यम रूपान्तरों के अनुसार चंद पृथ्वीराज के जन्म-मरण का अनन्य साथी था^१। दोनों का जन्म एक ही दिन हुआ था और मरण भी एक ही दिन। गजनी में एक दूसरे को कटार मार कर मर जाने का उल्लेख रासो के सभी रूपान्तर एक स्वर से करते हैं। इतिहास से इन घटनाओं की पुष्टि नहीं होती। दो व्यक्तियों की जन्म-कुंडलियों का इस तरह मिलना कोई आश्चर्य की बात नहीं है परंतु पृथ्वीराज और चंद का संबंध भी ऐसा ही था इसकी पुष्टि रासो के अतिरिक्त किसी अन्य प्रमाण से नहीं होती। इस हिसाब-किताब का यही मतलब है कि पृथ्वीराज से चंद का बहुत घनिष्ठ संबंध था और राजा उसे प्रायः महत्त्वपूर्ण अवसरों पर साथ रखता था।

इन सब बातों से यही निष्कर्ष निकलता है कि पृथ्वीराज के दरबारी कवि के रूप में चंद बलहिय का होना असंभव नहीं है और उसकी पृथ्वीराज विषयक काव्य रचना के उदाहरण प्राप्त हैं परंतु पृथ्वीराज रासो नाम से प्राप्त परवर्ती रूपान्तरों में कितना अंश चंद कृत है अथवा चंद से उसका क्या संबंध है इसका निर्णय करना इस समय असंभव है। संभावना यही है कि चंद की पृथ्वीराज विषयक

^१ इक थान मरन जनमह सु इक, चलहि किति ससि लगि रवि। ✓

(ना० प्र० सभा संस्करण, ७६० वाँ पद्य)

इक्क दीह उप्पन्न, इक्क दीहै समाय क्रम। ✓

(वही, ६२ वाँ पद्य)

कविताएँ उनके वंशजों तथा लोक-कंठों की मौखिक परंपरा द्वारा क्रमशः स्फीत होती गईं। जहाँ तक ऐतिहासिक सामग्री के आधार पर पृथ्वीराज रासो की प्रामाणिकता परखने का प्रश्न है उसके विषय में इतना ही कहना पर्याप्त होगा कि केवल अनैतिहासिक घटनाओं के समावेश से ही पृथ्वीराज रासो चंद की कृति होने के गौरव से वंचित नहीं हो सकता। 'पृथ्वीराज रासो' की प्रामाणिकता पर विचार करते समय यदि न भूलना चाहिए कि वह काव्य ग्रंथ है, इतिहास नहीं। यदि जायसी के 'पद्मावत' की अनैतिहासिक घटनाओं को लेकर इतना शोर मचाना नहीं हुआ तो कोई आवश्यक नहीं कि पृथ्वीराज रासो पर ऐसा कोप किया जाय। पृथ्वीराज रासो में कितना अंश अनैतिहासिक है इसकी चर्चा यहाँ प्रासंगिक नहीं है। इतिहास में रुचि रखने वाले लोग आभा जी, मुं० देवी प्रसाद तथा डा० दशरथ शर्मा के शोधपूर्ण प्रयत्नों से अच्छी तरह परिचित होंगे।

पृथ्वीराज रासो का काव्य-सौष्ठव

कथा-प्रवाह—पृथ्वीराज रासो रासक शैली में लिखा हुआ एक चरित काव्य है जिसका चरित नायक पृथ्वीराज चौहान है। इसके बृहद् रूप में अनेक आनुगंगिक कथा-प्रसंगों के बावजूद आधिकारिक कथा पृथ्वीराज से ही किसी न किसी प्रकार संबद्ध है। आरंभ में मंगलाचरण, पूर्ववर्ती कवियों के प्रति कृतज्ञता-ज्ञापन, आत्म नम्रता, दुर्जन-निन्दा, सज्जन-प्रशंसा तथा ग्रंथ-रचना का उद्देश्य निवेदन करने के बाद कवि ने पृथ्वीराज के जन्म और शिशु-क्रीड़ा के साथ मुख्य कथा का बीजारोपण किया है; संक्षेप में चरित नायक के विद्याभ्यास की चर्चा करते हुए कवि उसे राजकीय कर्म क्षेत्र में प्रवेश कराता है। यहाँ एक दिन उसके सामंतों में प्रमुख कन्ह गुर्जरेश भीमदेव चालुक्य के एक भाई का वध कर देता है जो भीमदेव से असंतुष्ट रहने के कारण पृथ्वीराज के ही दरबार में रहने लगा था। इस दुर्घटना का कारण केवल यही था कि कन्ह के सम्मुख उसने अपनी मूर्खों पर हाथ रख दिया था और कन्ह के लिए यह असह्य था। ज्यादाती तो कन्ह की थी ही लेकिन इसकी क्षतिपूर्ति क्या हो सकती थी। पृथ्वीराज ने कन्ह से आँखों पर पट्टी बाँधे रखने का अनुरोध किया। लेकिन भीमदेव

चालुक्य को तो इतने से शान्ति मिल नहीं सकती थी। उसने पृथ्वीराज से बैर ठान लिया। इस बैर का विस्फोट आगे चलकर सलह की पुत्री इंदुनी के विवाह के अवसर पर हुआ। भीमदेव इंदुनी की बड़ी बहिन मंदोदरी से शादी कर चुका था फिर भी उसने द्वितीय पत्नी के रूप में इंदुनी की माँग की। यह संबंध इंदुनी के पिता और भाई किसी को पसंद न था। उन्होंने पृथ्वीराज के पास विवाह का प्रस्ताव भेजा। पृथ्वीराज उस निवेदन को स्वीकार कर सदल बल चढ़ आया। उधर भीमदेव की भी सेना आ रही थी। जमकर लड़ाई हुई। पृथ्वीराज विजयी हुआ। विधिवत् पृथ्वीराज और इंदुनी का विवाह-कार्य संपन्न हुआ।

कुछ दिनों बाद पृथ्वीराज एक नट तथा हंस से शशिब्रता का गुण-श्रवण कर उस पर अनुरक्त हो गया। उधर शशिब्रता की शादी पृथ्वीराज के प्रतिद्वन्द्वी कान्यकुब्जेश्वर जयचंद्र गाहड़वाल के भतीजे से होने वाली थी परंतु उसके अल्पायु होने की भविष्यवाणी सुनकर शशिब्रता का मन उधर से उचट गया। इसी बीच हंस ने शशिब्रता से पृथ्वीराज का बखान किया। इधर भी अनुराग अंकुरित हुआ। फलतः पृथ्वीराज सदल-बल चढ़ गया और शिव-पूजन को जाती हुई शशिब्रता का हरण कर जयचंद्र की सेना कोहराता हुआ अपने राज्य में वापस लौट आया।

दिन मृगयादि में सुख से बीत ही रहे थे कि पृथ्वीराज को अपने मंत्री कैमास (कदम्बवास) की दासी-अनुरक्ति का पता चला। यह बात यशस्वी राजा के लिए इतनी अपमानजनक लगी कि उसने एक रात छिपकर मंत्री पर प्रहार किया और इस तरह उसे मार डाला। पीछे कवि चंद्र ने तनिक से अपराध पर इतना कड़ा दण्ड देने तथा ऐसे योग्य मंत्री को खो देने के लिए राजा को बुरी तरह धिक्कारा।

युद्ध और विवाहों से तो पृथ्वीराज को तृप्ति थी नहीं। थोड़े दिनों बाद उसे जयचंद्र की पुत्री संयोगिता के नेम-आचरण की सूचना मिली। क्षत्रिय राजा के लिए यह असंभव था कि संयोगिता का व्रत निष्फल जाने दे। फलतः उसने अनेक सामंतों, शुभचिंतकों तथा ज्योतिषियों के मना करने पर भी कन्नौज जाने का निश्चय किया। लेकिन नगर छोड़ने के पूर्व इस बार रनिवास से अनुमति लेना आवश्यक प्रतीत हुआ। राजा सर्वप्रथम बड़ी रानी इंदुनी के मंदिर

में गया। बसंत ऋतु थी। ऐसे समय रानी भला कब छोड़ने वाली थी। सारी ऋतु राजा वहीं बंदी रहे। वहाँ से मुक्त होने पर दूसरी रानियों के यहाँ भी जाना कर्तव्य था। शेष पाँचों रानियों ने भी क्रमशः ग्रीष्म, पावस, शरत्, हेमंत और शिशिर ऋतु में राजा को अपने-अपने यहाँ रोक रखा। अंत में जब फिर बसंत आया तो राजा ने चंद कवि की शरण ली और मुक्ति का उपाय पूछा कि कौन सी ऋतु है जिसमें स्त्री को पति नहीं रुचता। चतुर कवि ने 'ऋतु' शब्द पर दूर की उड़ान ली और राजा मुक्त हुए। फलतः चंद को साथ लेकर ससैन्य राजा कन्नौज की ओर चल पड़े। वहाँ जयचंद के दरबार में पृथ्वीराज ने छद्म रूप में चंद का सेवक बनाकर प्रवेश किया किन्तु अंत में पहचान लिए गये। जयचंद ने इस पर पहरा डलवा दिया। किंतु एक दिन पृथ्वीराज ने गंगा के किनारे स्थित संयोगिता से भेंटकर उसे घाड़े पर चढ़ा दिल्ली की राह ली। राह में अवरोध हुआ। किन्तु संयोगिता को साथ लिए शत्रु-सैन्य को काटता हुआ पृथ्वीराज निकल गया। इस युद्ध में पृथ्वीराज के कन्ह आदि अनेक महान सामंत योद्धा काम आए। थोड़े दिनों तक रुष्ट रहने के बाद जयचंद ने विवश होकर पृथ्वीराज के पास कन्या के विधिवत् व्याह के लिए पुरोहित भेजा, साथ ही पर्याप्त दहेज भी।

पट्टरानी के रूप में संयोगिता के आने पर बड़ी रानी इंछिनी के मान को धक्का लगा। इधर पृथ्वीराज भी नई रानी को ही अपने सारा समय देने लगे। सौतिया डाह स्वाभाविक था। इंछिनी ने अपने पाले हुए शुक के द्वारा राजा तक अपनी विरह-दशा की सूचना पहुँचाई। सहृदय पति पिघला। दोनों रानियों में समझौता हुआ। यह चरित नायक के सुखोपभोग की पराकाष्ठा है। यहीं से उसके दुःखद दिनों का आरंभ होता है।

राजा इधर रतिरंग में लीन था उधर शाहाबुद्दीन गोरी के हमले की खबर आई। प्रजा घबड़ा उठी। नगर सेठ तथा गुरुराम के द्वारा राजा तक सूचना पहुँचाई गई। साहसा वे नींद से जगे। संयोगिता के विरह-निवेदन के रहते उन्होंने गोरी का सामना करने के लिए प्रस्थान किया। युद्ध में राजा गोरी के हाथों पकड़े गए। इधर यह समाचार पाते ही रानियों सहित संयोगिता सती हो गई। उधर पृथ्वी-

राज गजनी ले जाया गया और वहाँ उसकी आँखें फोड़कर उसे कैदखाने में डाल दिया गया। कैद में पड़े-पड़े वह अपने विगत वैभव तथा पूर्वकृत कुकर्मों पर पश्चाताप करता रहा। कुछ दिनों बाद एक दिन कवि चंद उससे मिलने आया और उसने संकेत से गोरी को शब्दवेधी बाण द्वारा मारने की सलाह दी। दूसरी ओर चंद ने अपनी कवित्व प्रतिभा से गोरी को प्रभावित करके पृथ्वीराज के शब्दवेधी लक्ष्य के प्रदर्शन की व्यवस्था कराई। योजनानुसार पृथ्वीराज द्वारा गोरी का बध हुआ और अंत में चंद तथा पृथ्वीराज कटार से एक दूसरे को मार मरे।

संक्षेप में पृथ्वीराज रासो की यही मुख्य कथा है। इसके अतिरिक्त जो आनुषंगिक कथा अथवा कथायें हैं उनमें अधिकांश विवाह वर्णन, युद्ध वर्णन तथा अनेकानेक सामंतों द्वारा गोरी के पकड़े जाने का विस्तार है। बीच-बीच में कुछ अतिमानवीय उपाख्यानों तथा होली-दिवाली-संबंधी किंवदंतियों का भी समावेश हो गया है।

रासो की यह कथा प्रधानतः शुक्र और शुकी के संवाद द्वारा कहलाई गई है। भारतीय साहित्य के लिए यह कोई सर्वथा नया प्रयोग नहीं है। एक प्रकार से यह कथोपकथन की पौराणिक शैली है।^१

संपूर्ण कथा चंद कृत नहीं है यह तो इतने से ही स्पष्ट है कि बाण बेध प्रसंग लिखने के लिए कवि के पास समय कहाँ था ! इसके अतिरिक्त गजनी-प्रसंग के आरंभ में ही रासो स्पष्ट कर देता है कि 'पुस्तक जल्हन हत्थ दै चलि गज्जन नृप काज !' इस पर अनुमान लगाया गया है कि चंद कृत रासो संयोगिता विवाह के बाद ही समाप्त हो जाता है। जो हो, वर्तमान रासो अपने पूर्वार्द्ध और उत्तरार्द्ध दोनों रूपों में हमारे सामने है और इसीलिए अपने संपूर्ण रूप में विचारणीय भी।

कथा के मार्मिक प्रसंग तथा कवि की विशेषता—मध्ययुग के अन्य चरित काव्यों की भाँति रासो की भी कथा में कथा-बंध के उतार चढ़ाव तथा चमत्कार पूर्ण मोड़-संबंधी कोई विशेषता दृष्टिगोचर नहीं होती;

^१ विशेष विस्तार के लिए देखिए 'हिंदी साहित्य का आदि काल'

क्योंकि उस युग के प्रायः सभी चरितनायक आधुनिक उपन्यासों की भाँति व्यक्ति-विशिष्ट चरित्र न होकर इनके विपरीत वे 'टाइप' मात्र हैं। इसलिए घटनाओं की नवीनता के अभाव में प्राचीन चरित काव्यों के कथा-बंध का सौन्दर्य केवल दो बातों में देखा जाना है—या तो उसमें मार्मिक प्रसंगों की सृष्टि की गई हो अथवा कम से कम कवि ने कथा-प्रवाह में उसकी संभावना को पहचाना हो। ऐसे प्रसंगों के वर्णन में ही कवि-दृष्टि तथा कवित्व-शक्ति का पता चलता है।

सर्वप्रथम रासोकार ने माँ की कोख में पृथ्वीराज के गर्भाधान का प्रभाव परखा है और उसे इन शब्दों में काव्यात्मक रूप दिया है—

कितिक दिवस अंतरह रहिय आधान रानि उर ।

दिन दिन कला बढ़त मेघ ज्यों बढ़त भद्र धुर ॥

चन्द्र कला सित पण जेम बाढ़त दिन दिन ।

मुगधा जाबन चढ़त मिलत भरतार पिनं पिनं ॥

उदित अधान सुभ गातनह, जेम जलधि पुन्निम बढ़हि ।

हुलसंत हीय जे प्रीय त्रिय जिम सु जोति जनिता चढ़हि ॥

गर्भस्थ शिशु की निरंतर बढ़ती हुई कला तथा माँ के रूप पर पड़ने वाले उसके अन्तः प्रभाव का चित्रण यहाँ देखने योग्य है।

पर्यवेक्षण का दूसरा स्थल है शिशु-क्रीड़ा। बाल-लीला के सिद्ध कवि सूर के आगे तो सभी कवि फीके हैं फिर चंद की कहाँ गिनती ! फिर भी कुछ चित्र द्रष्टव्य हैं—

नह तलप इक्क थह पिन रहत, हुलसि हुलसि उठि उठि गिरत ।

शय्या छोड़कर ज़मीन पर लोटने की बाल-प्रकृति तथा इस उल्लास में बार-बार उठने का असफल प्रयत्न करना अत्यंत स्वाभाविक है और संभवतः सूर के यहाँ भी इसका चित्रण नहीं हुआ है। माँ या बाप की अंगुली पकड़कर चलने का वर्णन तो सूर ने भी किया है किन्तु उस पर उपमा की अनूठी उड़ान चंद के यहाँ ही देखी जा सकती है—

अंगुरिन लगि रगि चलत लाल । सर मद्धि उठत गज हंस बाल ॥

और आगे बालकों के बीच —

मिलि बाल जाल कवि रही केलि । बढि रही दूंद जनु बीज बेलि ॥

युवक पृथ्वीराज के जीवन के मधुर प्रसंगों में विवाहों का स्थान

अन्यतम है। अनेक विवाह-वृत्तान्तों के बीच कवि का मन केवल तीन-विवाहों में विशेष रमा है। ये हैं इंछिनी, शशिव्रता तथा संयोगिता-विवाह। इन विवाहों के वर्णन में कवि की सबसे बड़ी विशेषता है पुनरावृत्ति को बचा जाना। प्रायः एक प्रकार की घटनाओं के वर्णन में पुनरावृत्तियों की आशंका बनी रहती है किन्तु ऐसे ही स्थलों पर विशिष्ट कवि की पहचान होती है। हर्ष की बात है कि चंद ने इन प्रसंगों में अपनी विशिष्टता प्रमाणित कर दी ही है। तीनों विवाह तीन प्रकार से होते हैं। इंछिनी-विवाह हिंदू-विवाह प्रणाली का पूरा प्रतिनिधित्व करता है जिसमें ब्राह्मण द्वारा लग्न भोजन से लेकर बरात का सजना, अगवानी, तोरण-कलश-द्वारचार विधान, जनवासा, मण्डप-निर्माण, कन्यादान, गठबंधन, भाँवरी, गणेश-नवग्रह-कुलदेवता पूजन, गारी, शाखोच्छार, ज्योनार, दान-दहेज, विदाई आदि का सुंदर वर्णन है। शशिव्रता विवाह में ये बातें नहीं दुहराई जातीं। इसमें कवि काव्यों में वर्णित पूर्वानुराग की प्रसंगोद्भावना करके हंस और गंधर्व द्वारा दोनों पक्षों को पहले से ही परस्पर अनुरक्त बनाता है। पश्चात् पृथ्वीराज शशिव्रता का हरण करता है। संयोगिता विवाह में ये दोनों बातें नहीं होतीं। यहाँ पूर्वानुराग केवल एक ओर से आरंभ होता है। वस्तुतः संयोगिता पृथ्वीराज का स्वयंवर करती है और समय पाते ही पृथ्वीराज उसके पास जाकर सखियों के बीच विवाह कर लेता है। हरण तो यहाँ भी होता है पर विषम परिस्थिति के कारण हरण का रूप यहाँ कुछ भिन्न है।

अब इनमें से एक-एक विवाह का सौन्दर्य-अंकन देखें—

नारी की वयः संधि-शोभा कवियों के लिए सदैव आकर्षण की वस्तु रही है। इसके लिए नाना उपमाओं का जमघट लगाया गया है। रासो में इंछिनी और शशिव्रता की वयः संधि का वर्णन तुलनीय है।

इंछिनी —

बाले तन्वय मुग्ध मध्यत इमं स्वपनाय वै संधयं ।
मुग्धे मध्यम स्याम वामंति इमं मध्यान्ह छाया पगं ॥
बालप्पन तन मध्य जीवन इमं सरसी अवगी जलं ।
अंगं मद्धि सुनोरजे मल ससी सुभै सुसैसव इमं ॥

शशिव्रता —

राका अरु सूरज्ज बिन, उदै अस्त दुहुँ बेर ।

बर शशिवृत्ता सोभई, मनो शृंगार सुमेर ॥

वस्तुतः शशिव्रता का रूप और शील इच्छिनी से कहीं अधिक आकर्षक था । इसीलिए कवि ने शशिव्रता के रूप-वर्णन में अधिक ध्यान दिया है । ऊपर के उदात्त वर्णन से संतुष्ट न होकर चंद ने शशिव्रता के यौवनागम को बसंत से उपमित किया—

पत्त पुरातन ऋरिग पत्त अंकुरिय उट्ट तुछ ।

ज्यों सैसव उत्तरिय चढ़िय बैसब किसोर कुछ ॥

शीतल मंद सुगंध आइ रितिराज अचान ।

रोमराइ सँग कुछ नितंब तुच्छ सरसान ॥

बढ़ै न सीत कटि छीन हूँ लज्ज मान टंकनि फिरै ।

ढंकै न पत्त ढंकै कहै, बन बसंत मन्त जु करै ॥

प्रायः कवियों ने युवती नायिका के रूप को विभिन्न स्थितियों, तथा वातावरणों की मनोरम पटभूमि में रख कर नया-नया चित्र उतारा है । सद्यः स्नाता का चित्र भी इन्हीं में से एक है । रासो में सद्यः स्नाता इच्छिनी की यह उपमा रूढ़ियों से अलग नई सूक्ष्म प्रकट करती है—

करि मंजन अंगोछि तन, धूप वासि बहु रंग ।

मनो देह जनु नेह फुलि, हेम मोज जन गंग ॥

इसी प्रकार सौन्दर्यद्रष्टा कवि ने प्रिय के सम्मुख जाने से पूर्व डरती हुई नवबधू इच्छिनी के बाह्य रूप-वर्णन में सूक्ष्म मनोवैज्ञानिक रेखाओं को उभार कर चित्र में नई ओप ला दी है—

हलहलै लता कछु मंद वाय । नव बधू केलि भय कंप पाय ॥

उपमां उर कवी कहीय तांम । जुबन तरंग अंगि-अंगि कांम ॥

नारी-सौन्दर्य की चरम परिणति है उसकी सौभाग्य-तिलकित दशा । सौभाग्यवती इच्छिनी के नख-शिख का परिपाटी-विहित लम्बा वर्णन करने के बाद अंत में कवि उसकी मंगल मूर्ति का परिचय देता है—

जरकस घुघर घमंड जानु रवि किन्न कदल ग्रह
कुसुंभ लरे नीसार, रंग छवि छंडि हंड हर
पीत कंचुकी संचि पंडि कस अंग उपट्टिय
कंकन कर बर बरत गंध हरदीय उपट्टिय
आलोल नैन गति बचन बहु, सषिन सोभ मंडिय तनह ।
फुल्ली सु सौँ कवि चंद कहि, मनहु बीजु थरकी घनह ॥

शशिप्रता-विवाह में पूर्वराग के लिए रूप-गुण वर्णन को विस्तार देने के बाद कवि ने जिस प्रियदर्शन प्रसंग पर ध्यान केन्द्रित किया है, वह है शशिप्रता और पृथ्वीराज का प्रथम साक्षात्कार । इंछिनी-विवाह में इस प्रसंग की सृष्टि उतनी मनोरम नहीं हो सकती थी क्योंकि वहाँ पूर्वराग का अस्तित्व ही नदारद था । बहुत दिनों से जिसका गुण-श्रवण करते करते मानस-प्रतिमा निर्मित होती रहती है उसके प्रथम साक्षात्कार के समय की मानसिक स्थिति कितनी रूमानी हो सकती है इसे चंद के शब्दों में देखिये—

यों करंत दुत्तिय बियौ, कथा श्रवन सुनि मंत ।
जाकौ तें पतिवृत्त लिय, सो आयौ अलिकंत ॥
श्रवन नयन को मेल कै, भय चंचल चल चित्त ।
श्रोतानं दिष्टान अरु, मिलि पुच्छै दोइ मित्त ॥
कर्न प्रयंत कटाछ सुरंग विराजही ।
कछु पुच्छन को जाहि पै पुच्छत लाजही ॥
नैन सैन में बात जु स्रवनन सों कहै ।
काम किधों प्रथिराज भेदि करि ना लहै ॥

प्रायः दीर्घ दृश्यों के लिए कवियों ने 'कानन चारी नयन मृग नागर नरनु सिकार' जैसा चमत्कार दिखाया है परंतु 'कान तक खिचे नयनों' को देखकर उनके मधुर वार्तालाप की सुंदर उत्प्रेक्षा चंद ने ही की । विशेषता श्रवण नयन के वार्तालाप में नहीं बल्कि 'कछु पुच्छन को जाहि पै पुच्छत लाजही' में है क्योंकि श्रवण-नयन की बातचीत वास्तविक नहीं है । इस उत्प्रेक्षा का सौन्दर्य इससे भी अधिक प्रासंगिकता में है । बात यह है कि अब तक श्रवणों ने ही प्रिय का रूप-गुण सुन रखा था; नयनों को तो आज पहले-पहल देखने का अवसर मिला है ।

इसलिए नयनों का श्रवणों के पास पूछने के लिए जाना स्वाभाविक ही है कि क्या जिनके विषय में सुन रखा था वे यही हैं ? क्या ऐसा तो नहीं है कि जो मैं देख रहा हूँ वह सुने हुए रूप-गुण से कहीं अधिक है ? ये तमाम बातें तथा इससे भी अधिक 'पुच्छत लाजही' द्वारा संकेतित हैं । तुलसीदास ने तो इतना ही कहा कि 'गिरा अनयन नयन बिनु बानी' लेकिन चंद ने इस तथ्यपरक कथन में अपनी सूझ से मधुर विशेषता ला दी ।

इस प्रथम दर्शन से भी अधिक मार्मिक है प्रथम स्पर्श । सहसा पृथ्वीराज जन-समूह के बीच शशिब्रता को हाथ से पकड़कर अपनी ओर खींचता है और तुरंत चंद की फड़कती उपमा निकलती है 'मानों कि लता कंचन लहरि मत्त बीर गजराज गहि' ! पूरी पदावली जैसे स्नेह-उमंगित बाहु की तरह लहरा उठी है !

इस पर लज्जाशीला शशिब्रता की भावशबलता देखने योग्य है—

गहत बाल पिय पानि सु गुरुजन संभरे ।
लोचन मोचि सुरंग सु अंसु बहे ढरे ॥
अपमंगल जिय जानि सु नेने मुप बही ।
मनो पंजन मुप मुक्ति मरक्कत नंषही ॥

इसके बाद जब शशिब्रता को उठाकर पृथ्वीराज सीढ़ी लाँघते हुए आगे बढ़ता है तो कवि की उत्प्रेक्षा-शक्ति फिर मुखर हो उठती है—

कामलता कल्हरी प्रेम मारुत भकभोरी ।'

इसके बाद ही भीषण युद्ध की पटभूमि आती है और उसी के बीच पृथ्वीराज तथा शशिब्रता की प्रथम मधुयामिनी व्यतीत होती है—

कुसुद उघरि मूंदिय सु बंधि सत पत्र प्रकारय ।
चकिय चक्क विच्छुरहि, चक्कि ससिवृत्त निहारय ॥
जुवती जन चढ़ि काम जौह कोतर तर पंषी ।
आवृत वृत्त सुंदरिय काम बढिदय बर अंषी ॥

नव नित्त हंस हंसह मिलै, विमल चंद उग्यौ सु नभ ।

सामंत सूर नप रषिकै, करहि बीर वीश्राम सभ ॥

संयोगिता-विवाह की विशेषता उसकी मार्मिक प्राकृतिक पृष्ठभूमि में है । वैसे तो शशिब्रता विवाह के आरंभ में भी थोड़ा-सा उद्दीपक ऋतु

वर्णन है किन्तु संयोगिता विवाह से पूर्वके षट ऋतु वर्णन की सी स्वाभाविक प्रासंगिकता तथा अनुभूति को तीव्रता उसमें कहाँ ? इससे पूर्व किसी नई विवाह-यात्रा के लिए प्रस्थान करते समय पृथ्वीराज अपनी रानियों से अनुमति लेने नहीं जाता । किन्तु इस बार बहुत बड़े शत्रु का सामना है । पता नहीं लौटना संभव हो सकेगा या नहीं ? फलतः पृथ्वीराज अनुमति के लिए सर्वप्रथम बड़ी रानी इंच्छिनी के पास जाता है । संयोग ऐसा कि वह ऋतुराज का शासन काल था । आखिर पटरानी का मिलना कवि ऋतुराज में न कराये तो कहाँ कराये । रानी के मुख से यह निकलना स्वाभाविक था—

मवरि अंब फुल्लिग कदंब रयनी दिघ दीसं ।

भवर भाव भुल्लै भ्रमंत मकरंदव सीसं ॥

बहत बात उज्जलति मौर अति विरह अगनि किय ।

कुह कुहंत कल कंठ पत्र राषस रति अगिगय ॥

पय लगि प्राण पति बीनवों, नाह नेह मुफ चित धरहु ।

दिन दिन अवद्धि जुवन घटय, कंत वसंत न गम करहु ॥

राजा उस ऋतु में वहीं रुक जाता है । ग्रीष्म ऋतु के आरंभ होते ही वह दूसरी रानी के मंदिर में जाता है और वहाँ भी ग्रीष्म का भीष्म रूप दिखलाकर रानी रोकती है—

दीरघ दिन निस हीन छीन जलधर वैसनर ।

चक्रवाक चित मुदित उदित रवि थकित पंथनर ॥

चलत पवन पावक समान परसत सु ताप मन ।

सुकत सरोवर मचत कीच तलफंत मीन तन ॥

दीसंत दिगंबर सम सुरत, तरु लतान गय पत्त करि ।

अक्कुलं दीह संपति विपति, कंत गमन ग्रीष्म न करि ॥

इसी तरह ग्रीष्म भी बीत जाता है और पावस ऋतु में तीसरी रानी इन्द्रावती नाना प्रकार से राजा को रोकती है । एक ओर तो 'जल बहल बरषंत प्रेम पल्हरै निरंतर' और दूसरी ओर 'सजल सरोवर पिष्पि हियौ तत छिन धन फट्टै' । इसलिए वह निवेदन करती है—

घुमड़ि घोर घन गरजि करत आडंबर अंबर ।

पूरत जलधर धसत धारपथ थकित दिगंबर ॥

मंभकित प्रिग शिशुमृग समान दमकत दामिनि द्रिस ।

बिहरत चात्रग चुवत पीय दुपंत समं निसि ॥

प्रोषंम विरह दुम लता तन, परिरंभन क्रत सेन हरि ।

सज्जंत काम निसि पंचसर, पावस पिय न प्रवास करि ॥

शरत् का आकर्षण पावस से कम नहीं है । यदि पावस इंद्रावती के यहाँ बीता तो शरत् को हंसावती के यहाँ बीतना चाहिए था—

द्रपन सम आकास खवत जल अमृत हिमकर ।

उज्जल जल सलिता सु सिद्धि सुंदर सरोज सर ॥

प्रफुलित ललित लतानि करत गुंजारव अंमर ।

उदति सित निसि नूर अंग अति उमंगि अंग बर ॥

तलफंत प्रान निसि भवन तन, देपत दुति रिति मुष जरद ।

नन करहु गवन नन भवन तजि, कंत दुसह दारुन सरद ॥

हंसावती का अंतिम तीर है 'सरद दरद करि मति चलौ !'

राजा इतना कठोर थोड़े हो सकता है ! इसके बाद हेमंत का कठिन शीत तो यों ही रोकने के लिए काफी था, फिर उसके साथ रानी का मृदुल निवेदन भी नत्थी हो तो क्या कहना—

न चलि कंत सुभचित्त धनी बहुबित्त प्रगासौ ।

गहगहि ऐसी प्रेम सौज आनंद उहासौ ॥

दीरघ निसि दिन तुच्छ सीत संतावै अंगा ।

अधर दसन घरहरै प्रात परजरै अर्नंगा ॥

जा ऐनि रैनि हर हर जपत, चक्क सह चक्की कियौ ।

हिमवंत कंत सुग्रह ग्रहति, हहकरंत फुट्टै हियौ ॥

इसी तरह रुकते-रुकाने पर्य की अंतिम ऋतु शिशिर आ धमकती है, तब जैसे पाँच ऋतुएँ गईं वैसे छठी भी जाय तो क्या हर्ज है । लेकिन शिशिर का अपना आग्रह भी है—

आगम फाग अवंत कंत सुनि मित्त सनेही ।

सीत अंत तप तुच्छ होइ आनंद सब ग्रेही ॥

नर नारी दिन रैनि मैन-मदमाते बुल्लै ।

सकुच न हिय छिन एक बचन मनमाने बुल्लै ॥

सुनौ कंत सुभ चित्त करि, रयनि गवन किम कीजियइ ।

कहि नारि पीय बिन कामिनी, रिति ससिहर किम जीजियइ ॥

ध्यान देने की बात है कि शिशिर की प्राकृतिक शोभा में विशेषता न होने के कारण कवि ने उधर से दृष्टि हटाकर मानवीय क्रियाओं का प्रलोभन दिखाया है।

स्पष्ट है कि रानियों के आग्रह और ऋतुओं के उद्दीपन के अतिरिक्त राजा का अपना प्रणय-लुब्ध मन भी था जो उसने साल भर के लिए कनवज्ज-गमन का कार्यक्रम रद्द कर दिया। किन्तु दूसरा ऋतु-चक्र आरंभ होते ही राजा की परेशानी के साथ पाठक की उत्सुकता भी लगी हुई है कि देखें कवि इसी तरह कथा-प्रसंग को ऋतु वर्णन के आवर्त में ही घुमाते घुमाते डुबा देता है अथवा राजा के साथ ही कथा-प्रवाह की भी मुक्ति के लिए कोई युक्ति-संगत प्रसंग की उद्भावना करता है। यही कवि-प्रतिभा की परीक्षा है। इतने सुंदर ऋतु वर्णन का समापन भी मधुर ढंग से ही होना चाहिए अन्यथा अब तक की सारी करींगरी गुड़-गोबर हो सकती है। ऐसे महत्त्वपूर्ण प्रसंग पर चंद स्वयं उपस्थित होता है। ज्यों ही दूसरा वसंत आता है कि पृथ्वीराज चंद के पास परामर्श के लिए जाते हैं। लेकिन वे ठहरे राज-धिराज, सीधे साधे मुक्ति का उपाय पूछना हेठी हो सकती थी। इसलिए वे कवि को भी तोलते हुए से पूछते हैं—

षट् रिति बारह मास गय, फिरि आयौ र वसंत ।

सो रिति चंद बताउ मुहि, तिया न भावै कंत ॥

और चंद जैसे पहले ही से इस सवाल के लिए तैयार बैठा हो वह तुरंत 'ऋतु' शब्द पर श्लेष करता है—

रोस भरै उर कामिनी, होइ मलिन सिर अंग ।

उहि रिति त्रिया न मानई, सुनि चुहान चतुरंग ॥

इस प्रकार यह मधुर प्रसंग समाप्त होता है। निस्सन्देह 'कनवज्ज समय' का षट्-ऋतु वर्णन रासो के दो तीन मार्मिक तथा सुंदर प्रसंगों में तो है ही, हिंदी काव्य परंपरा के षट्ऋतु वर्णनों में भी ऊँचा स्थान रखता है। ऊपर से देखने पर इसमें परिपाटी-विहित बातें पर्याप्त मिलेंगी और उद्दीपन के ही रूप में प्राकृतिक सुषमा का प्रयोग दिखेगा किन्तु यह उस ह्रास-युग के दृष्टिकोण की सीमा है। रासो के षट्ऋतु वर्णन की विशेषता इस बात में है कि वह आरोपित न होकर मानवीय

क्रियाकलाप का अभिन्न अंग बनकर आया है और इस प्रकार कथा-प्रवाह को गति देता है। उसकी क्रियाशीलता में ही शोभा है।

इसके बाद भी कवि चंद ने वर्णन-कौशल दिखाने का अवसर निकाल लिया है। उस युग की सबसे समृद्ध नगरी कान्यकुब्ज की शोभा का वर्णन न करना कवि की अरसिकता ही होती। इसलिए रसिक कवि ने कान्यकुब्ज के प्रथम दर्शन-जनित प्रभाव में नाम परिगणन ही नहीं बल्कि दृश्य-चयन और उपमा-उत्प्रेक्षा-मंडन का खूब परिचय दिया है। गंगा के तीर पर बसे हुए विशाल भवनों वाले नगर की नागरियों के क्रियाकलापों को भी कवि ने शब्दों में चित्रित किया है।

आगे कान्यकुब्जेश्वर के दरबार में चंद के उपस्थित होने का प्रसंग आता है। राजाओं के यहाँ मानसिक थकान मिटाने अथवा मनोरंजक के निमित्त कुछ नौक-भोंक अक्सर होती ही रहती थी और उसमें रसिक राजा भी भाग लिया करते थे। कवियों के साथ राजा के कलात्मक विनोद की अनेक कहानियाँ आज तक प्रचलित हैं। चंद दरबार की एक झलक देने के लिए आत्मघटित सा प्रसंग छेड़ देता है। राजा जयचन्द्र चंद बलिह के नाम अथवा 'बलिह' विरुद्ध को ही लेकर मज़ाक करते हैं—

सुह दरिद्र पसु तन चरन, जंगल राव सुहृद ।

बन उजार पसु तन चरन, क्यों दूबरों बरद ॥

इस पर चंद कब चूकने वाला है। धाराप्रवाह पाँच छप्पयों में वह खरी स्पष्टोक्ति द्वारा राजा को निरुत्तर कर देता है। एक बानगी देखिए—

हंस न्याय दुबरी मुक्ति लम्बै न चुनंतह ।

सिंघ न्याय दुबरी करी चंपे न कंठ कह ॥

अग न्याय दुबरी नाद बंधियै सुबंधन ।

छैल छक्क दुबरी त्रिया दुबरी मीत मन ॥

आसाद गाढ़ बंधन धुरा, एकहि गहि हहरदिया ।

जंगर जुरारि उज्जर तर न, यौ दुबरी बरदिया ॥

इसके बाद संयोगिता और पृथ्वीराज के साक्षात्कार, गंधर्व विवाह तथा संयोगिता-हरण प्रकरण में कवि की सरस्वती पूर्ण रूप से मुखरित हुई है। शशिब्रता की तरह संयोगिता का साक्षात्कार मंदिर में नहीं

बल्कि गंगा के किनारे होता है जब पृथ्वीराज अनमने भाव से मछलियों को मोती चूँगा रहा था। देखा पहले संयोगिता ने और थोड़ा संदेह हुआ। उसने तुरंत चित्रशाला में रखे हुए चित्र से मिलान किया और फिर लौट आई। पृथ्वीराज की भी आँखें उठीं। सहसा उसने उस रूप में जानु, कटि, कूच, कुचकोर, मुख, नासिका, दग, भौंह, वेणी आदि न देखकर आश्चर्यचकित क्या देखा कि—

कुंजर उप्पर सिंघ सिंघ उप्पर दो पव्वय ।

पव्वय उप्पर भृंग भृंग उप्पर ससि सुभय ॥

ससि उप्पर इक कीर कीर उप्पर मृग दिट्ठौ ।

मृग उप्पर कोवंड संघ कंदप्प वयट्ठौ ॥

अहि मयूर महि उप्परह हीर सरस हेमन जर्यो ।

सुर भुवन छंडि कविचंद कहि तिहि धोषै राजन पर्यो ॥

शिकारी राजा आखिर यह सब न देखता तो क्या देखता !

प्रथम दर्शन में ही दोनों सुध-बुध खो बैठते हैं। समझ में नहीं आता कि बात क्या करें। संयोगिता सोचती है—

जो जंपौ तौ चित्त हर, अनजंपै विहरंत ।

अहि डट्टै छच्छुन्दरी हियै विलग्यी वंति ॥

दूसरा प्रसंग वह है जब पृथ्वीराज संयोगिता को धोड़े पर चढ़ाने का आग्रह करता है और वह लजा उठती है। आगे चलकर घोर संग्राम में लड़ते हुए अश्वारोही दम्पति की शोभा मन को रोमांचित कर देती है। दाम्पत्य प्रणय का प्रस्फुटन कर्मक्षेत्र में ही होता है जहाँ युगल हृदय एक दूसरे को सहयोग देते हुए परस्पर श्रमसिक्त मुख देखते चलते हैं। होता यह है कि कोई योद्धा पृथ्वीराज के गले में कमान डालकर खींच लेना चाहता है कि—

गुन कट्टिय रमनिय सुवर, डसनह पंग कुंआरि ।

असि बर भर प्रथिराज हनि, सूर हृथ नर वारि ॥

इसके बाद—

देधि संजोगिय पिय सुबल, श्रम जल बूंद बदन्न ।

रति पति अहित पवित्र मुष, जालि प्रजालि मरन्न ॥

इन सुखमय प्रसंगों के बाद रासो में दुःखमय स्थल आते हैं। इतने सुख और विलास के बाद करुण प्रसंगों का आगमन उनको और

भी मार्मिक बना देता है। पृथ्वीराज गोरी से लोहा लेने के लिए प्रस्थान करता है। यों तो गोरी से पहले भी उसकी कई बार मुठभेड़ हो चुकी है परंतु इस बार ऐसा प्रतीत हुआ जैसे अब फिर मिलना न होगा। अभी किसी रानी के सामने पृथ्वीराज के दीर्घ-वियोग का अवसर आया ही न था। यह वियोग वर्णन का पहला अवसर है और यहाँ रासोकार की सहृदयता देखने योग्य है—

वही रत्ति पावस्स वही मधवान धनुषं ।

वही चपल चमकंत वही बगपंत निरुषं ॥

वही घटा घन घोर वही पष्पीह मोर सुर ।

वही जमीं असमान, वही रवि ससि निसि वासुर ॥

वेई आवास जुगिन पुरह, वेई सहचरि मंडलिय ।

संजोगि पयंपति कंत बिन, मुहि न कछु लागत रलिय ॥

भावों के आवेग में सभी अलंकार बह जाने हैं और भाषा ही भावों का साक्षात् रूप धारण कर लेती है। इन पंक्तियों को देखकर सहसा विश्वास नहीं होता कि इनका रचयिता पूर्व प्रसंगों में उपमा-उत्प्रेक्षा आदि की राशि उडेलने वाला कविचंद ही है। इसी प्रकार पृथ्वीराज के बंदी बनाये जाने का समाचार मिलने पर सहगामिनी संयोगिता का आर्त्त कंदन तथा वैधव्य-रूप हृदयविदारक है।

उधर राजनी के कैदखाने में पड़े हुए अंधे महाराज पृथ्वीराज का पश्चाताप और भी करुण है। राजा अपने इस पतन के कारणों का मन ही मन विश्लेषण करता है और पाता है कि यह सब उसके कुकृत्यों और अत्याचारों का परिणाम है। उसकी आँखों के सामने एक-एककर सभी अत्याचार साकार हो उठते हैं। फिर उसे अपने अतीत वैभव तथा सुखोपभोग का स्मरण हो आता है। अभाव की पटभूमि में वे सुखमय दिन बड़े मोहक प्रतीत होते हैं, फिर उस मोहक पटभूमि के विरोध में कैद की दारुण दशा और भी मार्मिक हो उठी है। रासोकार ने महाराज के इस मानसिक द्रव्य का अत्यंत सफल अंकन किया है—

राजा सोचता है—

सहै फूल की फूलनी नाहि नाथं । तुरत्तं तरायौ जु मालीन हाथं ॥

नहीं सूर सामंत परिवार देखं । नहीं गज बाजं भंडारं निखेसं ॥

नहीं पंगजा प्रान ते अत्ति प्यारी । नहीं गोप महिला इतं चित्रसारी ॥
 नहीं मृगानयनी चरनं तलासै । नहीं कूक कोका सबहं उलासै ॥
 नहीं पातुरं चातुरं नृत्यकारी । नहीं ताल संगीत आलापचारी ॥
 और अंत में—

नहीं चोम मौजं करूँ लष दानं । नहीं भट्ट चंदं विरहं बषानं ॥

उस समय तो नहीं लेकिन कुछ दिनों बाद चंद अवश्य उसके पास आ पहुँचता है और फिर एक बार विरुदावली सुनाता है । लेकिन इस बार की विरुदावली कुछ और है । वह अंधे तथा हताश योद्धा के हृदय से कई आशा का संचार करती है; वह मुक्ति का संदेश देती है; वह कार्य-विशेष के लिए तैयार करती है । लेकिन वह प्रसंग कितना मार्मिक है जब अंधा नरेश अपने प्रिय सहचर चंद का स्वर सुनता है । पहले वह पहचान नहीं पाता । फिर थोड़ी देर बाद स्वर के सहारे पहचान लेता है । उल्लास हांता है । लेकिन फिर न जाने कितने भाव मन में उठते हैं । शायद यह कि आज इस विरुद् के उपलक्ष में पहले की तरह पुरस्कार देने के लिए मेरे पास कुछ नहीं है; शायद यह कि आज यह विरुद् व्यंग की तरह चुभता है; शायद यह कि अपना यह विपन्न रूप चंद को दिखाने के लिए मैं क्यों जीवित हूँ; शायद यह कि डूबते को तिनके का सहारा तो मिला और बहुत दिनों के बाद परदेश में स्वजन का स्वर सुनने का सौभाग्य प्राप्त हुआ है । पृथ्वीराज कुछ नहीं बोलता, केवल—

‘नेह नीर रुकि कंठ कवि, नैन फलभमल पानि ।

बिन बोलत बोल्यो नृपति, चंद चिति बर बानि ॥

ऐसे शोकपर्यवसायी महाकाव्य का अंत भी भारतीय कवि ने सुखांत से उद्भासित कर दिया क्योंकि धरणी का स्लेच्छ से उद्धार होना राजशोक से अधिक आनंदप्रद है ।

मरन चंद बरदाइ, राज पुनि सुनिग साहि हनि ।

पुहपंजलि असमान, सीस छोड़ी सुदेव तनि ॥

मेछ अवद्धित धरनि, धरनि सब तीय सोह सिग ।

तिनहि तिनहि संजोति, जोति जोतिहि संपातिग ॥

रासो अलंभ नव रस सरस, चंद छंद किय अमिय सम ।

शृंगार बीर करना विभछ, भय अद्भुत हसंत सम ॥

ऐसे चरित काव्य के विषय में इस अंतिम उल्लाला की गर्वोक्ति उचित ही है। युद्ध के प्रसंगों का उदाहृत करना उतना आवश्यक नहीं क्योंकि वीर काव्य के रूप में तो इसकी ख्याति है ही।

ऐसे काव्य में यदि यदा-कदा ऐतिहासिक तथ्यों का उल्लंघन हो गया हो तो उससे कुछ नहीं बिगड़ता; क्योंकि इसमें तथ्यों से भी बड़े मानवीय सत्यों की अवहेलना नहीं की गई है; बल्कि सच तो यह है कि कवि ने मानवीय सत्य की रक्षा के लिए ही सुविधानुसार ऐतिहासिक तथ्यों से इधर-उधर हटकर अपनी कल्पना शक्ति का जौहर दिखाया है।

अभिव्यक्ति-कौशल—ऐसी भाव-प्रगल्भता कुशल कवि से ही संभव है। रासो के शिल्प सौन्दर्य पर विचार करते हुए सबसे पहले जिस बात की और ध्यान जाता है, वह यह है कि इसके कवि को काव्य की पूर्व परंपरा का अद्भुत ज्ञान था और साथ ही भावावेग के अभिनव उत्थान में पूर्ववर्ती काव्य-परंपरा को ढालने की क्षमता भी थी। हास-युग की उस कृति में इससे अधिक शिल्प-सौन्दर्य की शक्ति संभव भी न थी। उस युग के अन्य कुशल कवियों की भाँति रासोकार ने भी पूर्व कवियों की कही हुई उक्तियों में अपनी सूझ के अनुसार थोड़ी-बहुत विशेषता भक्तकाने में अक्सर जौहर दिखाया है और यही उस युग का सबसे बड़ा बहुप्रशंसित काव्य कौशल था। शशिब्रता की 'नयन-श्रवण वार्ता' में चंद की यह प्रवृत्ति देखी जा सकती है। इसी प्रकार नख-शिख वर्णन में भी काव्य रूढ़ियों का पुनर्माजन लक्षित होता है। इस प्रवृत्ति से जायसी, सूर और तुलसी जैसे रससिद्ध कवि भी मुक्त न थे। प्रायः उन कवियों की विशेषता मानवीय मनोभावों की सहज परख में लक्षित हुई है और ऐसे प्रसंगों में रासोकार भी ऊँचे उठ जाता है।

रासो के कवि की अभिव्यक्ति-क्षमता सबसे अधिक भाषा पर अधिकार के रूप में देखी जा सकती है। कवि जैसे चाहता है शब्दों का प्रवाह मोड़ देता है; हर शब्द जैसे उसके इशारे पर नाचता चलता है और भावावेग में धाराप्रवाह शब्दों को देखकर ऐसा प्रतीत होता है जैसे इस कवि को शब्द की कमी खटकती ही नहीं। निश्चय ही, चंद बिहारी की भाँति एक-एक शब्द को बहुत तराश खरादकर, बहुत सोच

विचार के साथ प्रयोग करने वाले जड़ाऊ या शिल्पियों में से न थे। वे मस्तमौला की तरह शब्दों का बेलाग प्रयोग करते थे। इसीलिए जो विद्वान 'नपा-तुलापन', 'अत्यंत व्यवस्था' आदि के अनुसार कवि की भाषा-शक्ति परखते हैं वे चंद को पसंद नहीं कर सकते; वे तो बिहारी पर ही बलिहारी होते हैं। किन्तु जिन्हें भावमुकूल भाषा के मन्द्र और तीव्र सौन्दर्य की चाट है वे चंद के पास बार-बार सड़ायेंगे।

छंद भाषा की गति तथा भंगिमा है। इसलिए चंद जैसा भाषा पर अचूक अधिकार रखने वाले कवि को छंद-भंगी स्वाभाविक है। वस्तुतः हिंदी में चंद को छंदों का राजा कहा जा सकता है। भाव-भंगिमा के साथ-साथ दनादन भाषा नये-नये छंदों की गति धारण करती चलती है और विशेषता यह कि इस बल खानी हुई नदी में बहते हुए चित्त को कोई मोड़ नहीं खटकता। छंद परिवर्तन के प्रवाह में सहज आत्म विस्मृति का ऐसा सुख अन्यत्र कहीं नहीं मिलता। रासो एक ही साथ संस्कृत प्राकृत तथा अपभ्रंश की प्राचीन छंद परंपरा के पुनरुज्जीवन तथा हिंदी के नूतन छंद-संगीत के सूत्रपात की संधि बेला है। इस तमाम छंद-संघटन में भी रासो का अपना हिंदी काव्योचित संगीत सर्वोपरि है। इसीलिए तो 'सरोज' के रचयिता श्री शिव सिंह सेंगर ने चंद को छप्पयों का राजा कहा है। विभिन्न यतियों के छप्पय की जो सुकर भंगिमा छंद ने दिखलाई है वह दुर्लभ है।

इस प्रकार चंद ने अनूठे अभिव्यक्ति-कौशल का परिचय दिया है।

रासो और युग की वास्तविकता—चाहे पृथ्वीराज रासो की रचना आठ दश वर्षों में एक कवि द्वारा हुई हो चाहे शताब्दियों में अनेक कवियों द्वारा, उसमें प्रतिबिम्बित वास्तविकता में कोई महत्त्वपूर्ण स्तर-भेद लक्षित नहीं होता। जिस प्रकार कबीर जायसी सूर तुलसी आदि की रचनाओं में चौदहवीं से सोलहवीं शताब्दी का सांस्कृतिक पुनर्जागरण प्रतिबिम्बित हुआ है और सामान्य जन समूह की आशाओं आकांक्षाओं का उभार लक्षित होता है, उस तरह पृथ्वीराज रासो में नहीं मिलता। वस्तुतः वह पृथ्वीराज तथा उससे संबंधित राजाओं और सामंतों के प्रणय तथा युद्ध विषयक संबंधों के माध्यम से उस युग के ह्रासोन्मुख उपरले समुदाय की वास्तविकता प्रकट करता है। निस्सन्देह चंद अपने चरित नायक पृथ्वीराज का सखा था और

पृथ्वीराज के प्रति उसका पक्षपात भी स्वाभाविक था। इस सहानुभूति के बावजूद उसके अनजाने पृथ्वीराज तथा उसके समाज की कम-जोरियाँ उभर गई हैं। संभवतः इसी सहानुभूति के कारण रासो में उस युग की सचाई अपने नग्न रूप में व्यक्त हो सकी है।

जब गोरी के हमले की खबर पृथ्वीराज की प्रजा में पहुँचती है तो वह अपने को अरक्षित तथा असहाय अनुभव करती हुई अंत में रनिवास-लुब्ध राजा की शरण जाने की मंत्रणा करती है उस समय चंद की इन पंक्तियों में 'रतिवंतौ राजन' का संकेत ध्यान देने योग्य है—

मिलिय सकल एकंत महाजन । किम बुझै रतिवंतौ राजन ।

मृगया रत और केलि-विलासी राजा के जीवन का उद्घाटन करने के साथ ही परस्पर घातक रजपूती शान की ओर भी कन्ह के चष-बंधन कथानक से संकेत किया है। चंद ने इस सचाई का यथातथ्य अंकन ही नहीं किया है बल्कि पृथ्वीराज के पराभव तथा क्रौंद वाले पश्चात्ताप के द्वारा अनजाने ही उस हास युगीन भावना के घातक परिणाम की ओर भी ध्यान दिलाया है।

इस प्रकार पृथ्वीराज रासो संत-भक्ति काव्य की भाँति सामान्य जन-जागरण की उत्थान शील भावना का प्रतिबिम्ब न होते हुए भी हासोन्मुखी सामंती शक्तियों के अंतर्विरोध का चित्रण करने वाला महाकाव्य है। इसीलिए इसकी वीर भावना में न तो महाभारत का सा उदात्त शौर्य और पराक्रम है, और न इसकी शृङ्गार भावना में कालिदास की सी मुग्ध तन्मय भावाकुलता। हासयुग का प्रभाव रासो की वीरता और शृङ्गार दोनों भावनाओं पर पड़ा।

इसलिए रासो की महिमा वीरता और शृङ्गार के उदात्त तथा उज्ज्वल चित्रण में उतनी नहीं जितनी अपने युग की वास्तविक वीरता तथा प्रेम भावना को प्रतिबिम्बित करने में है। कहना न होगा कि इस कार्य में चंद ने जितने व्यापक क्षेत्र को समेटा है वह संत-भक्ति काव्य को छोड़कर अन्यत्र कहीं नहीं मिलता। रासो मानव जीवन की विविध परिस्थितियों और भावदशाओं का महासागर है। यही वह विशेषता है जिसने हास-युग के सभी काव्यों में रासो को सर्वोपरि स्थान दिया

है। निश्चय ही यह उस युग की सांस्कृतिक परिस्थितियों तथा पूर्व परंपराओं का बृहद् कोश है और है मध्ययुगीन भारतीय समाज का एक काव्यात्मक इतिहास।

पृथ्वीराज रासो की भाषा

राजस्थान की अनुश्रुति या परंपरा के अनुसार पृथ्वीराज रासो की रचना पिंगल (ब्रज भाषा) में हुई। डा० उदयनारायण तिवारी के अनुसार लंदन की रायल एशियाटिक सोसायटी में सुरक्षित पृथ्वीराज रासो की एक हस्तलिखित प्रति के ऊपर फारसी में लिखा है कि 'चंदवरदायी लिखित पिंगल भाषा में पृथुराज का इतिहास'।^१ यद्यपि तिवारी जी ने उस प्रति के लिपि-काल आदि के विषय में कोई सूचना नहीं दी, फिर भी वहाँ की प्रतियों के बारे में जो विवरण प्राप्त हैं उनको देखते हुए कहा जा सकता है कि यह अनुश्रुति १७ वीं १८ वीं शताब्दी से पूर्व की ही है। इस अनुश्रुति की पुष्टि आधुनिक युग के फ्रांसीसी विद्वान तासी ने १८३६ ई० में की और डा० तिवारी के अनुसार उसने लिखा है कि रासो की रचना कन्नौजी बोली (ब्रज के अंतर्गत) में हुई है।^२ उसी समय, बल्कि उससे दो वर्ष पहले प्राउज़ ने पृथ्वीराज रासो की भाषा का विस्तृत अध्ययन लंदन की रा० ए० सो० जर्नल में प्रकाशित करवाया जिसका सारांश देते हुए डा० धीरेन्द्र वर्मा ने लिखा है "प्राउज़ की दी हुई रासो के व्याकरण की रूपरेखा से यह स्पष्ट हो जाता है कि जहाँ तक व्याकरण के ढाँचे का प्रश्न है, रासो की भाषा प्रधानतया १६वीं शताब्दी में साहित्य के क्षेत्र में प्रयुक्त ब्रजभाषा है, न डिंगल अथवा प्राचीन साहित्यिक मारवाड़ी और न अपभ्रंश। किन्तु शब्द समूह में अपभ्रंशाभास और डिंगल रूपों का प्रयोग रासो में बहुत हुआ है। यह एक शैलीमात्र थी जिसका प्रयोग वीररस संबंधी स्थलों पर अनेक समकालीन कवियों ने किया है। जैसे केशव, तुलसी, भूषण, चन्द्रशेखर आदि। अंतर इतना ही है कि युद्ध-प्रधान ग्रंथ होने के कारण ही रासो में इसका प्रयोग आद्योपान्त और अधिक मात्रा में

^१ वीर काव्य, सं० २००५, पृ० ६२

^२ वही, पृ० १५४

मिलता है। इस शब्दावली के कारण ही रासो की भाषा के डिंगल अथवा अपभ्रंश होने का संदेह पाठकों का होने लगता है।^१ प्राउज और तासी के बाद जब पृथ्वीराज रासो विषयक विवाद आरंभ हो गया तो उस दौरान में भी टेसीटरी और ग्रियर्सन ने रासो को पश्चिमी हिंदी (ब्रज) की रचना बताया।

इसके विपरीत डा० दशरथ शर्मा तथा मीनाराम रंगा की राय में 'परंपरानुसार रासो प्राचीन राजस्थानी रचना है।'^२ किन्तु रासो को राजस्थानी रचना कहने वाली वह कौन सी परंपरा है इसका उल्लेख उन्होंने नहीं किया है। पुरातन प्रबंध संग्रह के पृथ्वीराज संबंधी अपभ्रंश छंदों के प्राप्त होने जाने से उनकी राय रासो को 'अपभ्रंश या पुरानी राजस्थानी' रचना कहने के पक्ष में हो गई है।^३ वहीं अपने मत की पुष्टि के लिए उन्होंने पृथ्वीराज रासो के 'यज्ञ विध्वंस' प्रकरण के कुछ छंदों का अपभ्रंश रूपान्तर भी किया है। पं० मोतीलाल मेनारिया भी रासो को डिंगल-रचना मानने के पक्ष में है।^४

आये दिन पृथ्वीराज रासो की भाषा पर अक्सर निबंध निकलते रहते हैं लेकिन जैसा कि नरोत्तमदास स्वामी ने लिखा है 'इन विद्वानों ने न तो डिंगल की रचनाओं को देखा, न पिंगल की इन रचनाओं का ही अध्ययन किया और डिंगल क्या है इससे अपरिचित होने के कारण इन पिंगल रचनाओं को डिंगल कह डाला—केवल इसलिए कि इनकी रचना राजस्थान में हुई।'^५ कुछ लोगों की तो भाषा-परख-शक्ति ऐसी है कि जहाँ किसी छंद में कुछ व्यंजनद्वित्व देखा, चट 'डिंगल' कह उठे। ये भाषाशास्त्री केवल शब्द को भाषा समझते हैं, वाक्यगठन को नहीं।

वस्तुतः अपभ्रंश के बाद प्रायः पश्चिमी भारत में दो मुख्य भाषायें उत्पन्न हुई—दक्षिणी पश्चिमी राजस्थान में डिंगल तथा पूर्वी

^१ 'काशी विद्यापीठ रजत जयंती अभिनंदन ग्रंथ' पृ० १७७-७८

^२ राजस्थान भारती, भाग १, सं० १, सन् १९४६ पृ० १०१

^३ वही

^४ डिंगल में वीर रस (चतुर्थ संस्करण, सं० २००८, पृ० २)

^५ राजस्थान भारती भा० १, सं० १, सन् १९४६ पृ० १०

राजस्थान और ब्रजमंडल में पिंगल । काव्य-परंपरा की दृष्टि से डिंगल में रचना करनेवाले प्रायः चारण हुए और पिंगल के कृती कवि प्रायः भाट । पृथ्वीराज रासो पूर्वी राजस्थान में मूलतः चंद बलिह भट्ट द्वारा अपभ्रंशोत्तर युग में रचा गया और अनेक प्रक्षेपों के साथ अपने विभिन्न रूपान्तरों में भी वह पिंगल की ही रचना है । निस्सन्देह प्रक्षेपों के साथ भाषा के परवर्ती रूपों का भी समावेश होता गया है किन्तु आद्योपान्त बृहद् रूपान्तर (जिसे प्रायः सबसे परवर्ती कहा जाता है) की भी भाषा का आधार एक ही—ब्रज भाषा अथवा पिंगल है । पृथ्वीराज रासो का वर्तमान रूप व्यक्ति-विशेष की कृति न होकर अनेक पीढ़ियों का संकलन है इसलिये उसमें भाषा के स्तर-भेद स्वभावतः आ गए हैं लेकिन यह भाषा-भेद उस प्रकार का नहीं है जिसे कुछ समन्वयवाद-प्रेमी विद्वान पंचमेल या खिचड़ी भाषा कहते हैं । ये विद्वान पृथ्वीराज रासो के इस अन्तःसाक्ष्य 'षट्भाषा पुरानं च कुरानं कथितं मया' के सहारे उसमें षट्भाषा तथा अरबी फारसी के तत्त्व खोजना अधिक प्रमाणिक समझते हैं । बात यह है कि रासो की भाषा को अपभ्रंश, डिंगल या पिंगल कहकर एकांगी अथवा पक्षधर कहलाने से तो कहीं अधिक सुरक्षित है इन सबका (तथा कुछ और भाषाओं का भी) सम्मिश्रण कहना । बीच का रास्ता निकालनेवाली यह पंचऊ प्रवृत्ति मीठी भले हो लेकिन वैज्ञानिक नहीं कही जा सकती ।

'षट्भाषा' वाला पद्य निश्चय ही किसी न-किसी रूप में सभी प्रकार के रूपान्तरों में प्राप्त होता है लेकिन मध्ययुग में संस्कृत आलंकारिकों, प्राकृत वैयाकरणों तथा कवियों में 'षट्भाषा' शब्द रूढ़ हो चला था । इसके अतिरिक्त रासो के उक्त छंद में भाषावैविध्य की ओर संकेत नहीं है बल्कि षट्भाषा में रचित साहित्य के सार ग्रहण करने की घोषणा है । 'कुरान' के उल्लेख का भी यही प्रयोजन है । यों भी यह बड़ी मोटी बात है कि कोई काव्य एक निश्चित भाषा में लिखा जाता है, उसे दुनिया भर की भाषाओं का अजायबघर नहीं बनाया जाता । वस्तुतः पृथ्वीराज रासो में शैली-भेद है, भाषा-भेद नहीं ।

लेकिन पृथ्वीराज रासो को एक भाषा—पिंगल की कृति मानते हुए भी पंडितों का यह आरोप आड़े आता है कि 'उसमें व्याकरण आदि की कोई व्यवस्था नहीं है' और उसकी भाषा 'बिल्कुल बे-ठिकाने है ।'

आचार्य रामचन्द्र शुक्ल जैसे विद्वानों ने झुंझला कर कहा है कि 'न तो यह भाषा के इतिहास के और न साहित्य के जिज्ञासुओं के ही काम का है'।^१ इस झुंझलाहट में इतना तथ्य तो है ही कि वैज्ञानिक ढंग से संपादित न होने के कारण लिपिकार की प्रमाद-जनित अनेक त्रुटियाँ रासो के पाठक को क्रदम क्रदम पर परेशानी में डालती हैं लेकिन जहाँ तक 'व्याकरण की व्यवस्था' का प्रश्न है, ध्यान से देखने पर वह मिलेगी। हाँ, इतना तो ध्यान रखना ही चाहिए कि यह काव्य है, व्याकरण-ग्रंथ नहीं। जब रससिद्ध कवि गो० तुलसीदास के धर्मग्रंथ की तरह पूज्य तथा सुरक्षित 'रामचरित मानस' में भी एक ही शब्द के अनेक रूप मिलते हैं, तो चंद बलदिय भाट कृत तथा मौखिक परंपरा में रूपान्तरित इस राजप्रशस्ति में शब्द रूपों की किंचित् अव्यवस्था स्वाभाविक ही है। इतने पर भी वह 'भाषा के इतिहास के काम का' है या नहीं, यह तो अध्ययन के बाद ही कहा जा सकता है।

भाषा-संबंधी कतिपय विशेषताएँ

^१ शब्दावली—रासो के शब्दकोश में संस्कृत तत्सम, अपभ्रंश-तत्सम, अपभ्रंश-तद्भव (आधुनिक भारतीय आर्यभाषा में प्रचलित अपभ्रंश के भी धिसे शब्द रूप), अनुकरणात्मक और देशी तथा अरबी फ़ारसी के तत्सम और तद्भव शब्द प्रायः मिलते हैं। इनके अतिरिक्त रासो में कुछ विशेष ढंग से शब्दों में ध्वनि-परिवर्तन कर दिया गया है। जैसे—

१. छंदोऽनुरोध से शब्दान्तर्गत तथा शब्दान्त में अनुस्वार द्वारा लघु व्यंजन को गुरु करना; जैसे 'कनक' का 'कनंक' और 'धरी सत्त सत्तं उग्यौ चंद मानं।'।

शब्दांत में अनुस्वार-प्रयोग संस्कृत-रूप देने के लिये नहीं बल्कि छंदःपूर्ति के लिए मात्रावृद्धि का एक ढंग है जैसा कि तुलसीदास ने भी किया है 'चंद्रहास हरु मम परितापं। रघुपति विरह अनल संजातं॥' ये वस्तुतः 'परितापा' और 'संजाता' के लिए प्रयुक्त शब्द हैं।

^१ हिंदी साहित्य का इतिहास, पाँचवा संस्करण पृ० ४४

इसलिये रासो की विशेषता शब्दान्तर्गत परिवर्तन में ही समझना चाहिए ।

२. छंदःपूर्ति के लिए व्यंजन-द्वित्व—(क) एक ही शब्द में, जैसे—गत्ति,
मानव्व, निकट्ट, मुरल्ली, निरष्वत
(ख) परवर्ती शब्द में—दिसदिसि,
हयगय ।

परवर्ती शब्द का आदि व्यंजन-द्वित्व 'स्वरपात' की सूचना देता है ।

३. छंदःपूर्ति के लिये दीर्घीकरण—निसान का 'नीसान'

४. छंदःपूर्ति के लिये स्वार्थिक प्रत्यय—य ८ —क का आगम—
मनोहर का 'मनोहरयं'

५. छंदःपूर्ति के लिये स्वर-भक्ति के साथ ही परवर्ती व्यंजन-द्वित्व—
सामान्यतः धर्म ७ धरम होता है पर रासो में धरम्म; सप्त ७ सपत्त

६. छंदःपूर्ति के लिये रेफ का मनमाना स्थान-परिवर्तन—ध्रम, धम्म;
म्रजाद, म्रजाद

७. संयुक्त व्यंजन का स्थानापन्न अनुस्वार-विधान—'नच्चरित' से नंचति,
'चमक्कि' से 'चमंकि' ।

संक्षेप में, व्यंजन-द्वित्व अनुस्वार-विधान तथा रेफ-विपर्यय की ये प्रवृत्तियाँ थोड़ी बहुत मात्रा में अपभ्रंशकाल से ही चली आ रही थीं जिन्हें रासोकार ने स्वच्छंद भाव से बहुतायत के साथ अपनाया ।

पद-रचना—मुख्यतः ब्रजभाषा की ही है । कोई एक छप्पम लेकर उसके पदों का विश्लेषण करके देखा जा सकता है । सभी रूपान्तरों में प्राप्त तथा ऐतिहासिक मुहर लगे हुए 'एक बान पहुमी नरेश कैमासह मुक्यौ' के विश्लेषण से भी इसकी पुष्टि होगी । यहाँ ध्यान देने योग्य बात यह है कि रासो में राजस्थानी की षष्ठी विभक्ति का चिह्न 'रा' कहीं नहीं मिलता । इसी तरह और भी कई बातें हैं जो इसे राजस्थानी भाषा से अलग करती हैं ।

नामवर सिंह

परिशिष्ट (२)

शब्दार्थ

अंकुर = (सं०) अंकुर

अंषि } (सं०) अक्षि—आँख
अंषी }

अंचं = (पृ० ६६—रोमयं अंचं)

रोमाञ्च हुआ

अंछनि = (सं० अक्षि) आँखों में

अंजर = (सं० उज्ज्वल) उज्ज्वल

अंदू = (पृ० १४३) ? बंधन ?

अंबं = ग्राम

अंबंबरं = सुवस्त्र

अंप्प = (सं० आत्मन्), प्रा० अण्पा—

आप (स्वयं)

अंबजा = (सं० अंबुज) — कमल

अंबाह = ग्राम का

अंभ = (सं०) जल

अंसर < अम्बर

अंमि = (१) अमृत (२) ग्राम का छोटाफल

अंसपति = (१) सं० अंशपति

अंशावतार (२) अश्वपति

अकस = (१) ऐंठ के साथ (२) ईर्ष्या

(३) अकस्मात्

अकिंत्तौ = अकीर्ति

आषि = कहकर, कहा

अषिय = (१) आँखों से (अप अषिय

= अपनी आँखों से) (२) कहा

अषी = (१) कहा, (२) आँख

अषार्यौ = ललकारा, अखाड़ने लगा,

क्रोधपूर्वक कहने लगा ।

अगनिता = अगणित

अगाद = अगाध

अगिवान = अगुवान

अगा = अग्र

अगार = अधिक, अग्रणी (तु० अगलौ-

रा० रू० १६)

अगासारि = आगे के अनुसार

अग्यौन = अगुवान

अचानं = एकाएक अचानक

अचिज्ज = आश्चर्य

अच्छरि = अम्भरा

अच्छरिअं < आश्चर्यं

अछ्ग = (१) अतृप्त, (२) हुए

अच्छ = (१) अच्छा, (२) अक्षि, आँख

अच्छिय = (१) हुआ (सं० अस्—प्रा०

अच्छ —), (२) अच्छा

अच्छिर = अक्षर

आजपह = व्याकुलता पूर्वक, (संभवतः

अलपह = थोड़ा पृ० १०६)

अच्छा पाठ है

अज्ज < अद्य = आज

अज्जान < आजानु = जंघे तक

अठार = अठारह

अठी = सैनिक

अडंड = अदंड्य

अण्छेह = अपार

अत्त < आत्त, प्रात

अथार<अस्तार = सिमटा हुआ,

न पैला हुआ

अदब्ब<आदाव

अद्ध<अर्ध

अद्धय = अध्ययन किया, पढ़ा

अद्धारित = आधार पर स्थित

अधारी = धारण किया

अध्यैन = अध्ययन

अनि (१) सेना, (२) अन्या, दूसरी

अनेही<अस्नेही

अनोट = अनवट, पैर के अंगूठे में
पहना जाने वाला आभूषण

अनीह = निटुर, निर्दय

अपअस्थिय = अपनी आंखों से ?

अपकानन = अपनेकानों से ?

अपछरी = अप्सरा

अपमंगल = अमंगल

अपूर्ब्ब = अपूर्व

अप्परस<आत्मरस

अप्प = (१) आप ही (सं० आत्मम्)

(२)<अल्प

अप्पन (१)<अर्पण = देना;

(२)<आत्मन् = अपना

अप्पान = अपनापन

अप्पी = अर्पित किया

अपुठठि<आपृष्ठ = वापस, पीछे

अप्पो = अर्पण करूं

अबधारी = तेज धारण करने वाला ?

आबू को ग्रहण करने वाला ?

अबर = अपर, दूसरा

अब्दे = वर्षाकाल में

अबास = आवास

अब्बूधनी = आबू का राजा

अब्बवै = (सं० अबुर्दपति) = आबू का
राजा

अब्धा<अविधा = नियमों से स्वतंत्र

अबीह = निर्दय

(तुल० राजरूपक पृ० ३६, २४६)

अग्भ<अभ्र = बादल

अभ्रपटो = आकाश

अभंग = भंगिमा से, ढंग से

अभानं = आकाश से

अभिगिगय = अभग्न रूप से

अमग्गी<अमार्गी = टेढ़ी

अमंत<अमंत्र, = राय या आज्ञा न
माननेवाला

अमग्गा = <अमार्ग

अमीवर = अमृत

अमुभ्मे = अंबुधि में, समुद्र ?

अमुद्ध = <मुग्ध = मूर्ख, मुग्धा

अयान = अज्ञानी

अर = शीघ्रता

अरक = (१) (सं० अर्क) सूर्य,

अरषि/हर्षित = रोमांचित

अरदास<अर्जदाश्त (फा०) प्रार्थना

अराबैं = छोटी तोपें

अरितं = अड़ गया है

अरि-सीम = शत्रु की मर्यादा, सीमा

अरुद्ध = रुष्ट

अरेस, अरेह = न दबने वाला

(दे० राजरूपक पृ० ३१)

अलपहति = अत्यल्प, अल्प

अलंकिय = अलंकृत
 अलसल = घोड़ा
 अलीन = भौरों में
 अलियज = अलिकुल, भ्रमरगण
 अलुब्ध = अलुब्ध
 अल्लोल = लोल, चंचल
 अवर्गी < अवलिगत = बाग न मानने
 वाला ?
 अवर = अपर, और
 अब्राह = अप्रहरणीय
 अवन्निय = अवनी में, पृथ्वी में
 अवरिय = आवृत
 आवास = आवास
 अविधानं < अभिधान = कोश
 असदग्गा = असवार ?
 असपति = अश्वपति ?
 असहां = शत्रुओं पर (तु० राजरूपक,
 पृ० ३८१)
 असंधं = संधिहीन होकर, टूट-टूट कर
 असार < अश्ववार = असवार
 असुत्त (१) शुक्ति ? (२) असुत्त
 अस्स < अश्व
 अहस्पति = अहिपति, शेषनाग
 अहुद्विय = लोटने लगे
 आपत्ति < आयत्ति ?
 आकित = आकृति
 आकूत < आकृति = उत्साह
 आपेवनं < आसेवनं = सेवन
 आगर < आकर = खान
 असिष्य = आशीष, आशीर्वाद
 आहंन = दिन में

इंषी = } इच्छिनी रानी
 इंछी = }
 इंद = (१) इंद्र, (२) इंदु, चंद्रमा
 इंदुव रंग = इंदीवर (नील कमल) का
 रंग
 इष्प < इषु = वाण
 इष्यौ = देखा
 इछ = इच्छा
 इछु = इच्छुक
 इम = इस प्रकार
 इला = पृथ्वी
 इश्व = ईश्वर, शिव
 उअर = उर, हृदय
 उकिर = अंकुरित हुआ
 उकती = उक्ति
 उग्रंत = उग्र
 उर्ग = उरग, साँप
 उग्गार < उद्गार = उगलना
 उचिष्टी < उच्छिष्ट
 उछ्दंत = उछलता हुआ
 उछार = उछाल
 उच्छाह < उत्साह
 उम्मार < उत् + ज्वाल = जलती हुई
 (ज्वाला)
 उट्टे < उत्ते = वहाँ
 उड्डं = उड्डंत = उड्डते हुए ?
 उत्तकं < अतर्क
 उत्तथ = उत्तंथ = जवान
 उत्तंगं = उत्तुंग, ऊंचा
 उत्तंकिय < उत् + तंकित = आतंकित
 उत्तमंग = सिर

उद्दयौ = उदित हुआ
 उद्धार, उद्धारयं = उदार
 उद्दिगा = उदय हुआ
 उद्धारौ = उद्धार किया
 उद्घौ = उदय हुआ
 उधतदि = उधर (परलोक) गए ?
 उनमानिय < अनुमानित
 उनंगी = (१) मुकी हुई, (२) नंगी-बनी
 उपट्टिय = उभर गई
 उपसभ्म < उपशमन
 उपपन्न < उत्पन्न
 उपपम = उपमा
 उपाङ्ग्यं = (सं०) उत्पादित
 उपाड = उपाय करो
 उम्भरे = उभड़े
 उम्भौ = उभय, दोनों
 उमद्दयं = उन्मद हुआ
 उमन्नै = उन्मन भाव से
 उमहीय = उमाह (उमंग—) — प्रात
 उम्मे = उमड़े
 उमै = खड़े हुए
 उरद्धर = हृदय की धारण करनेवाले
 या ऊर्ध्व से आए हुए
 उरह = उर का, हृदय का
 उलाली = (१) उत् + लालित =
 उल्लासित किया, पाला-पोसा
 (२) उल्लालावृत्त में लिखा (?)
 हेमचंद्र (८-४-४६) क अनुसार
 उत् पूर्वकनम् धातु से जो 'उन्नम्'
 बनता है उसका एक आदेश
 'उल्लाल' होता है अर्थात्

उल्लालित का अर्थ हुआ
 उन्नमित, उन्नत किया हुआ ।
 उवह = बोलता था
 उषया < उत्पन्न
 उरसस = उच्छास
 उक = आगे, मुंह के बल (सं० उत्क)
 ऊमंती = उमड़ती हुई
 एकत्तौ = एकत्र
 एकथ्योय } एकस्थ, एक ही जगह
 एकथौ } स्थित होकर
 एम = इस प्रकार
 ऐराक = घोड़ा
 ओइन = दाल, जिससे कोई चीज ओड़
 या रोक ली जाय
 ओपम < उपमा
 ओप = शोभा, कान्ति
 ओइन (१) दाल (२) आर्द्राभूत
 कंक = (१) कंक पक्षी के परवाला बाण
 (२) > कंकट = कवच (पृ० ११८)
 (३) मृत्यु, काल (पृ० १०६)
 कंषिय < कान्ति = आकांक्षा को, ताका;
 सिर कंषिय = सिर को देखा
 कंतार < कान्तार = बन
 कंति < कान्ता
 कंद्रप < कंदर्प = कामदेव
 कंदांङ्ग = कंधे पर
 कंत < कान्त = प्रिय
 कंपी = कल्पित किया, रखा [कंप < कल्प्]
 (२) काँपी [कंप < कम्प्]
 कंपेस = पृथ्वीराज (?)
 कंमर = कमर

कंसुभ = कुसुमी रंग का

कंदे = उन्मूलन कारिणी ? (अथकंदे =
पाप विनाशिनी)

कक्का = काका, पिता, गुरुजन

कक्षिय < काक्षित

कक्षंतर < कक्षान्तर = काँख में

कग्गा = काग

कग्गाद } < कागद, कागज, चिट्ठी
कग्गार }

कच्छी = कच्छ देश का घोड़ा

कज्जह = के लिये

कज्जं < कार्य

कट्टिय = काट दिया

कटाण्णय < कटाक्षित = कटाक्ष किया

कट्टी = लज्जिता, हतभाग्या

कठल्लोनि = कठरे, कठोते

कठ्ठौ = छोड़ दो

कट्टु < काष्ठ = चंदन काष्ठ

कट्ठियां = काष्ठा, सीमा

कट्टु < कट्टु < काष्ठ = चंदन काष्ठ

कट्टुदाइ = कढ़ाया जायगा [चच्छ

कट्टुदाइ = आखें काढ़ ली
जायगी]

कट्ट्यौ = कढ़ा, निकला

कत्तरी < कर्तरी = कैची, छुरा (दुःखं
करी कर्तरी = दुःख को कर्तन
करनेवाली)

कथ्थ < कथा

कह्व < कर्दम = कीचड़

कन्न < कर्ण (पृ० ३३)

कनय < कणिक = कनिक, गँहू का आटा
या गँहू

कनवज्ज < कन्नौज, कान्यकुब्ज

कनव्रत = कण चुनने का व्रत

कन्ना = (कल्लु + ना ?) कुल्ल नहीं ?

कन्ह = सरदार कन्ह

कन्हह = कन्ह का

कण्णरिय = कापड़िये

कमध < कबंध

वमधज्ज, कमधुज्ज, कमधुंज = जयचंद

कमंध } (१) < कबंध = घिना सिर का
कमद्ध }

घड़ (२) < कमंद (फा०) = फंदा

कमांमय = कमान युक्त

कमांदिन = कुमुदिनी

कंमोद = कुमुद

करक्कै = कड़कता है ।

करिकरस्तुहीर उद्धारयं = हाथी का सूड़,
उद्धार तुद्दीर (मोटी तोंद)

करकंसी = कण

करंम = कर्म

करार = कगार

करिग = किया

करह = ऊंट

करूर = क्रूर, निर्दय

कलपंत = कल्पान्त

कलम = हाथी का बच्चा, ऊंट

कलहार = कमल

कलिये = कलित करना चाहिए, गिनना
चाहिए (बल कालियै अधान)

कलै = कलित करता है

कसुंभ = कुसुंभी रंग

कसाये = कषायित

कहर < कहूँ = चला, आफत, पराक्रम
[केहरि-कहर = सिंह-पराक्रम]

कहल = दे० कहर [कहव कहल = कर्म
का प्राबल्य]

काइथ < कायस्थ

कागर = (१) कागज, पत्र (२) पंख

कांन = कृष्ण, कन्ह, कान्ह

कायवक < कायिक = शरीर संबंधी

कलिलय = कली (अंबुज-कलिलय =
कमल की कली)

कालंकनिय—(पं० पृ० ६) कालं या
कालन से कालिंजर देश का
मतलब जान पड़ता है। कनिय
'कन्दित' का रूप। इस प्रकार
'कमवज्ज देस, गज्जन, पटन
और कालिंजर जो किलकिला रहे
थे वे पृथ्वीराज के जन्म से रो
उठे—ऐसा अर्थ जान पड़ता
है। परवर्ती पद्य से भी यही
बात समर्थित होती है।

कासु < कस्य' किसका

कांसौ = कांसा

कित्ति < कीर्त्ति

किनंकही = हिनहिनाते हैं

किंमति = कीमत

किलकिलंत = किलकिलाते हुए, प्रसन्न
होते हुए

किलाब < कलाप, (कंचन-किलाव =
सुवर्ण कलार)

किलोर = किलोल < कल्लोल

किवारं } < कपाट
किवाट }

क्रीलइ = क्रीड़ा करता है

क्रीला < क्रीड़ा

कुटवाल < कोटपाल = कोतवाल

कुट्टे = कुंठित हुए

कुप्पौ = कुपित हुए

कुंभह = कुंभ के

कुराषि = कुरोष होकर, चिढ़कर ?

कुलह = कुलही, आँख का ढक्कन

कुलंगन = एक प्रकार के लड़ाके पत्नी,
लड़नेवाले मुर्गे

कुलाह = (१) टोप, (२) एक जाति
का घोड़ा

कुहु = कुही, एक तरह का घोड़ा
(पृ० २०)

कुहू = अभावस्था

कुहौकुहु = कोकिल की कुहू कुहू आवाज़

कूइकालं = कौन काल बश है।

कूष < कुत्ति, कोख

कूरंभ = एक सरदार

कूह < (१) क्रोध, (२) चीख, चिंघाड़
(३) कोलाहल

केनं = क्यां

कैथल = एक सरदार का नाम

कैमास < कदम्बवास = कैमास भंत्री

कोइक = कुछ

कोकहर = चंद्रमा

कोटकं < कोटिकं, करोड़ों

कोतर < कोटर

कोदह = ओर, कोना

कोर = किनारा

कोवंडं < कोदंड = धनुष

कोहं = क्रोध

कौतिग } < कौतुक
कौतिगा }

क्रक < कर्क, चौथी राशि

कृत (१) कृत = किया हुआ (२) कृत
= यज्ञ

कन्न (१) < कर्ण = कान (२) करण

कृत्य < कृत्य

कहमं < कर्दम = कीचड़ (२) संकट

कमनारिय < कर्म + नारिय = नारी का
कर्म

कयन = कय करना

कम्यौ = आक्रमण किया

पंग < पङ्ग

खंड = खंड, नो खंड

खंडल — खंड धारण करने वाला या
खंडित

खंचौ = खचित किया गया

खग < खड्ग

खग-पानं = खड्ग का (किसी के रक्त
का) पी जाना

खनै = खिचे

खै = उलझता है (?)

पञ्जुरी = विच्छू (?) [पृ० २६ पर
पञ्जुरी के स्थान पर बिज्जुरी
पाठ उत्तम होता]

षटंग = पिल पड़े (?) खटखटाने लगे,
तलवार से युद्ध करने लगे

षढय (पृ० ५ पर षढय अशुद्ध छपा है)
'पढय' होना चाहिए। पढय-पढै

पत्ती < क्षत्रिय

खनिय = पृ० ११७ पर 'खनिय' छप
गया है जो 'खनिय' होता तो
अच्छा होता। खनिय अर्थात्
रमण कीजिए। वस्तुतः रासो में
'ख' के स्थान पर सर्वत्र 'ष'
दिया गया है। यहाँ का 'ख'
वस्तुतः 'ख' होना चाहिए

खनै < खण्डे ?

खबरि < खबर

पयकार < क्षयकार = क्षय करनेवाला

पय काल < क्षय काल = प्रलय काल

परह = पूरा-पूरा

परादि = खराद कर

परिग < खटक गया

पल < खल, (१) दुष्ट (२) खलिहान

पलक < खलक = जीवसमष्टि, संसार,
लोकसमूह

पल — हलिय = खरभर पड़ गया

पवास < खवास (अ०) खास खिदमत-
गार, नाई

षह } खेह = धूल
षह }

षानं = खान

षावास = < खवास = खास खिदमत-
गार, साधारणतः नाई

ष्याल < खयाल

षिडुरी = खाँड़ा

विजि }
विभयौ } = खीमे

वित्तह < क्षित = मत्त व्यक्ति

पिनंषिन }
विश्वषिन } < क्षण-क्षण

विभिर = खरभराए

विभयौ = क्षुब्ध हुआ

विश्वकी = खिड़की

वित्र < क्षेत्र

वित्रिवट < क्षत्रिय वर्त्तु? क्षत्रियों का
मार्ग, क्षत्रियोचित

पुट्टी = खुटक गया

पुप्परी = खोपड़ी

पुभीय = क्षुब्ध हुई

पुर = खुर (घाँड़ों के खुर)

पुरसान }
पुरासांन } = एक देश (ईरान देश
का पूर्वी हिस्सा)

पूव = खूब

पेलनह = खेलने के लिये, क्रीड़ा का

पेह = खेह, धूल

पेहति = धूल

पेत = खेत, संग्राम भूमि, रणक्षेत्र

षांट = खोटा

गंजि = नष्ट करके,

गंजे = नष्ट किया

गंष्टिय < ग्रंथित = गांठ देना, गाँठ
बाँधना

गंसि = ग्रास करके, चारों ओर से घेर
के, कसके

गच्छि = सम्हाल कर ?

गज्जन < गजनी

गड्डहि = ढेर में ?

गडुंवा = गडुंआ, टोंटीदार लोटा

गदौइ = गढ़ा

गत्यै = गति (तृ०)

गभार = गहरा

गहरी = गदर मचाने वाली

गर्दन = गर्द से

गर = गला

गरसी = गर्म पानी का

गरिष्ट = गरिष्ट, भारी

गरुआयं = गुरुत्व प्राप्त होता है

गरुअत्त = महान्

गलती = गले से, सिर पर से

गल्ल = हल्ला, गाल बजाना

गल्लह < (१) जल्ह, जल्हण, (२) गल्भ
= प्रगल्भा, धृष्ट

गवष }
गवषष } < गवाक्ष, खिड़की

गवरि < गौरि, गौरी

गस्सि = ग्रसित करके

गस्त < गश्त, घूम-घूम कर दिया
जाने वाला पहरा या ऐसे पहरेदार

गहकि = ललक कर, उल्लसित होकर

गहर (१) दुर्गम, भयंकर, (२) देर

गहरगूल = अत्यन्त गहिरा

गहिलौत = एक राजपूत वंश

गहंमह = गहगहाते है

गाज < गर्ज, (१) गर्जन (२) वज्र

गादीय = गद्दी, गद्दा

गांन < गान

गाहंन-गहन = गहन (कार्य भार) को

ग्रहण करने वाला

गिरद<गिर्द ? सब ओर,

गिरन = गिरि का बहुव०

गिलण = निगलना, निगलनेवाला

गिलम्मे = ऊनी कालीन, गिलम

गिलोल = गुलेल

गुंड = चूर्ण, पुष्प-पराग

गुंडीर = चूर्ण विचूर्ण करनेवाले

गुंडंति = गुड़ के बने भोज्यान्न

गुर्ज (फा०) = गदा या गदाधारी सैनिक

गुज्जर = गुर्जर-गुजरात, गुजरात का राजा

गुज्जरवै<गुर्जर पति

गुनेयं = गुणों का

गुपंति<गुप्त

गुफंति = गुम्फित करता है, गुंथता है

गुरुथ<गुर्वर्थ (?) भारी या बड़ा अर्थ

गुरयं<गुरु

गुराड } = तोप लादने की गाड़ी
गुराउ }
गुराव }

गुरदाही = छोटी तोपों की

गुरिग } = गोरी (मुम्मद)
गुरिय }

गुरज = गुर्ज, गदा

गूल<गुल्म = सेना का एक विभाग

गेंवर<गजवर, हाथी

गै<गय, गज

गैर<गैर

गैति = गजसमूह

गैन<गगन, आकाश

गोष<गवान् = खिड़की

गोठ } <गोष्ठी
गोठि }

गोमगा<गोमार्ग

गोनं<गमन

गोमगांम<धूल (?)

गोस = <गोश (फा०) कमान कोना

गोदर = गदराया हुआ, यौवनागमन से
भरता हुआ

गौ = (१) गाय (२) गया

गौषी } <गवान्
गौष }

ग्रधन्न = गृद्ध गण

ग्रब्ब<गर्व

ग्रब्बहन<गर्वघ्न, गर्व को नष्ट करनेवाला

ग्रब्बाप्रहारी<गर्वापहारिन, गर्व को अप-
हरण करने वाला

ग्रम्भ = गर्भ

गमारि = गँवार स्त्री

ग्रीष्च = ग्रीष्म (पृ० ८६ पर ग्रीष्म के
स्थान पर यह अशुद्ध पाठ है)

ग्रह, ग्रेह = गेह, गृह

घटाडू = घटाता है

घटडू<गोष्ठ = सलाह

घडन<घटन = गढ़ना

घननंत = घनघनाते हुए

घरघथार = घड़घड़ा कर

घरियार = घड़ियाल, समय बताने के
लिये बजाया जानेवाला घंटा

घरीव = घड़ी

घहार्डू = घहराया

घाई<घात

घायां = चोट पड़ने पर

घार<घात = चोट । (पृ० ७२ पर
‘घार’ के स्थान पर ‘घार’ अधिक
उपयुक्त पाठ होता ।)

घुटित = घुटा हुआ

घुमर = घुमड़

घुरि = चारों ओर से घूमकर, घुड़ककर

घूठन = घुटनों के बल

घूमरि = घुमड़कर

घोड़ानभंति = कई प्रकार के घोड़े,
रासो में देश भेद से सिंधी,
कच्छी, पहाड़ी, अरबी, ताजी
आदि तथा लक्षण और गुण
भेद से लम्बी, कुल्ला, कुम्भेत,
सिरगा, सुरंग, गुलाबी, हरिया,
समद, स्याह, हंसी आदि कई
प्रकार के घोड़ों का उल्लेख है ।

चंपाई = प्राप्त हुआ

चंपि = दबाकर

चंप = दबाना, चढ़ बैठना

चकि = चकित होकर

चक्क<चक्र

चष<चक्षु

चषहीन = अंधा

चरचरं = चॉचर, होली में गाया जाने
वाला प्रमोदगान

चच्छ } <चक्षु
चच्छि }

चव = (१) (कि०) कहना (२) चार

चवं<चतुर्थ

चयं = मिले ?

चवथ = बचन ?

चवदसु = चौदह

चारतारी = चार तड़ित्, सुंदर विदयुत्

चालुक्कां = चालुक्य

चावंडु = चामुंड

चिगा = चिक, परदा

चिंघाई = चिंघाड़ते हैं

चिहलै = आनंद

चिहारं = चिंघाड़

चिल्ली = चील्ह, चील (पत्नी)

चिहु = चहु, चहुँ

चिहुरार<चिकुरभार = केशराजि

चीकट = मैल से चिकना, बना, मलीन

चीस = चीख

चंगल = चंगुल

चुटक्के = चुटकी बजाते बजाते

चूरि = चोरी से

चोम<जोम (अ०) = गर्व, घमंड

चौरं = <चामर

चौज<चोज, चमत्कारी उक्ति

चौडोल = पालकी

छँड = छोड़ना

छवक्क = छका हुआ; तृप्त

छगर = शकट = सगड़

छग्यौ = छग्यौ

छत्ती = क्षत्रिय

छयल्ल = रसिक, विदग्ध

छिछ = छूँछा

छित<सित

छिनकुरहि = क्षण भर रहो, थोड़ी देर रुको

छिपौ = छुपा

छोनी = क्षोणी

छोह < क्षोभ (स्नेह)

जंघी = भंखी

जंजर < जर्जर

जंजं = जो, जो

जंप < जल्प = बोलना

जंबूनद = सोना

जंम < (१) यंम (२) < जन्म

जण्डि < यक्षिणी

जग्ग < (१) यज्ञ, (२) पृ० ३० पर 'जंग' के अर्थ में व्यवहृत जान पड़ता है।

जत्तौ = गया

जथथ = जात्रो

जहनं } यादव वंशी राजा
जहौ }

जहोवै = यादव देश का राजा

जनेउ = जनेव

जम < यम, = यमधार, दुधारी तलवार

जर < ज़र (स्वर्ण)

जरकस < जरकश (फ्रा) जरी या कला-वत्तू का काम किया हुआ

जरकि = भरक, भलक

जरजरयौ = जर्जर होगया।

जराव = जड़ाव

जरे = जल रहा है, चमक रहा है

जाजुलित = जाज्वलित

जाँवि = जामकर, जन्म लेकर

जीमूत = बादल

जकत्तिय < युक्ति

जुग्ग < युग, दो

जुगिनी = योगिनीपुर (दिल्ली)

जुगिनवै = योगिनीपुर का राजा, पृथ्वीराज

जुम्भ < युद्ध

जुलियं = जुड़े

जूना < जीर्ण

जूरी = यूपवद्ध पशु, बलि के लिये निर्मित खंभे से बंधा पशु

जूव < युवती

जूह < यूथ

जेब }
जेम } = जैसे
जेमं }

जेहरि = पाजेव

जैत = जैतकुमार

जोगिंद < योगीन्द्र

भंकि = भौँक कर

भंमलियं < जाज्वलित

भंका पया < भंकापगा

भुम्भहुति = भूम्भ हुई

भरिष्य = भड़पा

भलहल = भलाभल, चमकदार ?

भल्लरी = वादयविशेष, भौँभ, हुड्डक

भार < ज्वाला = ज्वाला, लौ,

भराहर < ज्वालाधर = सूर्य

भूम्भ }
भुम्भ } < जुम्भ < युद्ध

भुम्भिक = भूम्भकर

मौर = (१) भुंड (२) भुरमुट (३) भब्बा	ढरिग = ढर गया
ठई = स्थापित की, स्थिर की	ढिल्लीवै < दिल्लीपति
ठठ्ठा = ठठेरा (?)	ढिल्लेसं < दिल्लीश
ठट्टनवै = ठट्टनों (?) का राजा	ढुरहि = ? ढरकते हैं, फिसलते हैं
ठब्बो = डट गए	ढोह = ढोए
ठाम = ठाँव, स्थान	तंत } = (१) तंत्र, (२) तंतु
ठिल्लौ = ठेल दिया	तंत }
ठोठ = ठूँठा, निरा	तंभोर } = < तांभूल
डंकित = भंकृत	तंभोर }
डंडइय = दंडित कीजिए	तकसीर = कसूर, दोष
डंडमाली = दंडी कवि ?	तण्ण = (१) नागिन ? (२) तीक्ष्ण
डंडूरिय = धुंधुरित होना, हवा का धूल	तण्णी = तीक्ष्ण ? तेज
से भर जाना	तच्छयं < तक्षक-नाग
डंडूर = रक्त (?)	तत < तत्त्व
डंवर }	ततविन = उसके बिना ?
डंमरं } = डंवर, आडंवर, मेघडंवर	तत्त < तत्त्व
डंमर }	तथ्य = (१) तत्र (वहाँ) (२) तथ्य
डंमरी < (१) डंवरी = मेघडंवर से युक्त	तथ्यु = तोभी
[डंवरी बाल, मेघडंवर से घिरा	तद्दिन = उस दिन
बाल सूर्य] (२) एक प्रकार का	तत्ती = (१) तेज (घोड़ा) (२) उतने
चंदोवा	तत्पनह = तपने के लिये, तप करने के०
डड्ड < दग्ध	तबल = डग्गा ?
डब्बे = ढब से, ढंग से	तमि = तमककर
डहवक = चिघाड़ता हुआ	तमी = अंधकार
डाम = < दाम, रस्सी	तरवकंत = तड़कते हैं, तड़तड़ाकर
डिभ = (१) बच्चा, (२) अंकुर, (३)	गिरते हैं
दंभ	तलपह < तल्प = ब्रिछौने पर
डुवकर < दुकट < दुष्कृत = कठिन कार्य,	तवरलह = तबले का
डाहं < द्रोह	तवीयन < तवीव (अ) चिकित्सक
डिग = समीप	तांम = (१) उनका (२) लाल, गोरा
डिल्ली = दिल्ली	

तामंस } < तामस-तमोगुणी
तामस्स }
तासंत = (त्रासन्त) त्रास पाते हुए
तिक्तह = वह, वहाँ
तिथ्य = वहाँ
तिनष्पी = तिनककर, बिगड़कर
तिरिगत्त < त्रिगर्त = एक देश, वर्तमान
जालंधर और कांगड़ा प्रदेश
तिष्ट < तिष्ठ (ति) (सं), रहता है
तिस्न = (मृग तिस्न = मृग तृष्णा)
तिह = उसे
तुट्टि = टूटा
तुण्ड = मुख का अग्रभाग, चोंच
तुच्छ < तुच्छ, छोटा, कोमल, सूक्ष्म
तुषक = तुपक
तुरय = तुरग घोड़ा
तुररा < (१) तुर्रा (फा०) अनोखा (२)
(अ०) पगड़ी की या किसी पत्नी
की शिखा
तुल्ल < तुल्य
तेम = उस प्रकार
तेह = उसे
तोअर < तोमर
तोन < तूण, तूणीर
थट्ट, थाट = ठाट
थपी = स्थापित कर
थपे = स्थापित किया
थवा = थपा
थार = थाली
थान < स्थान
थावै = स्थापित करै

थी < स्थित
थुत < स्तुत
थोभ < स्तोभ = रुकावट
दंगह = दंग करने वाला, अद्भुत
दंगे = दंग करनेवाली
दंद = दन्द्
दृषी = देखी
दभम्भै = दग्ध होता है
दढ्ढ < (१) दग्ध (२) जलदढ्ढ < यम-
दंष्ट्रा
दत्तो = दत्त (दत्तात्रेय) मत के मानने
वाले योगी ?
दप्प < दर्प
दब्बू < द्रव्य ?
दहं = दिया (संभवतः पृ० १४ पर
'दीह' पाठ है)
दरहं < दर्द
दरिय < (१) दलिय < दलित, दलन
किया; (२) दरी, गुफा
दवानं < दुवानं = दोनों का
दसियं < दर्शित
दाग < दाघ = दाह
दातार < दातृ = दाता
दाबन = द्रव्यों से (द्रव्य > दब्ब > दाव)
दाव = दो
दिघघ < दीर्घ
दिट्ट < दृष्ट = देखा
दिट्टि < दृष्टि
दिढबर < दढांवर ?

दिघौ }
 दिख }
 दिध्व } दिया
 दिद्विय }
 दिन्ने }
 दिन्नेव }

दिपन्नौ—दीप्त हुआ

दिलेसं दिलीश

दिष्ट<दृष्ट

दिष्टानं—दृष्टि

दीलीय=दिल्ली में

दीसत = दीखते हैं

दीह=(१)<देह, (२)<दीर्घ

दुअ<द्रुत

दुअध = दो खंड, दो टुकड़े

दुकम<दुष्कर्म, जिस पर आक्रमण
 करना कठिन हो

दुक्कति<दुष्यति-दोष देती

दुक्कित<दुष्कृत

दुज }
 दुज } <द्विज-(१) पत्नी, (२) ब्राह्मण

दुभारय=भटकार रहे हैं, भाड़ रहे हैं ।

दुत्तर<दुस्तर

दुती<द्वितीय

दुत्तिय = दूती ने

दुपंत = दुःख का अन्त (पृ० ६० पर
 'दुपन्त' के स्थान पर 'दुष्यन्त'
 पाठ अच्छा होता)

दुरद<द्विरद

दुलीचे }
 दुसलीच } दुलीचा

दुहथ<दोहा

दूद<द्वन्द

देव बंड़ी = देवता ने क्रोध पूर्वक कहा ?

देवस = देवता के

दोत<दूत ? [दलदोत = यम दूतों का
 दल ? अशुभ चिन्ह]

द्रग }
 द्रगा } दृग, दृष्टि

द्रप्पन<दर्पण

द्रह = दूद

द्रिगयं = दृष्टि

द्रुगा<दुर्ग

धंषि = धर्षण करके

धंधो<द्वन्द्व

धत्ता = धत् कह कर ?

धन्नि<धन्या

धप्ति धाय = दौड़ कर

धर्यौ = दौड़ा

धर = धरा

धरदर = धड़ाधड़

धाम<धर्म [नु० वीरधाम धुज्जिय धरा;
 काम धाम<कर्म धर्म]

धाराहर<धाराधर, बादल

धिषन<धिषण = वृहस्पति

धीग (१) धोंगा, दुष्ट, (२) धकामुक्ती

धुअ<ध्रुव

धुज्जिय = छिन्न विछिन्न हो गई

धुनक (१)<धनुष्, (२) धानुक,
 धनुर्धर

धुनयं<ध्वनित

धुग्गर<धूम्र

धुर = मध्य

धूत = (१) धौत, (२) धूर्त

धूंस = धुआँ

धूसरी < धूम्र

धोमय < धूम, धूममय, धूसर

धृग = धिक्

ध्रम्म }
ध्रंम } < धर्म
ध्रंमन }

ध्रम्मह = धर्म का

ध्रम्मायन = धर्मायन कायस्थ

नंषि = डालकर, गिराकर, रोककर

नंषिय }
नंषियं } डाला, गिराया, रोका
नंष्यौ }

नंचि = नाचकर

नंजन < नर्तन, नाचना

नंतयौ = निमंत्रित किया

नंधि = < नद्ध—बाँधकर ?

नक = नाक (नभ)

नक्षि = डालकर

नछत्त = नक्षत्र

नछित्रन = नक्षत्र (बहुव०)

नटकीयनहन्नह = नट गई और नहीं
नहीं किया नट गई और किया
(नहन्नह =)

नटिठग = नष्ट हुआ

नट्ठेय < नष्ट

नथि < नास्ति

नथ्य < अनर्थ

नद् = नाद, नदि

नद् < नाद

नफ्फेरी = नफ्फेरी, शहनाई

नभ्यसी < नभस्, (१) आकाश (२)

सावन का महीना

नय = नदी, नद

नयर < नगर

नरम्भरं < नर भट, मर्दाने सैनिक

नरवै < नरपति

नल्लवाही = बंदूक धारण करनेवाले

नह = नहीं, नहीं हो तो,

नहन्नह = नहीं, नहीं

नाल = पास, साथ, को, से

नालं = नाल, बंदूक (?)

नालकेर < नारिकेल

निकरिग = निकला

निग्राहनुग्राहिनी = निग्रह और अनुग्रह
करने वाली, कृपा-कोप में रमार्थ

निषत्रन = नक्षत्रों (का)

निष = तनिक, थोड़ा

निघोर = घोर

निजरि = नजर ? सामने

निज्जरिय = निजका, अपना

निज्जै = स्वयं

निठ्ठत < निष्ठित

निघातिय = मारा

निनायकं = नायक हीन

निनारे = न्यारे, अलग

निय < निज

निशोसी = निघोष [(१) युद्धनिघोष
(२) काम केलि]

निषत्त = निवृत्त

निसुरत्ति = बिलाशर्त (?)	पंमार = पँवार वंशी राजा या क्षत्रिय
निहाइ = दबाकर, नष्ट करके	तोमर पांवार
नीठ = अनिच्छापूर्वक	पंवारि = पंवार जाति की स्त्री
नीप = कदंब	पथ्य = पत्त
नीरह < नीरद, बादल	पषर = लड़ाई के समय हाथी-घोड़ों
नीसान = निसान, निशान	को पहनाया जाने वाला लोहे
नीसार < नीशर = आवरण, पर्दा	का भूल
नृधति = नृपधति	पज्जाई = प्रजा भाव
नेजे = भाले	पटन < पत्तन, पहन
नेत = चादर, चुनरी	पटनेर < पट्टनगर = श्रेष्ठ नगर राज-
नै < नद, नदी	धानी
नैपथ < नेपथ्य	पट्टन < पत्तन
नैर < नयर < नगर	पटा = पाट पर, विवाह-वेदिका पर
नप } < नृप, नृपति	पठठाई = पठाई
नपति }	पट्टिय = पाटी, केश-विन्यास
अभिंयौ = निर्मित किया	पडिहाय < प्रतिघात, धसकना
अभिमल < निर्मल	पढ्ढी = पढ़ी
अभिमान < निर्माण	पत्त < (१) प्रात, (२) पत्र (३) लाज
पंषी < पत्नी	पत्ति < पति
पंषीय < पत्नी	पत्तौ = प्रात हुआ, पहुँचा
पंग < कन्नौज का राजा, जयचंद	पथार < प्रस्तार, विस्तार
पंगजा = संयोगिता	पद्ध हारं = पद्धरी छंद, पद्धड़िया बंध
पंगानि } = पंग की स्त्री, पंग के	पद्धरि = पगडंडी
पंगानिय }	पथील < पिपीलिका, चींटी
देश की स्त्री	पढ्ढय } पर्वत
पंगानी = पंग राज की	पयं < पद
पंगुरा } जयचंद	पयल्ल < पहला ?
पंगुरै }	पयसा = दूध से
पंचास = पचास	पयानह = प्रमाण का
पंषनिय = अपनी (आँखों की)	

परद्वयौ = भेजा, पहुँचाया
 परद्वय = (१) भेजा (२) बने, बनाए
 (तु० ढोला, दोहा ३६६)
 परतषिष्य < प्रत्यक्ष
 परत्तर = श्रेष्ठ
 परदा < पर्दा
 परनेवा < परिणया
 पराकृत = पराक्रम
 परिगह < } परिग्रह
 परिगह < }
 परेवं = परेवा, पारावत
 पलचर = मास पर से चलनेवाली
 पल्लान = पल्लों में (साड़ी के)
 पल्लान्यौ = भागा
 पवंत = प्राप्त होते ही
 पसम < पशम, पशमीनावस्त्र
 पस्समी = पशमी
 पसाइ = प्रसाद से
 पसाव < प्रसाद, प्रसन्नता होना
 पसौ < पशु;
 पहक फट्टी = पौ फटी
 पहारति = प्रहार करता है
 पडु < प्रभु
 पडोतै = पहुँचे
 पाइक्क < पायक = सेवक (२) पदातिक
 पाज = (१) वजू, वाज (२) पांजर
 पाजं < पान्न ? पूजोपहार
 पाट = पट्ट वस्त्र, रेशम
 पाटनारी = पट्ट वस्त्र या रेशम की
 कढ़ाई
 पाटीन = पाटियाँ, वेणी

पातुर = नर्तकी, पतुरिया
 पाघ < पाग
 पामर = पाजी, कायर
 पारन = पार करनेवाला
 पारस्स < पार्श्व ? पार्श्वधर = मुसाहिब
 पांवांरी = पंवार कन्या, इच्छिनी
 पावस्स < पावृष, पावस वर्ण
 पाँवारी = पँवार-वंशीया
 पासह = पास
 पासंग = पास ?
 पाहन < पाषाण
 पिण्णत = देखता हुआ
 पिपाही = देखा
 पिण्णि = देखकर
 पिथ }
 पिथं } = पृथ्वीराज
 पिम < प्रेम
 पिल्लिपित < पीलपति = हाथीवान
 पीजंत = (१) पी जाते हैं, धुनते हैं
 (२) पीते हैं
 पीठी = पृष्ठ
 पुंघे = पूछता है,
 पुज्जति < पूजती है, पूर्ण होती है
 पुठ्ठ }
 पुठ्ठि } < पृष्ठ
 पुड्डं = पूड़ी
 पुत्तारी = पुत्र
 पुत्ति = पुत्री
 पुन्न < पुण्य
 पुंन्निम < पूर्णिमा
 पुप्फ < पुष्प

पुम्ब<पूर्व	प्रसन<प्रसन्न
पुढवथ = पुराना (पूर्विल)	प्रस्स = स्पर्श करके
पुरिष = पुरुष	प्रह<प्रभा, प्रकाश
पुहप = पुष्प	प्रोढह<प्रौढा
पुढ = पोहा	प्रोहित<पुरोहित
पुहचि = पहुँची	फरस = परशु
पुहप<पुष्प	फरहारि = फरहरा कर
पुहवै<प्रभु	फारिक्क = तेज चलनेवाला (अ० फरक)
पूषनि = पोषण करनेवाली	फारि = (१) फाड़कर, (२) प्रहार कर
पूजारा = पुजारी	फीकुनि = पुनः पुनः
पृच्छि = पूछा	फुडिठ = फूटकर
पैज = प्रतिज्ञा	फुनि = पुनः
पेलै = वेगपूर्वक चलता है	फुरमान<फरमान
पै = से	बंक<वक्र
पैरंग = पैर	बंछि = वाञ्छा की, चाह
पैसंगी<पेशीनगोई = भविष्य-वाणी	बंध = वटक्षा, विवाह की स्वीकृति
पोमिनि = पद्मिनी	बंद<विन्दु
पोस<पोश (फा०) [बालपोस-बाला- पोश, ओवरकोट जैसा पहनावा]	बंभ = आवाज़, भंभ
प्रंग = प्रकार	बंभ<ब्रह्म
प्रछुन<प्रच्छन्न	बंभान<ब्राह्मण
प्रछेद = प्रस्वेद, पसीना	बषत्त<वक्त
प्रजरंत = प्रज्वलित	बग्ग, बग्गु<वेल्गा, बाग, लगभग
प्रतथि<प्रत्यक्ष	बज्जुन<वादथ = बाजा
प्रथ = पृथ्वीराज	बट्ट<वर्त्म = बाट, राह
प्रपील<पिपीलिका, चींटी	बड्डु = बड़ा
प्रम्ब<पर्व	बद = मूर्ख
प्रम्बत<पर्वत	बत्त, बत्त = बात वार्ता
प्रयत्त<पर्यन्त	बत्तरी, बत्तरीय } <वार्ता
प्रण्य < प्रश्न	बत्तरिय
प्रसई = जोर से शब्द करता हुआ	बथ<वस्तु

बहिय, बद्धेवबधारं = बद्ध, बँधा हुआ,
बाँधा

बन राह = वनराजि

बबूर = बबूल का पेड़

बर = (१) < वर (२) < भट

बरणी = वरणीया, कन्या

बरठथौ = भेजा

बरहिया } (१) चंदकवि (२) बैल
बरह

बरस = (१) वरों की, (२) वर्ण

बरहा = वही, मोर

बरिग = (१) वरण किया, (२) जल उठा

बवन = (१) < वयन, (२) वपन, बोना

बसीठ < विसृष्ट, दूत

बहुतरि = बहुत

बागुरि = जाल

बाज < वज्र

बाजित्र = बाजे

बाद < वादय

बानिक < वणिक

बानिज < वाणिज्य

बार < द्वार

बाहन केन = आवाहन किया

बाहि = बेधकर, मारकर

बिअच्छरि = दो अक्षर का

बिट, बीट = (१) वृन्त, भेंटी,
(२) छितराना

बिद = दूल्हा

बिय = इव, द्वितीय

बियौ = (१) कहा, (२) द्वितीय

बिरषं < वृक्ष

बिरसोजं < विरसवज्ज < विरस वाद्य

बीज = (१) बिजली, (२) दुइज

बीभच्छरिन = शत्रुओं के लिये बीभत्स-
रस

बीशइमं = वीर नामक राजपुत्र का

बीरी = बीड़ा (पान का)

बुअंजानि < प्रभंजन ?

बुट्ठ < वृष्ट, बरसा

बुद्धया = (१) बुद्धि से (२) अबोध

बुंब = आवाज़

बुल्लिग = बोला

ब्रंनन < वर्णन

ब्रनं = वर्णन करता है

ब्रस < वर्ण

ब्रष, ब्रष = (१) वर्षा, (२) वृक्ष

भंति = भ्रान्ति

भकरुं ड < भग्न रूण्ड

भषंन < भक्षण

भष < भक्ष्य

भजह = भग्न

भंडिय = कहा

भगिय = भागा

भत्तिय < भणित

भद < भाद्र

भद्व < भाद्रपद

भमर = भ्रमर

भय = भया, हुआ (२) डर

भयान = भयानकरस

भर < भट (भर-भिरनं = भटों का
भिड़ना)

भरथ < भरत

भवरयं = भाँवरी

भविष्यत् < भविष्यत्

भारथ्य < भारत, युद्ध

भांमि < भामिनी

भारथी < भारतो, सरस्वती

भार < भट (सुभार = सुभट)

भारिय = भारी

भासह } कहा
भासो }

भिष्ट < अभिष्ट

मुअ (१) < भू, (२) मुज, (३) हुआ

मुअन्न = भू, भौह

मुअर < भूपाल

मुष = भूषित

मुगति < मुक्ति

मुत < भूत, हुआ

मुसंत = भूकता है

मुल्लै = भूलता है

भृत < भृत्य

भोडलयं < भमंडल, नक्षत्र-समूह

भोयंसी = भोग,

भ्रत्त < भृत्या

भ्रत्तार < भर्तृ, भरतार

भ्रसुंड < भुशुंड

मंडिय < मंडित

मंत < मंत्र

मंमि < अमृत ?

मक्र < मकर

ममा < मार्ग

मभक्त = मध्य में

मग्नि = (मुखं मग्निपायं = मुख में से
पैर निकल रहा है, तेज़ी के
कारण)

मत्ता < मात्रा

मथ्यं = मत्त हो उठे

मयमत्त < मदमत्त

मन्नयं = माना

मय < मद

मरनय < मरण

महिय = पृथ्वी

महीव = महती

महु < मधु

महुर < मधुर

माजं < मञ्जन

मार = (१) चोट, (२) माँड़ या शोभा

मिग < मृग

मित्तह = मित्र का

मुक्ति = मोती

मुक्त < मुक्त

मुकालि = देना, छोड़ना

मुख, मुष् < मुख, < मुख्य

मुति = मूर्ति, (२) मोती

मुर < मुद

मुर बैस } मुदवयस् = युवाकाल
मुर बैस }

मुरी < मूली, लता

मुद्ध < मुग्धा

मुहर < मुखर

मेगल } मत्तगज, हाथी
मेगज }

मेछ < म्लेच्छ

मेतं<मैत्र
मरुहङ्ग = छोड़ता है
मेर<मेरु
मैन<मदन
मोकल = (१) भेजना, संदेश देना
(२) बहुत
अग, अग<मृग
अगमद } मृगमद, कस्तूरी
अगमय }
अत<मृत्यु, मृत
रंगभोम<रंगभूमि
रंभ (१) आरंभ (२) रंभा
रुषन<रक्षण
रुषिय } <रक्षित, रखा
रुष्यौ }
रज } <राज्य, राजा
रज्ज }
रतन<रत्न
रत्तरी<रात्रि
रत्ति<रात्रि
रत्त<रक्त, (१) खून, लाल
रत्तौ = अनुरक्त हुआ
रबहुं = आवाज
रव्वरिय = रावड़ी, मट्टा से बना हुआ
भोज्य पदार्थ
रम = रम्या, (सु-रम = सुरम्या)
रलिय = मिले
रली = आनंद, मोज
रवन = रमण, प्रिय
रवन्निय<रमणी, स्त्री
रह<रथ
रावत्त<राजपुत्र, राउत

रावर<राजकुल, अन्तःपुर
राह<राहु
रिद एवं<हृदये, हृदय में
रिन } = अरिन, शत्रुओं
रिन्न }
रुवंत, रुदंत = रोता हुआ
रुधिधार<रुधिर धार
रुनौ, रुनौ = रोया
रुपधरारी = रूपवती
रुव } रूप
रुव्व }
रुरिग = आवाज की
रुहिर<रुधिर, रक्त
रुप<वृत्त
रुरी = (१) उत्तम (२) रोली
रेहंत = उरेहना, आँजना
रोमयं अंचं = रोमांच हुआ
रोही = लाल, खून
लण्व = (१) देखा; (२) लाख (एक
लण्व दस अंग = ११००००)
लण्वी = एक प्रकार का घोड़ा
लच्छिन्न<लक्षण
लच्छीस<लक्ष्मीश
लत } लता
लति }
लत्त }
लत्ता }
लउज, लउजी = प्रिया,
लद्धी<लब्धा
लंभि = प्राप्त करके
लरथर = कंपित, लड़खड़ाते हुए
लल्लरिय = खूब लड़े ।

लहू (१) < लघु, (२) रक्त

लिद्धि = लिया, ली

लुब्ध = लोभ

लुपति = लोप करता है, या लोप होता है ।

लोय < लोक

लोयन } < लोचन, आंख
लोइन }

वंक < वक्

वंकम < वक्रिम

व्यंद < व्रिन्द

वकारिय, < अगारिय = फैलाया

वग्ग = (१) वर्ग (२) वल्गा, लगाम

वचन्न = (१) वचन (२) वचनिक,
गद्ग लेख

वत्त } वृत्त, < वार्त्ता
वत्तरी }

वथ्य < वस्तु

वद्दि = बोली ?

वनथ्य = वर्ण से

वय (१) वयस, उमर, (२) चिड़िया

वरउंच = वर योग्या

वरष = वर्ष

वरह्य = वरदायी, चंद

वसीठ < विसृष्ट = दूत

वहिग = (१) वही, (२) वह गया

वाइ } < वायु
वाय }

वागवानो < वाक्, वाणी

वाजित्र < वाद्य

वानोय < वाणी

वामन < वामन

बारुन्न < वारण = हाथी

बारौठि = बरौठे का, द्वार चार

विकम < विक्रम

विगत = बीती बात, घटित वार्ता

विगरसि = विकसित होकर

विचक्षण < विचक्षण

विटन = वीटना, छितराना

विडारना = तितर धितर कर देना

वित्तां करै = बातें करता है

विस्थार < विस्तार

विद्दी = वेधा

विनह = विना

विनानं = बनाव ?

विफार < विस्फार = कंपन, ज्य-निर्घोष

विमगा < विमार्ग

विय = (१) इव, (२) द्वितीय

विरष्य < वृत्

विलहान < बोल्लाह (एक प्रकार क
घोड़ा) का बहुवचन ?

विरदै = विरुद गाते हैं

विविहा = विविध

विवानं < विमान

विसष्यै = विशिष्ट होवे

विसव्वा = विश्वा

विसेक = विशेष ?

विहंडि = नष्ट करके

वीय = द्वितीय

वृत् }
वृत्त } व्रत
वृत्तह }

वृत्य < वृत्ति

वृक्ष = वरुण

वोहृथ्य } जहाज
वोहृथ्ययं }

व्रजै = वर्णन करता है

श्रप्प = (१) शाप, (२) सर्प

श्रप्पौ = शाप दिया

श्रब्ब < सर्व

श्रव्वन-विवरि = श्रवण-विवर में

श्रव्वान < श्रव्य

श्रोतान = (१) सुलतान (सं० सुरत्राण),
(२) श्रवण

श्रोतानं = श्रुतों में, सुने हुए लोगों में
श्रोन < (१) श्रवण, (२) लाल (शोण)

संकमौ < संकूम

संकरयं = संधिकाल

संष = (१) शंख, (२) संख्या

संषुल्लै < संकुलित

संघन = साथी

संघातिय = संगी ?

सच } = सच
संची }

संधं = संधि

सन्नाह = सनाह

संपत्तौ < संप्राप्त

संवरिय = सुभिरा

संभ = शंभु

सभरि } = शाकंभरी क्षेत्र,
सभरी } = सांभर का इलाका

संभरिधनी }
संभरवै } पृथ्वीराज
संभरेस }

संभरौ = स्मरण करो

संमुह < सम्मुख

सक्करी < शर्करा = चीनी

सस्षिय } = सखी,
सस्षी }

सग्गा = सगाई

सगत्ति < शक्ति

सगपन } संबंध
सगप्पन }

सगीन = सखियों या हमजोलियों में

सन्चीव = शची, इंद्राणी

सच्छ < स्वच्छ

सज्जन = प्रिय, साजन

सम्मम = < साध्य

सट्ठयो = साठ

सतपत्तं = कमल

सतफल < शतफला, घुंघुची

सत्त = (१) सत्य, (२) सप्त, सात,
(३) सत्त्व, बल

सत्तमि = सप्तमी

सत्ति = (१) सत्य (२) शक्ति

सथ } साथ
सथ्ह }
सथय }

सह < शब्द

सद्धि = बुलाकर

सद्धै = सिद्ध होता है, शोभता है

सयज्जं < शयन

सयज्ज-पगारं = सैन या इशारे के
प्रकार से

सभ < सभा

समणन < समन्

समग < समग्र

समथ < समर्थ

समर्पन < समर्पण

समर्पणो = समर्पण किया

समह = साथ

सपत्नौ = संप्राप्त हुआ, पहुँचा

शयनंतर < शयनांतर, शयन में

शयन = (१) शयन (२) सेना (३)

इशारा

सयल < सकल

सरित्त = सरिता

सरूव = स्वरूप

सलष = सलख पांवार नामक सरदार

सरलै = सालता है

साहब = शहाबुद्दीन गोरी

सत्र = यज्ञ

साइक = सायक, बाण

साकत्ति = शक्ति

साकत्ति } शक्ति या शक्तिवज्र
 साकत्ति वाजं } नामक पृथ्वीराज का घोड़ा

साकृत = शक्र-संबंधी,

साष < शाखा

साकुब्ज < शकुन (१) सगुन (२) गृह

साज = (१) साजता है, शोभता है,

(२) सज्जा (३) साजिश,

साठ-गाँठ

साजं = सज्जित किया

साटक = शार्दूल-विक्रीडित के समान

छंद, सद्दूल सटक

साम < संमुख

स्याल = स्यार

सार = तलवार, लोहा

सारंगहर < शार्ङ्गधर, विष्णु

सारि = (१) शतरंज की गोटी, (२)

मैना

सावज = वन्यजीव, श्वापद

सावत्त } सावित्र
 सावर्त }

सावरं < शावक = बच्चा

सिषंड = शिखंड, मयूर की शिखा

सिषंडिय = मयूर

सिज्या < शय्या

सिदि = सीढ़ी

सित्त (१) < शत (२) < सप्त,

सित्तावह = शीघ्र

सिभ = (१) सिंह (२) नाच-गान,

सिंगार

सिलह = हथियार

सिष्ट < सृष्टि

सिस = शीर्ष, पत्र-शीर्ष

सिलीपा = (१) शिला-सी

सु = अच्छा; कई जगह पाद-पूरणार्थक

अव्यय

सुईद = इंद्र

सुकलेव = सुकल्पित पूजा के लिये

रचित

सुंजुरी = संयुक्त, जुड़ी हुई

सुतिभावहि = सत्यभाव से

सुथनं < सुस्तन

सुदब्ब = सुद्रव्य

सुरोह = सुरीघ, लंघा

सुबर < सुभट

सुभंत = शोभित

सुभत्तौ = सु-भक्त; अच्छा भात

सुरंभ = सुरम्य

सुर = (१) देवता, (२) सुरत्राण
(सुल्तान)

सुरतान = सुलतान

सुरम = सुरम्या

सुरसुरी = गंगा

सुरी = छुरी

सेज = सैन, इशारा ?

सैध = संधि

सोवन, सोबन्न = सौवर्ण

स्रग = सक्, माला

स्रगा } स्वर्ग
स्रगा }

स्रब = सर्व

हंक = हांकना, प्रचारना

हंड = खोजना, हीड़ना

हक्कथौ = हाँका, ललकारा

हको हक्कवक्कं = सभी आश्चर्य
चकित रह गए ।

हथलेवं = हथलेवा, पाणिग्रहण

हल = हड़कंप

हथ्थि = हाथी

हन्बिस = हवि

हलहलिय = खरभरा गए

हलै = हिलता है

हली = हिली

हारयं < हार

हाहुलीराय = एक सरदादर

हुज्जाब = गोर का एक सरदार

हुलं < कुल्ल = प्रकुल्ल

हेजम } दूत, हज्जाम (?)
हेजम्म }

हेंवर } हयवर, घोड़ा
हैवर }

है = हय, घोड़ा

